

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

कल्याण

मूल्य ₹ २२०



वर्ष
११

श्रीशिवमहापुराणाङ्क

[हिन्दी भाषानुवाद — पूर्वार्ध, श्लोकाङ्कसहित]

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
१



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

यह अङ्क पुस्तक विक्रेताके माध्यमसे ₹२२० देकर प्राप्त करनेके पश्चात् कूपनपर आप अपना पूरा पता लिखकर जिस दूकानसे विशेषाङ्क लिये हैं उसके पास जमा कर देवें या सीधे कल्याण कार्यालय, गीताप्रेस गोरखपुर भेज दें। शेष मासिक अङ्क आपके पतेपर डाकद्वारा भिजवा दिया जायगा। इसके लिये आप द्वारा कोई अतिरिक्त शुल्क देय नहीं है। पत्र व्यवहारमें कूपन-संख्या अवश्य लिखें। कूपनको Scan करके हमारे e-mail : kalyan@gitapress.org अथवा WhatsApp No.9565831344 पर भी भेज सकते हैं। (कृपया कूपन संख्या एवं पता अपने रिकार्डके लिये नोट कर लेवें)

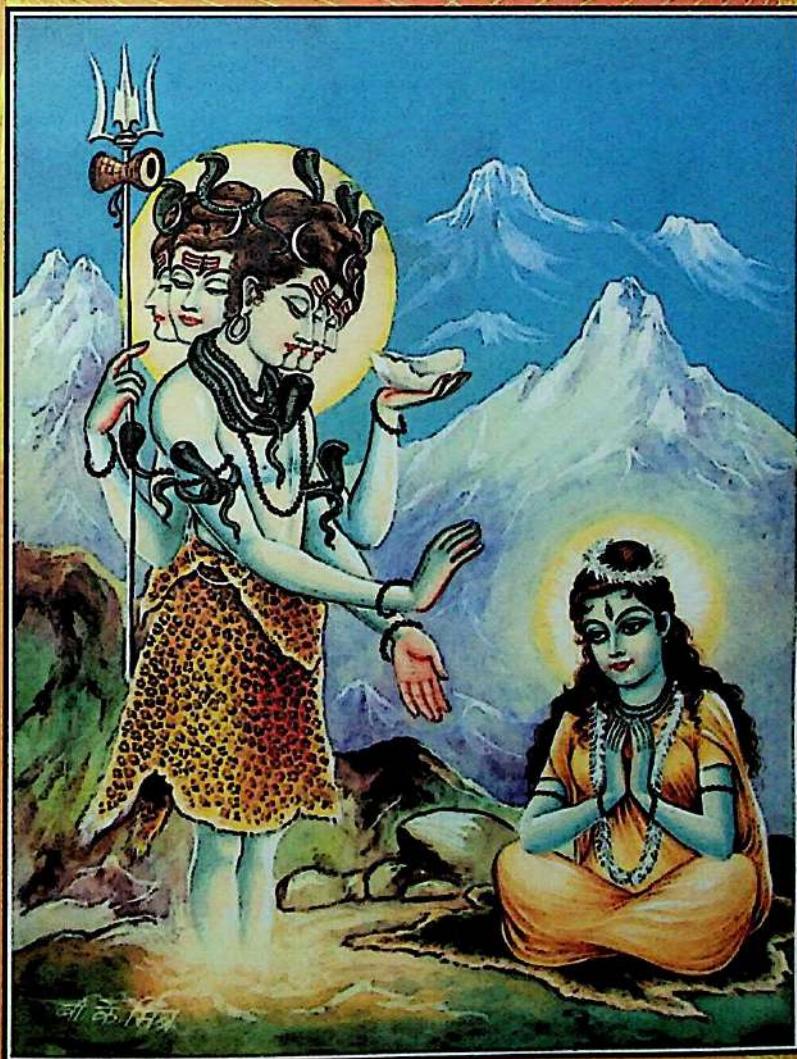
कूपन-संख्या BS—

नाम एवं पूरा पता— बद्री नारायण दुबे
मुमुक्षु भवन
आस्सी, बारायासी
दिल्ली राज्य खण्डक फसाने ५६

मोबाइल नं०- ८४५०६६६६५५ पिन नं०-

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

कल्याण



वर्ष
११

श्रीशिवमहापुराणाङ्क

संख्या
१

दुर्गति-नाशिनि दुर्गा जय जय, काल-विनाशिनि काली जय जय।
 उमा-रमा-ब्रह्माणी जय जय, राधा-सीता-रुक्मिणि जय जय॥
 साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव, जय शंकर।
 हर हर शंकर दुखहर सुखकर अघ-तम-हर हर हर शंकर॥
 हरे राम हरे राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

जय जय दुर्गा, जय मा तारा। जय गणेश जय शुभ-आगरा॥

जयति शिवाशिव जानकिराम। गौरीशंकर सीताराम॥

जय रघुनन्दन जय सियाराम। ब्रज-गोपी-प्रिय राधेश्याम॥

रघुपति राघव राजाराम। पतितपावन सीताराम॥

(संस्करण २,१५,०००)

शिवपुराण-श्रवणकी महिमा

ये शृणवन्ति मुने शैवं पुराणं शास्त्रमुत्तमम्। ते मनुष्या न मन्तव्या रुद्रा एव न संशयः॥
 पुराणश्रवणं शधोर्नामसमझीतने तथा। कल्पद्रुमफलं सम्यद्भु मनुष्याणां न संशयः॥
 कलौ दुर्योधसां पुंसां धर्मचारीज्ञितात्मनम्। हिताय विदधे शाख्यः पुराणाख्यं सुधारसम्॥
 एकोउजरामरः स्याद्बै पितृनेवामृतं पुमान्। शम्भोः कथामृतं कुर्यात् कुलमेवाजरामरम्॥
 सदा सेव्या सदा सेव्या सदा सेव्या विशेषतः। एतच्छिवपुराणस्य कथा परमपावनी॥

एतच्छिवपुराणस्य कथाश्रवणमात्रतः। किं ब्रवीपि फलं तस्य शिवशिच्चत्तं समाश्रयेत्॥

[श्रीसूतजी शैनकजीसे कहते हैं—] हे मुने ! जो लोग इस श्रेष्ठ शास्त्र शिवपुराणका श्रवण करते हैं, उन्हें मनुष्य नहीं समझना चाहिये; वे रुद्रस्वरूप ही हैं; इसमें सन्देह नहीं है। शिवपुराणका श्रवण और भगवान् शंकरके नामका संकीर्तन—दोनों ही मनुष्योंको कल्पवृक्षके समान सम्यक् फल देनेवाले हैं, इसमें सन्देह नहीं है। कलियुगमें धर्माचरणसे शून्य चित्तवाले दुर्विद्धि मनुष्योंके उद्धारके लिये भगवान् शिवने अमृतरसस्वरूप शिवपुराणकी उद्धारना की है। अमृतपान करनेसे तो केवल अमृतपान करनेवाला ही मनुष्य अजर-अमर होता है, किंतु भगवान् शिवका यह कथामृत सम्पूर्ण कुलको अजर-अमर कर देता है। इस शिवपुराणकी परम पवित्र कथाका विशेष रूपसे सदा ही सेवन करना चाहिये, करना ही चाहिये, करना ही चाहिये। इस शिवपुराणकी कथाके श्रवणका क्या फल कहूँ ?
 इसके श्रवणमात्रसे भगवान् सदाशिव उस प्राणीके हृदयमें विराजमान हो जाते हैं। [स्कन्दपुराण]

* कृपया नियम अनियम पृष्ठरर देखें।

एकवर्षीय शुल्क
संबिल्द २२२०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥
 जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अस्तिलालन् जय जय॥
 जय विशद् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail } वार्षिक US\$ 50 (₹ 3000) } Us Cheque Collection
 संस्थापक } संबिल्द शुल्क } पंचवर्षीय US\$ 250 (₹ 15,000) } Charges 65 Extra

पंचवर्षीय शुल्क
संबिल्द ११००

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम अद्वेद्य श्रीजयदयालजी गोयन्दका
 आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन खाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार
 सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहस्रमात्रक—डॉ प्रेमप्रकाश लक्ष्मण
 केशोराम अग्रवालद्वारा गोविन्दभवन-कार्यालय के लिये गीतप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित
 website : gitapress.org | e-mail : kalyan@gitapress.org | 09235400242/244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—‘कल्याण-कार्यालय’, पोंगीतप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।
 Online सदस्यता-शुल्क—भुगतानहेतु—gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।
 अब ‘कल्याण’ के मासिक अंक kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

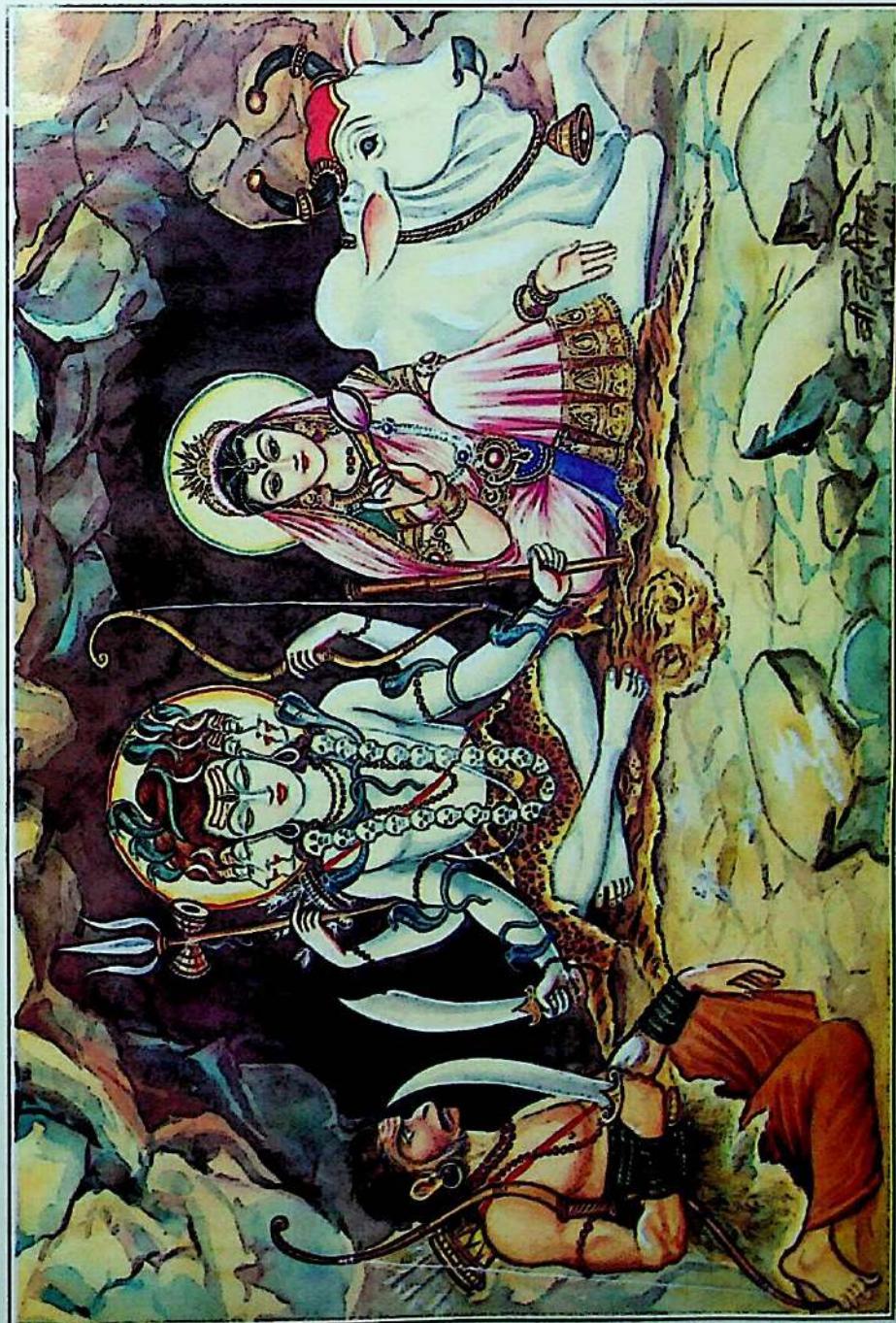


देवताओं और मुनियोंद्वारा शिवस्तुति

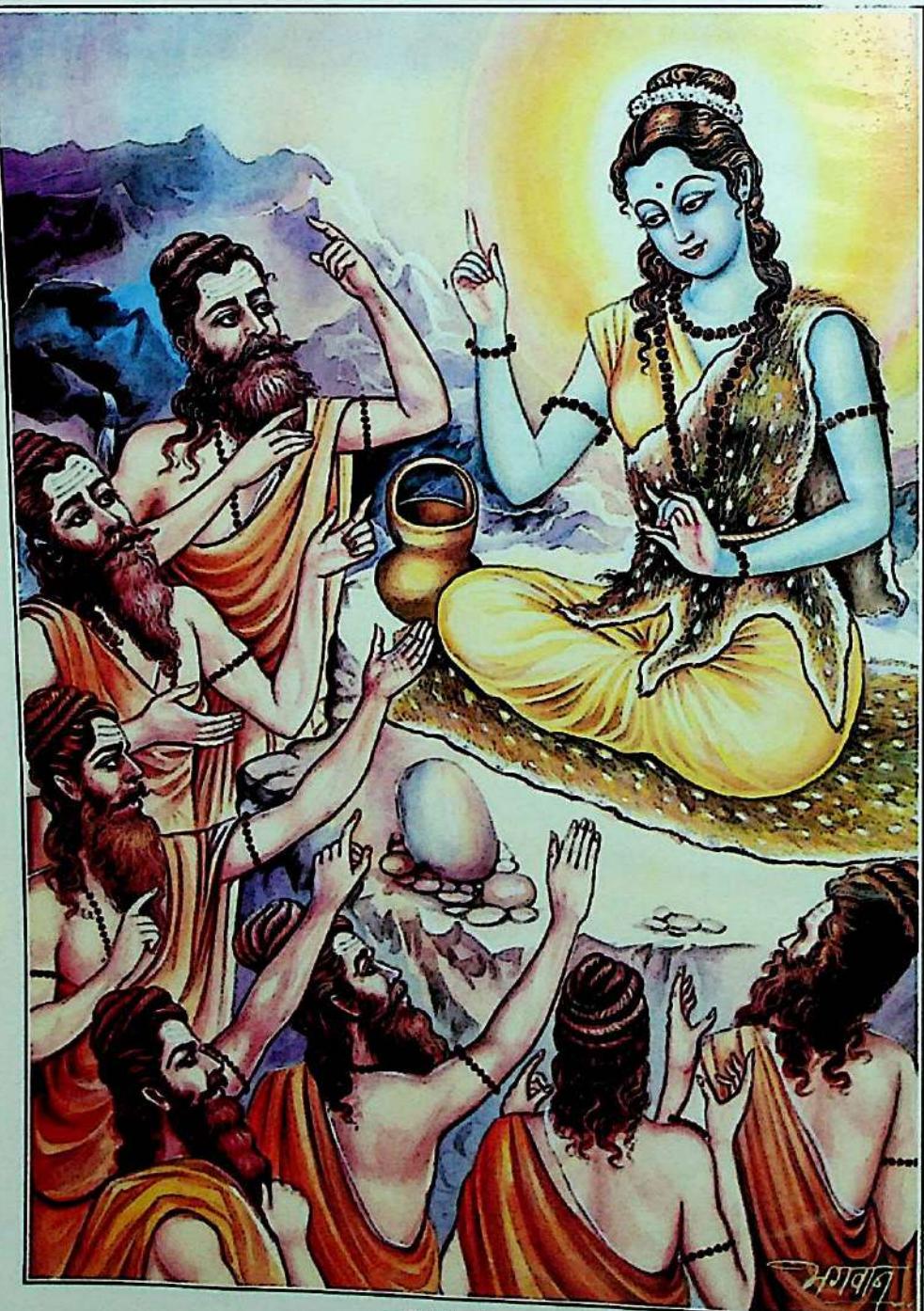
CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri



सतीजीका आश्चर्य



गुणमें गाँधी-शंकर



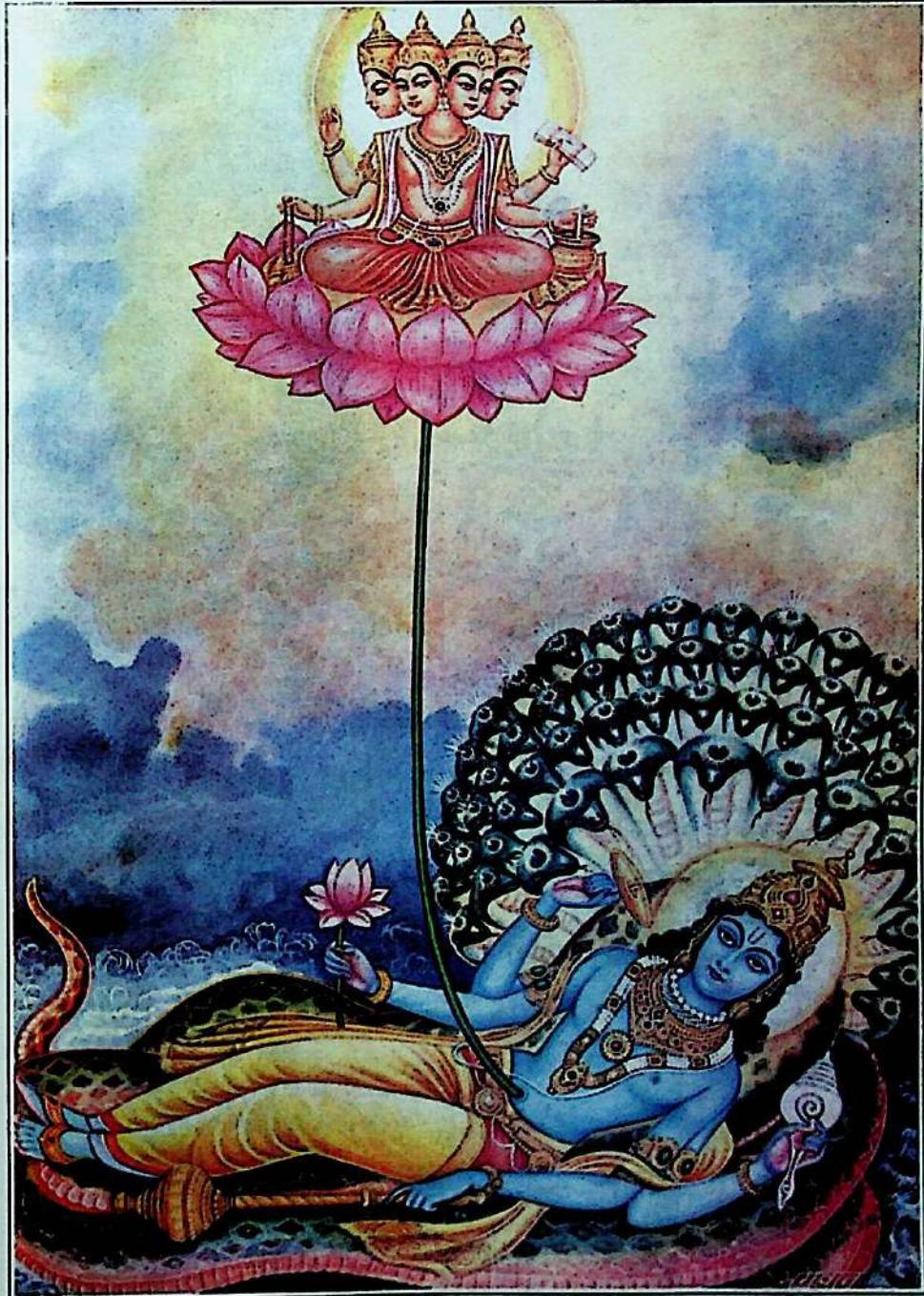


श्रीशत्रुघ्नी की विकट बारात



B.K. Mitra

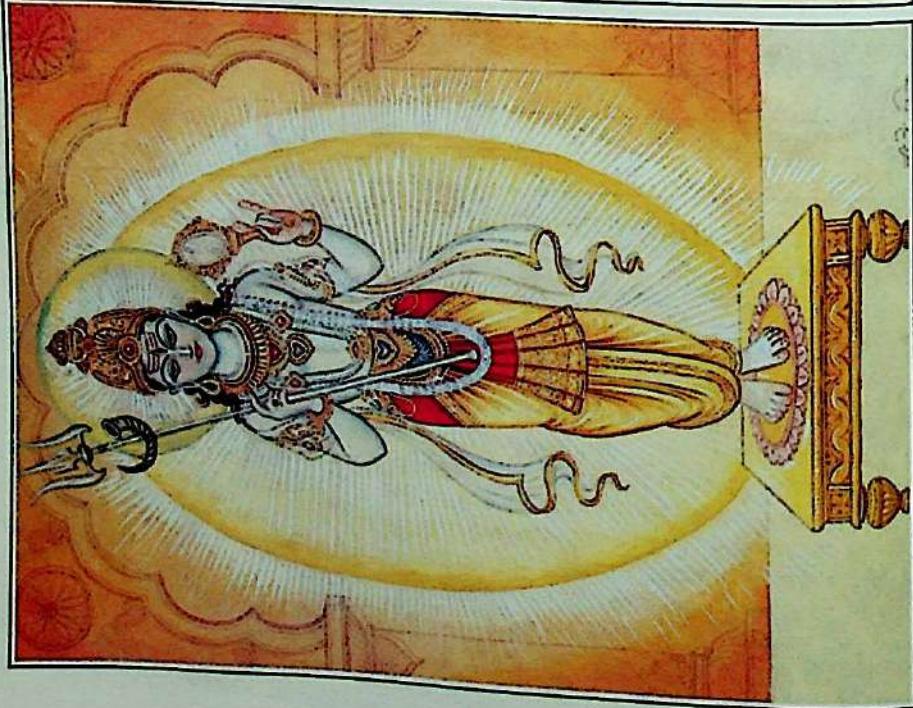
मयूरवाहन भगवान् कात्तिकेय



श्रीनारायणके नाभिकम्पलसे ग्रहाजीका प्राकदय



वरवेशमें भगवती पार्वती



वरवेशमें भगवतन् शिव

३० पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



કલ્યાણ

વન્દે વન્દનતુષ્ટમાનસમાતિપ્રેમપ્રિયં પ્રેમદં પૂર્ણ પૂર્ણકારં પ્રપૂર્ણનિખિલૈશ્વર્યેકવાસં શિવમ् ।
સત્યં સત્યમયં ત્રિસત્યવિભવં સત્યપ્રિયં સત્યદે વિષ્ણુબ્રહ્માનુતં સ્વકીયકપ્રયોપાત્તાકૃતિં શદ્ગ્રમ् ॥

વર્ષ
૧૧

ગોરખપુર, સૌર માઘ, વિંદો સં ૨૦૭૩, શ્રીકૃષ્ણ-સં ૫૨૪૨, જનવરી ૨૦૧૭ ઈંડો

સંખ્યા

૧

પૂર્ણ સંખ્યા ૧૦૮૨

ભગવાન् ઉમામહેશ્વરકા મંગલમય વૈવાહિક વેષ

માલતીમાલયા યુક્ત સત્રલમુક્તોઽચ્ચલમ् ।	સત્કળઠાભરણં	ચારુવલયાઙ્ગદભૂષિતમઃ ॥
ચહીણીચેનાતુલેન ત્વતિસૂક્ષ્મેણ ચારુણા ।	અમૂલ્યવસ્ત્રયુભેન	વિચિત્રેણાતિરાજિતમઃ ॥
ચન્દનગારકસ્તુરીચારુકુઞ્ચમભૂષિતમ् ।	રલદર્પણહસ્તં ચ કઞ્જલોઽચ્ચલલોચ્ચનમ् ॥***	
સુચારુકબીરીભારાં ચારુપત્રકશોભિતામ् ।	કસ્તુરીવિન્દુમિસાર્થી	સિદ્ધુવિન્દુશોભિતામઃ ॥
રલેન્દ્રસારહારેણ વક્ષસા સુવિરાજિતામ् ।	રલનેક્યુરૂપલયાં	રલકુઞ્ચણવિષિદ્ધતામઃ ॥
સત્રલકુઞ્ચલાભ્યાં ચ ચારુગાંદસ્થલોઽચ્ચલામ् ।	મણિરલપ્રભામુદ્વિદનરાજિવિરાજિતામ् ॥	
મધુબિમ્બાધરોષાં ચ રલયાવકસંયુતામ् ।	રલદર્પણહસ્તાં	ક્રોડાપદ્મવિભૂષિતામ ॥

[ભગવાન् શિવ] માલતીકી માલાસે યુક્ત, ડરમ રલાંસે જાટિત મુકુટસે પ્રકાશિત, ગલેમેં સુન્દર હાર ધારણ કિયે હુએ, સુન્દર કંગન તથા બાજુબન્ડસે સુશોભિત, પવિત્ર અગ્રિનેક સમાન દેદીયમાન, અનુપમ, અત્યન્ત સૂક્ષ્મ, મનોહર, બહુમૂલ્ય તથા વિચિત્ર યુગમ વસ્ત્ર ધારણ કિયે હુએ, ચન્દન- અગ્રણ- કસ્તુરી તથા સુન્દર કુમકુમકે લેપસે શોભિત, હાથમેં રલમય દર્પણ લિયે હુએ આં કઞ્જલાકે કારણ કાન્દિનામનું નેત્રોંસે સુશોભિત હૈન ॥*** [ભગવતી પાર્વતી] સુન્દર કેશપાશવાલી, સુન્દર પત્ર-રચનાસે શોભિત, કસ્તુરી-વિન્દુસહિત સિદ્ધુવિન્દુસે શોભિત, વક્ષસ્થલપર શ્રેષ્ઠ રલોંકે હારસે સુશોભિત, રલનિર્મિત બાજુબન્ડ ધારણ કરનેવાલી, રલમય કંકાણોંસે મંડિત, શ્રેષ્ઠ રલોંકે કુણ્ઢલોંસે પ્રકાશિત, સુન્દર કપોલવાલી, મण એવં રલોંકી કાન્દિનો ફોકી કા દેનેવાલી દનતર્ણક્સે સુશોભિત, મનોહર વિષ્ણુપદલકે સમાન અધરોદ્વાલી, રલોંકે યાવક (મહાવર) -સે યુક્ત આં હાથમેં રલમય દર્પણ તથા ક્રોડા-કમલસે વિભૂષિત હૈન । [શીશિવમહાપુરાણ-પાર્વતીખંડ]

'कल्याण' के सम्मान्य सदस्योंसे नम्र निवेदन

१-'कल्याण' के १२वें वर्ष—सन् २०१७ का यह विशेषाङ्क—‘श्रीशिवमहापुराणाङ्क’—हिन्दी भाषानुवाद, श्लोकाङ्कसहित—पूर्वार्थी आपलोगोंकी सेवामें प्रस्तुत है। इसमें ५८८ पृष्ठोंमें पात्र्य-सामग्री और १२ पृष्ठोंमें विवर्य-सूची आदि है। कई बहुरंगे एवं रेखाचित्र भी दिये गये हैं। डाकसे सभी ग्राहकोंको विशेषाङ्क—प्रेषणमें लगभग एक माहाका समय लग जाता है।

२-वार्षिक सदस्यता-शुल्क प्रेषित करनेपर भी किसी कारणवश यदि विशेषाङ्क वी०पी०पी० द्वारा आपके पास पहुँच गया हो तो उसे डाकबससे प्राप्त कर लेना चाहिये एवं प्रेषित की गयी राशिका पूरा विवरण (मनीऑर्डर पावतीसहित) उचित व्यवस्थाके लिये यहाँ भेज देना चाहिये अथवा उक्त वी०पी०पी० से किसी अन्य सज्जनको ग्राहक बनाकर उसकी सूचना यहाँ नये सदस्यके पूरे पतेसहित देनी चाहिये।

३-इस अङ्कके लिफाफे (कवर)-पर आपकी सदस्य-संख्या एवं पता छपा है, उसे कृपया जाँच लें तथा नोट कर लें। पत्र-व्यवहारमें सदस्य-संख्याका उल्लेख नितान्त आवश्यक है।

४-कल्याणके मासिक अङ्क सामान्य डाकसे भेजे जाते हैं। अब कल्याणके मासिक अङ्क निःशुल्क पढ़नेके लिये kalyan-glatapress.org पर उपलब्ध हैं।

५-'कल्याण' एवं 'गीताप्रेस-पुस्तक-विभाग' की व्यवस्था अलग-अलग है। अतः पत्र तथा मनीऑर्डर आदि सम्बन्धित विभागको अलग-अलग भेजना चाहिये।

व्यवस्थापक—'कल्याण'-कार्यालय, पत्रालय—गीताप्रेस—२७३००५, जनपद—गोरखपुर, (उ०प्र०)

'कल्याण' के उपलब्ध पुनर्मुद्रित विशेषाङ्क

कोड	विशेषाङ्क	मूल रु	कोड	विशेषाङ्क	मूल रु	कोड	विशेषाङ्क	मूल रु
41	शक्ति-अङ्क	१५०	574	संक्षिप्त योगवासिन्द	१६०	586	शिवोपासनाङ्क	१३०
616	योगाङ्क-परिशिष्टसहित	२००	1133	सं० श्रीमद्वीभागवत	२४०	653	गोसेवा-अङ्क	१३०
627	संत-अङ्क	२३०	789	सं० शिवपुराण	२००	1131	कूर्मपुराण—सानुवाद	१४०
604	साधनाङ्क	२५०	631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण	२००	1044	वेद-कथाङ्क-परिशिष्टसहित	१७५
1773	गो-अङ्क	१७०	572	परलोक-पुनर्जन्माङ्क	१५०	1980	ज्योतिषतत्त्वाङ्क	१३०
44	संक्षिप्त पश्चपुराण	२५०	517	गर्ण-संहिता	१५०	1947	भक्तगाल अङ्क	१३०
539	संक्षिप्त याकेंद्रपुराण	१०	1113	नरसिंहपुराणम्-सानुवाद	१००	1189	सं० गूरुपुराण	१६०
1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१२०	1362	अरिन्पुराण	२००	1985	लिङ्गमहापुराण-सटीक	२००
43	नारी-अङ्क	२४०		(मूल संकलनका हिन्दी-अनुवाद)		1592	आरोग्य-अङ्क	
659	उपनिषद्-अङ्क	२००	1432	वायवपुराण-सानुवाद	१२५		(परिचित संस्करण)	२००
518	हिन्दू-संस्कृति अङ्क (शोध प्रकाश्य)	५५७		मत्स्यमहापुराण-सानुवाद	२७०	1610	(महाभागवत) देवीपुराण	
279	सं० स्कन्दपुराण	३२५	657	श्रीगणेश-अङ्क	१७०		सानुवाद	१२०
40	भक्त-चिरिताङ्क	२३०	42	हुमान-अङ्क-परिशिष्टसहित	१५०	1793	श्रीमद्वीभागवताङ्क-पूर्वार्ध	१००
1183	सं० नारदपुराण	२००	1361	सं० श्रीवाराहपुराण	१००	1842	श्रीमद्वीभागवताङ्क-उत्तरार्ध	१००
587	सत्कथा-अङ्क	२००	791	सूर्याङ्क	१३०	1875	सेवा-अङ्क	१३०
636	तीर्थाङ्क	२००	584	सं० भविष्यपुराण	१५०	2035	गङ्गा-अङ्क (कृपनवाला)	२२०

सभी अङ्कोंपर डाक-व्यय ₹ ३० अतिरिक्त देय होगा। गीताप्रेस-पुस्तक-विक्री-विभागसे प्राप्य हैं।

व्यवस्थापक—गीताप्रेस, पत्रालय—गीताप्रेस—२७३००५, जनपद—गोरखपुर, (उ०प्र०)

श्रीहरि:

‘श्रीशिवमहापुराणाङ्क’ की विषय-सूची

स्तुति-प्रार्थना

१. भगवान् उमामहेश्वरका मंगलमय वैबाहिक वेष	११	४- श्रीशिवमहापुराणसूक्तिसुधा	२७
२. अष्टमूर्तिस्तव	२५	५- श्रीशिवमहापुराण [पूर्वार्ध]—एक सिंहावलोकन (राधेश्वरम् खेमका)	३१
३. द्वादशज्योतिर्लिंगस्मरणमाहात्म्य	२६		

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
--------	------	--------------	--------	------	--------------

माहात्म्य

१. शौनकजीके साधनविषयक प्रश्न करनेपर सूतजीका उन्हें शिवमहापुराणकी महिमा सुनाना.....	६१	जा चंचुलाका पार्वतीजीकी सखी होना	६८
२. शिवपुराणके श्रवणसे देवराजको शिवलोककी प्राप्ति	६३	५. चंचुलाके प्रयत्नसे पार्वतीजीको आज्ञा पाकर तुम्हुरुका विन्ध्यपर्वतपर शिवपुराणकी कथा सुनाकर बिन्दुगका पिशाचयोनिसे उद्धार करना तथा उन दोनों दम्पतीका शिवधाममें सुखी होना	७०
३. चंचुलाका पापसे भय एवं संसारसे बैराग्य	६५	६. शिवपुराणके श्रवणकी विधि	७३
४. चंचुलाकी प्रार्थनासे ब्राह्मणका उसे पूरा शिवपुराण सुनाना और समयानुसार शरीर छोड़कर शिवलोकमें		७. श्रोताओंके पालन करनेयोग्य नियमोंका वर्णन ...	७६

प्रथम विद्येश्वरसंहिता

१. प्रयागमें सूतजीसे मुनियोंका शीघ्र पापनाश करनेवाले साधनके विषयमें प्रश्न	७१	भगवान् शिवकी स्तुति तथा उनक अनर्थन होना .	९५
२. शिवपुराणका माहात्म्य एवं परिचय	८१	११. शिवलिंगकी स्थापना, उसके लक्षण और पूजनकी विधिका वर्णन तथा शिवपदकी प्राप्ति करनेवाले सत्कर्मोंका विवेचन	९७
३. साध्य-साधन आदिका विचार	८४	१२. मोक्षदायक पुण्यक्षेत्रोंका वर्णन, कालविशेषमें विभिन्न नदियोंके जलमें स्नानके उत्तम फलका निर्देश तथा तीर्थोंमें पापसे बचे रहनेकी चेतावनी	१०१
४. श्रवण, कीर्तन और मनन—इन तीन साधनोंको श्रेष्ठताका प्रतिपादन	८५	१३. सदाचार, शीचाचार, स्नान, भस्मधारण, सन्ध्या-वन्दन, प्रणव-जप, गायत्री-जप, दान, न्यायतः धनोपार्जन तथा अग्निहोत्र आदिकी विधि एवं उनकी महिमाका वर्णन	१०३
५. भगवान् शिवके लिंग एवं साकार विग्रहकी पूजाके रहस्य तथा महत्वका वर्णन	८७	१४. अग्नियज्ञ, देवयज्ञ और ब्रह्मयज्ञ आदिका वर्णन, भगवान् शिवके द्वाग्र सातों वारोंका निर्माण तथा उनमें देवाधानसे विभिन्न प्रकारके फलोंकी प्राप्तिका कथन ..	१०७
६. ब्रह्मा और विष्णुके भयकर युद्धको देखकर देवताओंका कैलास-शिखरपर गमन	८८	१५. देश, काल, पाप और दान आदिका विचार ...	११०
७. भगवान् शंकरका ब्रह्मा और विष्णुके युद्धमें अतिनस्तम्भक्षणमें प्राकटया, स्वास्थके अदि और अनन्तकी जानकारीके लिये दोनोंका प्रस्थान	९०	१६. मृतिका आदिसे निर्मित देवप्रतिमाओंके पूजनकी विधि, उनके लिये नैवेद्यका विचार, पूजनके विभिन्न उपचारोंका फल, विशेष मास, वार, तिथि एवं नक्षत्रोंकी योगमें पूजनका विशेष फल तथा लिंगके धैजानिक स्वरूपका विवेचन	११३
८. भगवान् शंकरद्वारा ब्रह्मा और केतकी पुष्पको शाप देना और पुनः अनुग्रह प्रदान करना	९१		
९. महेश्वरका ब्रह्मा और विष्णुको अपने निकल और सकल स्वरूपका परिचय देते हुए लिंग-पूजनका महत्व बताना	९३		
१०. सूर्य, स्थिति आदि पौच्च कृत्योंका प्रतिपादन, प्रणव एवं पंचाक्षर-मन्त्रको महता, ब्रह्मा-विष्णुद्वय			

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
१७. इन्द्रियानुस्वरूप प्रणवका माहात्म्य, उसके सूक्ष्म रूप (उँचाकार) और स्थूल रूप (पंचाक्षर मन्त्र)-का विवेचन, उसके जपकी विधि एवं महिमा, कार्यग्रहके लोकोंसे लेकर कारणरूपके लोकों-तकका विवेचन करके कालातीत, पंचावरणविशिष्ट शिवलोकके अनिवार्यीय वैभवका निरूपण तथा शिवभक्तोंके सत्कारोंमें महत्ता ११९		
१८. बन्धन और मोक्षका विवेचन, शिवपूजाका उपदेश, लिंग आदिमें शिवपूजनका विधान, भस्मके स्वरूपका निरूपण और महत्त्व, शिवके भस्मधारणका रहस्य, शिव एवं गुरु शब्दकी व्युत्पत्ति तथा विज्ञानिके उपाय और		
१९. पार्थिव शिवलिंगके पूजनका माहात्म्य १२३	शिवधर्मका निरूपण १२६	
२०. पार्थिव शिवलिंगके निर्माणकी रीति तथा वेद-मन्त्रोद्घारा उसके पूजनकी विस्तृत एवं संक्षिप्त विधिका वर्णन १३५	२१. कामनाभेदसे पार्थिवलिंगके पूजनका विधान १३९	
२२. शिव-नैवेद्य-भक्षणका निर्णय एवं विल्वपत्रका माहात्म्य १४२	२३. भस्म, रुद्राक्ष और शिवनामके माहात्म्यका वर्णन १४४	
२४. रुद्राक्षधारणकी महिमा तथा उसके विविध भेदोंका वर्णन १५१	२५. भस्म-माहात्म्यका निरूपण १४६	

द्वितीय रुप्रसंहिता

१-सृष्टिखण्ड

१. ऋषियोंके प्रश्नके उत्तरमें श्रीसूतजीद्वारा नारद-ब्रह्म-संवादकी अवतारणा १५७	प्रादुर्भाव, शिवके वायांसे परम पुरुष (विष्णु)-का आविर्भाव तथा उनके सकाशसे प्राकृत तत्त्वोंकी क्रमसः उत्पत्तिका वर्णन १७१
२. नारद मुनिकी तपस्या, इन्द्रद्वारा तपस्यामें विष्णु उत्पास्थित करना, नारदका कामपर विजय पाना और अहंकारसे युक्त होकर ब्रह्मा, विष्णु और रुद्रसे अपने तपका कथन १५९	७. भगवान्, विष्णुकी नाभिसे कमलका प्रादुर्भाव, शिवेच्छासे ब्रह्माजीका उससे प्रकट होना, कमलनालके उद्गमका पता लगानेमें असमर्थ ब्रह्माका तप करना, श्रीहरिका उन्हें दर्शन देना, विवादग्रस्त ब्रह्मा-विष्णुके बीचमें अग्निस्तम्भका प्रकट होना तथा उसके ओर-छोरका पता न पाकर उन दोनोंका उसे प्रणाम करना १७४
३. मायानिर्मित नगरमें शौलनिधिकी कन्यापार मोहित हुए नारदजीका भगवान् विष्णुसे उनका रूप मार्गना, भगवान्नका अपने रूपके साथ वानरका-सा मुँह देना, कन्याका भगवान्नको बरण करना और कुपित हुए नारदका शिवगणोंको शाप देना १६१	८. ब्रह्मा और विष्णुको भगवान् शिवके शब्दमय शरीरका दर्शन १७७
४. नारदजीका भगवान् विष्णुको ग्रोधपूर्वक फटकारना और शाप देना, फिर मायाके दूर हो जानेपर परस्पराप-पूर्वक भगवान्नके चरणोंमें गिरना और शुद्धिका उपाय पूछना तथा भगवान् विष्णुका उन्हें समझा-बुझाकर शिवका माहात्म्य जाननेके लिये ब्रह्माजीके पास जानेका आदेश और शिवके भजनका उपदेश देना १६२	९. उमासहित भगवान् शिवका प्राकट्य, उनके द्वारा अपने स्वरूपका विवेचन तथा ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंकी एकत्रिका प्रतिपादन १८०
५. नारदजीका शिवतत्त्वके विषयमें प्रश्न, शिवगणोंको शापोद्धरकी बात बताना तथा ब्रह्मालोकमें जाकर ब्रह्माजीसे शिवतत्त्वके विषयमें प्रश्न करना १६५	१०. श्रीहरिको सृष्टिकी रक्षाका भार एवं भोग-मोक्ष-दानका अधिकार देकर भगवान् शिवका अन्तर्धान होना १८३
६. महाप्रलयकालमें केवल सद्ब्रह्मकी सत्कार प्रतिपादन, उस निर्गुण-निराकार ब्रह्मसे ईश्वरमूर्ति (सदाशिव)-का प्राकट्य, सदाशिवद्वारा स्वरूपभूत शक्ति (अम्बिका)-का प्रकटीकरण, उन दोनोंके द्वारा उत्तम क्षेत्र (काशी या आनन्दवन)-का	११. शिवपूजनकी विधि तथा उसका फल १८५
	१२. भगवान् शिवकी श्रेष्ठता तथा उनके पूजनकी अनिवार्य आवश्यकताका प्रतिपादन १८८
	१३. शिवपूजनकी स्वरूपतामें विधिका वर्णन १९२
	१४. विभिन्न उप्यों, अन्तों तथा जलादिकी धारणोंसे शिवजीकी पूजाका माहात्म्य १९६
	१५. सृष्टिका वर्णन २००
	१६. ब्रह्माजीकी सन्नानोंका वर्णन तथा सती और शिवकी महत्ता का प्रतिपादन २०३

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
१७.	ब्रह्मदत्तके पुत्र गुणनिधिका चरित्र	२०५	१०.	ब्रह्मा और विष्णुके संवादमें शिवमाहात्म्यका वर्णन	२३९
१८.	शिवमन्दिरमें दीपदानके प्रभावसे पापमुक्त होकर गुणनिधिका दूसरे जन्ममें कलिंगदेशका राजा बनना और फिर शिवभक्तिके कारण कुबेर पदकी प्राप्ति....	२०८	११.	ब्रह्मद्वारा जगदग्निका शिवाकी स्तुति तथा वरकी प्राप्ति	२४२
१९.	कुबेरका काशीपुरीमें आकर तप करना, तपस्यासे प्रसन्न उमासहित भगवान् शिवनाथका प्रकट हो उसे दर्शन देना और अनेक वर प्रदान करना, कुबेरद्वारा शिवमैत्री प्राप्त करना	२११	१२.	दक्षप्रजापतिका तपस्याके प्रभावसे शक्तिका दर्शन और उनसे रुद्रमोहनकी प्रार्थना करना	२४५
२०.	भगवान् शिवका कैलास पर्वतपर गमन तथा सृष्टिखण्डका उपसंहार	२१३	१३.	ब्रह्माकी आज्ञासे दक्षद्वारा मैथुनी सृष्टिका आरथ्य, अपने पुत्र हर्यश्वों तथा सबलाश्वोंको निवृत्तिमार्गमें भेजनेके कारण दक्षका नारदको शाप देना	२४७
२-सतीखण्ड			१४.	दक्षकी साठ कन्याओंका विवाह, दक्षके यहाँ देवी शिवा (सती)-का प्राकट्य, सतीको बाललीलाका वर्णन	२४९
१.	सतीचरित्रवर्णन, दक्षयज्ञविष्वंसका संक्षिप्त वृत्तान्त तथा सतीका पार्वतीरूपमें हिमालयके यहाँ जन्म लेना	२१७	१५.	सतीद्वारा नन्दा-ब्रतका अनुस्थान तथा देवताओंद्वारा शिवस्तुति	२५१
२.	सदाशिवसे त्रिदेवोंकी उत्पत्ति, ब्रह्माजीसे देवता आदिकी सृष्टिके परचात्, देवी सन्त्या तथा कामदेवका प्राकट्य	२१९	१६.	ब्रह्मा और विष्णुद्वारा शिवसे विवाहके लिये प्रार्थना करना तथा उनकी इसके लिये स्वीकृति	२५५
३.	कामदेवको विविध नामों एवं वरोंकी प्राप्ति, कामके प्रभावसे ब्रह्मा तथा ऋषियोंका मुश्व होना, धर्मद्वारा स्तुति करनेपर भगवान् शिवका प्राकट्य और ब्रह्मा तथा ऋषियोंको समझाना, ब्रह्मा तथा ऋषियोंसे अग्निव्यात आदि पितृगणोंकी उत्पत्ति, ब्रह्मद्वारा कामको शापकी प्राप्ति तथा निवारणका उपाय	२२१	१७.	भगवान् शिवद्वारा सतीको वर-प्राप्ति और शिवका ब्रह्माजीको दक्ष प्रजापतिके पास भेजना	२५७
४.	कामदेवके विवाहका वर्णन.....	२२५	१८.	देवताओं और मुनियोंसहित भगवान् शिवका दक्षके घर जाना, दक्षद्वारा सबका सत्कार एवं सती तथा शिवका विवाह	२६१
५.	ब्रह्माकी मानसपुत्री कुमारी सन्त्याका आज्ञायन.....	२२७	१९.	शिवका सतीके साथ विवाह, विवाहके समय शम्भुकी मायासे ब्रह्माका मोहित होना और विष्णुद्वारा शिवतत्त्वका निरूपण	२६३
६.	सन्त्याद्वारा तपस्या करना, प्रसन्न हो भगवान् शिवका उसे दर्शन देना, सन्त्याद्वारा की गयी शिवस्तुति, सन्त्याको अनेक वरोंकी प्राप्ति तथा महर्षि मेधातिथिके यज्ञमें जानेका आदेश प्राप्त होना	२३०	२०.	ब्रह्माजीका 'रुद्रशिं' नाम यड्नेका कारण, सती एवं शिवका विवाहोत्सव, विवाहके अनन्तर शिव और और सतीका वृप्तभास्तु हो कैलासके लिये प्रस्थान.....	२६६
७.	महर्षि मेधातिथिकी यज्ञाग्निमें सन्त्याद्वारा शरीर-त्याग, पुनः अल्पतीके रूपमें यज्ञाग्निसे उत्पत्ति एवं चसिष्टमुनिके साथ उसका विवाह	२३३	२१.	कैलास पर्वतपर भगवान् शिव एवं सतीकी मध्य लीलाएँ	२६९
८.	कामदेवके सहचर वसनके आविर्भावका वर्णन	२३४	२२.	सती और शिवका विहार-वर्णन	२७१
९.	कामदेवके विवाहका विचालित न कर पाना, ब्रह्माजीद्वारा कामदेवके सहायक मारणोंकी उत्पत्ति; ब्रह्माजीका उन सबको शिवके पास भेजना, उनका वहाँ विफल होना, गणेशसहित कामदेवका वापस अपने आश्रमको लौटना	२३७	२३.	सतीके पूछनेपर शिवद्वारा भक्तिकी महिमा तथा नवधा भक्तिका निरूपण	२७४
			२४.	दण्डकारण्यमें शिवको रामके प्रति मस्तक झुकाते देख सतीका मोह तथा शिवकी आज्ञासे उनके द्वारा रामकी परीक्षा	२७७
			२५.	श्रीशिवके द्वारा गोलोकधारमें श्रीविष्णुका गोपेशक पदपर अभियेक, श्रीरामद्वारा सतीके मनका सद्देह दूर करना, शिवद्वारा सतीका मानसिक रूपसे परिवर्त्या ..	२८०
			२६.	सतीके उपाख्यानमें शिवके साथ दक्षका विरोध-वर्णन	२८३

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
२७.	दक्षप्रजापतिद्वारा भगवन् यज्ञका प्रारम्भ, यज्ञमें दक्षद्वारा शिवके न बुलाये जानेपर दधीचिद्वारा दक्षकी भत्सना करना, दक्षके द्वारा शिव-निन्दा करनेपर दधीचिका वहाँसे प्रस्थान.....	२८५
२८.	दक्षयज्ञका समाचार पाकर एवं शिवकी आज्ञा प्राप्तकर देवी सतीका शिवगणोंके साथ पिताके यज्ञमण्डपके लिये प्रस्थान.....	२८८
२९.	यज्ञशालमें शिवका भाग न देखकर तथा दक्षद्वारा शिवनिन्दा सुनकर कुँद हो सतीका दक्ष तथा देवताओंको फटकारना और प्राणत्यागका निश्चय..	२९०
३०.	दक्षयज्ञमें सतीका योगाग्निसे अपने शरीरको भस्य कर देना, भृगुद्वारा यज्ञमण्डपसे ऋभुओंको प्रकट करना, ऋभुओं और शंकके गणोंका युद्ध, भयभीत गणोंका पलायित होना ..	२९३
३१.	यज्ञमण्डपमें आकाशवाणीद्वारा दक्षको फटकारना तथा देवताओंको सावधान करना ..	२९४
३२.	सतीके दरध होनेका समाचार सुनकर कुपित हुए शिवका अपनी जटासे वीरभद्र और महाकालीको प्रकट करके उन्हें यज्ञ-विष्वस करनेकी आज्ञा देना.....	२९६
३३.	गणोंसहित वीरभद्र और महाकालीका दक्षयज्ञ-विष्वसके लिये प्रस्थान.....	२९९
३४.	दक्ष तथा देवताओंका अनेक अपशकुनों एवं उत्पातसूचक लक्षणोंको देखकर भयभीत होना,	३००
३५.	दक्षद्वारा यज्ञकी रक्षाके लिये भगवन् विष्णुसे प्रार्थना, भगवन्नका शिवद्वेषजनित संकटको टालनमें अपनी असमर्थता बताते हुए दक्षको समझाना तथा सेनासहित वीरभद्रका आगमन ..	३०१
३६.	युद्धमें शिवगणोंसे पराजित हो देवताओंका पलायन, इन्ह आदिके पूछेनेपर वीरभद्रतिका रूढ़देवकी अजेयता बताना, वीरभद्रका देवताओंको युद्धके लिये ललकारना, श्रीविष्णु और वीरभद्रकी बातचीत ..	३०३
३७.	गणोंसहित वीरभद्रद्वारा दक्षयज्ञका विष्वस, दक्षवध, वीरभद्रका वापस कैलास पर्वतपर जाना, प्रसन्न भगवन् शिवद्वारा उसे गणाध्यक्ष पद प्रदान करना ..	३०६
३८.	दधीचि मुनि और राजा क्षुब्धके विवादका इतिहास, शुक्राचायद्वारा दधीचिको महामृत्युंजयमन्त्रका उपदेश, मृत्युंजयमन्त्रके अनुष्ठानसे दधीचिको अवध्यताकी प्राप्ति ..	३०९
३९.	श्रीविष्णु और देवताओंसे अपराजित दधीचिद्वारा देवताओंको शाप देना तथा राजा क्षुब्धपर	

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
४०.	अनुग्रह करना.....	३१३
४०. देवताओंसहित ब्रह्माका विष्णुलोकमें जाकर अपना दुःख निवेदन करना, उन सभीको लेकर विष्णुका कैलासगमन तथा भगवान् शिवसे मिलना ..	३१५	
४१.	देवताओंद्वारा भगवन् शिवकी स्तुति.....	३१७
४२.	भगवान् शिवका देवता आदिपर अनुग्रह, दक्षयज्ञ-मण्डपमें पथारकर दक्षको जीवित करना तथा दक्ष और विष्णु आदिद्वारा शिवकी स्तुति.....	३२०
४३.	भगवान् शिवका दक्षको अपनी भक्तवत्सलता, ज्ञानी भक्तकी श्रेष्ठता तथा तीनों देवोंकी एकता बताना, दक्षका अपने यज्ञको पूर्ण करना, देवताओंका अपने-अपने लोकोंको प्रस्थान तथा सतीखण्डका उपसंहार और माहात्म्य ..	३२२
	३-पार्वतीखण्ड	
१.	पितरोंकी कन्या मेनाके साथ हिमालयके विवाहका वर्णन ..	३२५
२.	पितरोंकी तीन मानसी कन्याओं—मेना, धन्या और कलावतीके पूर्वजन्मका वृत्तान्त तथा सनकादि-द्वारा प्राप्त शाप एवं वरदानका वर्णन ..	३२६
३.	विष्णु आदि देवताओंका हिमालयके पास जाना, उन्हें उमाराथनकी विधि बता स्वयं भी देवी जगद्म्याकी स्तुति करना ..	३२८
४.	उमादेवीका दिव्यरूपमें देवताओंको दर्शन देना और अवतार ग्रहण करनेका आश्वासन देना ..	३२९
५.	मेनाकी तपस्यासे प्रसन्न होकर देवीका उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देकर वरदान देना, मेनासे मैनाकका जन्म ..	३३०
६.	देवी उमाका हिमवान्के हृदय तथा मेनाके गर्भमें आना, गर्भस्था देवीका देवताओंद्वारा स्वतन, देवीका दिव्यरूपमें प्रादुर्भाव, माता मेनासे वार्तालाप तथा पुनः नवजात क्याके रूपमें परिवर्तित होना.....	३३५
७.	पार्वतीका नामकरण तथा उनकी बाललीलाएँ एवं विद्याध्ययन ..	३३७
८.	नारद मुनिका हिमालयके समीप गमन, वहाँ पार्वतीका हाथ देखर भावी लक्षणोंको बताना, चिन्तित हिमवान्को शिवमहिमा बताना तथा शिवसे विवाह करनेका परामर्श देना ..	३३८
९.	पार्वतीके विवाहके सम्बन्धमें मैना और हिमालयका वार्तालाप, पार्वती और हिमालयद्वारा देखे गये अपने स्वनका वर्णन ..	३४१
१०.	शिवजीके ललाटसे भौमोत्पत्ति ..	३४२

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
११. भगवान् शिवका तपस्याके लिये हिमालयपर आगमन, वहाँ पर्वतराज हिमालयसे बारालाप	३४४	२५. भगवान् शंकरकी आज्ञासे सपर्यियोद्धारा पार्वतीके शिवविषयक अनुरागकी परीक्षा करना और वह बृत्तान्त भगवान् शिवको बताकर स्वर्गलोक जाना	३७३		
१२. हिमवान्का पार्वतीको शिवकी सेवामें रखनेके लिये उनसे आज्ञा माँगना, शिवद्वारा कारण बताते हुए इस प्रस्तावको अस्वीकार कर देना	३४६	२६. पार्वतीकी परीक्षा लेनेके लिये भगवान् शिवका जटाधारी ब्राह्मणका वेष धारणकर पार्वतीके समीप जाना, शिव-पार्वती-संवाद	३७६		
१३. पार्वती और परमेश्वरका दर्शनिक संवाद, शिवका पार्वतीको अपनी सेवके लिये आज्ञा देना, पार्वतीका महेश्वरकी सेवामें तत्पर रहना	३४७	२७. जटाधारी ब्राह्मणद्वारा पार्वतीके समक्ष शिवजीके स्वरूपकी निन्दा करना	३७८		
१४. तारकासुरकी उत्पत्तिके प्रसंगमें दितिपुत्र वज्रांगकी कथा, उसकी तपस्या तथा वरप्राप्तिका वर्णन ..	३५०	२८. पार्वतीद्वारा परमेश्वर शिवकी महत्ता प्रतिपादित करना और रोपपूर्वक जटाधारी ब्राह्मणको फटकारना, शिवका पार्वतीके समक्ष प्रकट होना	३८०		
१५. वरांगीके पुत्र तारकासुरकी उत्पत्ति, तारकासुरकी तपस्या एवं ब्रह्माजीद्वारा उसे वरप्राप्ति, वरदानके प्रभावसे तीनों लोकोंपर उसका अत्याचार	३५२	२९. शिव और पार्वतीका संवाद, विवाहविषयक पार्वतीके अनुरोधको शिवद्वारा स्वीकार करना	३८२		
१६. तारकासुरसे उत्पन्न देवताओंको ब्रह्माजीद्वारा सान्त्वना प्रदान करना	३५४	३०. पार्वतीके पिताके घरमें आनेपर महामहोत्सवका होना, महादेवजीका नटरूप धारणकर वहाँ उपस्थित होना तथा अनेक लीलाएँ दिखाना, शिवद्वारा पार्वतीकी बाचना, किंतु माता-पिताके द्वारा मना करनेपर अन्तर्धान हो जाना	३८४		
१७. इन्द्रके स्मरण करनेपर कामदेवका उपस्थित होना, शिवको तपसे विचलित करनेके लिये इन्द्रद्वारा कामदेवको भेजना	३५६	३१. देवताओंके कहनेपर शिवका ब्राह्मण-वेषमें हिमालयके यहाँ जाना और शिवकी निन्दा करना ..	३८६		
१८. कामदेवद्वारा असमयमें बसन्त-ऋतुका प्रभाव प्रकट करना, कुछ क्षणके लिये शिवका मोहित होना, पुनः वैराग्य-भाव धारण करना	३५८	३२. ब्राह्मण-वेषधारी शिवद्वारा शिवस्वरूपकी निन्दा सुनकर मेनाका कोपभवनमें गमन, शिवद्वारा सपर्यियोंका स्मरण और उन्हें हिमालयके घर भेजना, हिमालयकी शोभाका वर्णन तथा हिमालयद्वारा सदार्थियोंका स्वागत	३८८		
१९. भगवान् शिवकी नेत्रब्यालासे कामदेवका भस्म होना और रतिका विलाप, देवताओंद्वारा रतिको सान्त्वना प्रदान करना और भगवान् शिवसे कामको जीवित करनेकी प्रार्थना करना	३५९	३३. वसिष्ठपति अरुचर्त्तीद्वारा मेनाको समझाना तथा सपर्यियोंद्वारा हिमालयको शिवमाहात्म्य बताना	३९१		
२०. शिवकी क्रोधाग्निका बड़वारूप-धारण और ब्रह्माद्वारा उसे समुद्रको समर्पित करना	३६२	३४. सर्वार्थियोंद्वारा हिमालयको रुजा अनरप्यका आख्यान सुनकर पार्वतीका विवाह शिवसे करनेकी प्रेरणा देना	३९४		
२१. कामदेवके भस्म हो जानेपर पार्वतीका अपने घर आगमन, हिमवान् तथा मेनाद्वारा उन्हें धैर्य प्रदान करना, नारदद्वारा पार्वतीको पंचाक्षर मन्त्रका उपदेश	३६३	३५. धर्मराजद्वारा मुनि पिप्पलादकी भार्या सती पदाके पातिन्द्रत्वकी परीक्षा, पदाद्वारा धर्मराजको शाप प्रदान करना तथा पुनः चारों युगोंमें शापकी व्यवस्था करना, पातिन्द्रत्वसे प्रसन्न हो धर्मराजद्वारा पदाको अनेक घर प्रदान करना, महर्षि वसिष्ठद्वारा हिमवान्से पदाके दृष्टान्तद्वारा अपनी पुत्री शिवको साँपनेके लिये कहना	३९६		
२२. पार्वतीकी तपस्या एवं उसके प्रभावका वर्णन ..	३६५	३६. सपर्यियोंके समझानेपर हिमवान्का शिवके साथ अपनी पुत्रीके विवाहका निश्चय करना, सपर्यियोंद्वारा शिवके पास जाकर उन्हें सम्पूर्ण बृत्तान्त बताकर अपने धामको जाना	३९८		
२३. हिमालय आदिका तपस्यानित पार्वतीके पास जाना, पार्वतीका पिता हिमालय आदिको अपने तपके विषयमें दृढ़ निश्चयकी बात बताना, पार्वतीके तपके प्रभावसे त्रैलोक्यका संतप्त होना, सभी देवताओंका भगवान् शंकरके पास जाना	३६८				
२४. देवताओंका भगवान् शिवसे पार्वतीके साथ विवाह करनेका अनुरोध, भगवान्का विवाहके दोष बताकर अस्वीकार करना तथा उनके पुनः प्रार्थना करनेपर स्वीकार कर लेना	३७०				

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
३७.	हिमालयद्वारा विवाहके लिये लगनपत्रिकाप्रेषण, विवाहकी सामग्रियोंकी तैयारी तथा अनेक पर्वतों एवं नदियोंका दिव्य रूपमें सपरिवार हिमालयके घर, आगमन	४००			
३८.	हिमालयपुरीको सजावट, शिवकर्माद्वारा दिव्य-मण्डप एवं देवताओंके निवासके लिये दिव्यलोकोंका निर्माण करना	४०२			
३९.	भगवान् शिवका नारदजीके द्वारा सब देवताओंको निमन्त्रण दिलाना, सबका आगमन तथा शिवका मंगलाचार एवं ग्रहपूजन आदि करके कैलाससे बाहर निकलना	४०३			
४०.	शिववरातकी शोभा, भगवान् शिवका वरात लेकर हिमालयपुरीकी ओर प्रस्थान	४०६			
४१.	नारदद्वारा हिमालयगृहमें जाकर शिवकर्माद्वारा बनाये गये विवाहमण्डपका दर्शनकर मोहित होना और बाप्स आकर उस विविच्चर रचनाका वर्णन करना	४०८			
४२.	हिमालयद्वारा प्रेषित मूर्तिमान पर्वतों और ब्राह्मणोंद्वारा वरातकी आगामी, देवताओं और पर्वतोंका मिलापका वर्णन	४१०			
४३.	मेनाद्वारा शिवको देखनेके लिये महलकी छतपर जाना, नारदद्वारा सबका दर्शन करना, शिवद्वारा अद्वृत लीलाका प्रदर्शन, शिवगणों तथा शिवके भयकर वैष्पको देखकर मेनाका मूर्च्छित होना	४११			
४४.	शिवजीके रूपको देखकर मेनाका विलाप, पार्वती तथा नारद आदि सभीको फटकारना, शिवके साथ कन्याका विवाह न करनेका हठ, विष्णुद्वारा मेनाको समझाना	४१४			
४५.	भगवान् शिवका अपने परम सुन्दर दिव्य रूपको प्रकट करना, मेनाकी प्रसन्नता और क्षमा-प्रार्थना तथा पुरावस्ती स्त्रियोंका शिवके रूपका दर्शन करके जन्म और जीवनको सफल मानना	४१८			
४६.	नगरमें बरातियोंका प्रवेश, द्वाराचार तथा पार्वतीद्वारा कुलदेवताका भूजन	४२०			
४७.	पाणिग्रहणके लिये हिमालयके घर शिवके गमनोत्सवका वर्णन	४२२			
४८.	शिव-पार्वतीके विवाहका प्रारम्भ, हिमालयद्वारा शिवके गोत्रके विषयमें प्रश्न होनेपर नारदजीके द्वारा उत्तरके रूपमें शिवमाहात्म्य प्रतिपादित करना, हर्षयुक्त हिमालयद्वारा कन्यादानकर विविध उपहार प्रदान करना	४२४			
४९.	अग्निपरिक्रमा करते समय पार्वतीके पदनखको				
	देखकर ब्रह्माका मोहप्रस्त होना, बालखिल्लोकी उत्पत्ति, शिवका कुपित होना, देवताओंद्वारा शिवस्तुति	४२६			
५०.	शिव-शिवके विवाहकृत्यसम्पादनके अनन्तर देवियोंका शिवसे मधुर वार्तालाप	४२८			
५१.	पर्तके अनुरोधपर श्रीशंकरका कामदेवको जीवित करना, देवताओंद्वारा शिवस्तुति	४३०			
५२.	हिमालयद्वारा सभी बरातियोंको भोजन कराना, शिवका विश्वकर्माद्वारा निर्मित वासगृहमें शयन करके प्रतःकाल जनवासेमें आगमन	४३२			
५३.	चतुर्थीकर्म, वरातका कई दिनोंतक ठहरना, सप्तपिंयोंके समझानेसे हिमालयका वरातको विदा करनेके लिये राजी होना, मेनाका शिवको अपनी कन्या साँपना तथा वरातका पुरीके बाहर जाकर ठहरना	४३४			
५४.	मेनाकी इच्छाके अनुसार एक ब्राह्मणपत्नीका पार्वतीको पातिक्रत्तधर्मका उपदेश देना	४३५			
५५.	शिव-पार्वती तथा वरातकी विदई, भगवान् शिवका समस्त देवताओंको विदा करके कैलासपर रहना और शिव-विवाहोत्पाद्यानके श्रवणकी महिमा	४३९			
	४-कुमारखण्ड				
१.	कैलासपर भगवान् शिव एवं पार्वतीका विहार	४४१			
२.	भगवान् शिवके तेजसे स्कन्दका प्रादुर्भाव और सर्वत्र महान् आनन्दोत्सवका होना	४४४			
३.	महर्षिविश्वामित्रद्वारा बालक स्कन्दका संस्करण सम्पन्न करना, बालक स्कन्दद्वारा क्रोऽचपर्वतका भेदन, इन्द्रद्वारा बालकपर वज्रप्रहर, शाख-विशाख आदिका उत्पन्न होना, कार्तिकेयका षष्मुख होकर छः कृतिकाओंका दुर्घटान करना	४४७			
४.	पार्वतीके कहनेपर शिवद्वारा देवताओं तथा कर्मसाधी धर्मादिकोंसे कार्तिकेयके विषयमें जिज्ञास करना और अपने गाणोंको कृपिकाओंके पास भेजना, नन्दिकेशवर तथा कार्तिकेयका वार्तालाप, कार्तिकेयका कैलासके लिये प्रस्थान	४४८			
५.	पार्वतीके द्वारा प्रेषित रथपर आरूढ़ हो कार्तिकेयका कैलासगमन, कैलासपर महान् उत्सव होना, कार्तिकेयका महाभियेक तथा देवताओंद्वारा विविध अस्त्र-शस्त्र तथा रत्नभूषण प्रदान करना, कार्तिकेयका ब्रह्माण्डका अधिपतित्व प्राप्त करना	४५१			
६.	कुमार कार्तिकेयकी ऐश्वर्यमयी बाललीला	४५४			

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
७.	तारकासुरसे सम्बद्ध देवासुर-संग्राम	४५६		स्वीकृति	४८२
८.	देवराज इन्द्र, विष्णु तथा वीरक आदिके साथ तारकासुरका युद्ध.....	४५७	२०.	प्रजापति विश्वरूपकी सिद्धि तथा बुद्धि नामक दो कन्याओंके साथ गणेशजीका विवाह तथा उनसे 'क्षेम' तथा 'लाभ' नामक दो पुत्रोंकी उत्पत्ति, कुमार कार्तिकेयका पृथ्वीकी परिक्रमाकर लौटना और क्षुब्ध होकर क्रांचपर्वतपर चला जाना, कुमार-खण्डके श्रवणकी महिमा.....	४८४
९.	ब्रह्माजीका कार्तिकेयको तारकके वधके लिये प्रेरित करना, तारकासुरद्वारा विष्णु तथा इन्द्रकी भत्सना, पुनः इन्द्रादिके साथ तारकासुरका युद्ध	४५९		५-युद्धखण्ड	
१०.	कुमार कार्तिकेय और तारकासुरका भीयण संग्राम, कार्तिकेयद्वारा तारकासुरका वध, देवताओंद्वारा दैत्य-सेनापर विजय प्राप्त करना, सर्वत्र विजयोल्लास, देवताओंद्वारा शिवा-शिव तथा कुमारकी स्तुति	४६२	१.	तारकासुरके पुत्र तारकाश, विष्णुनामी एवं कमलाक्षकी तपस्यासे प्रसन्न ब्रह्मद्वारा उन्हें वरकी प्राप्ति, तीनों पुत्रोंकी शोभाका वर्णन	४८७
११.	कार्तिकेयद्वारा बाण तथा प्रलम्ब आदि असुरोंका वध, कार्तिकेयचरितके श्रवणका माहात्म्य	४६४	२.	तारकपुत्रोंसे पीड़ित देवताओंका ब्रह्माजीके पास जाना और उनके परामर्शके अनुसार असुर-वधके लिये भगवान् शंकरकी स्तुति करना	४९०
१२.	विष्णु आदि देवताओं तथा पर्वतोंद्वारा कार्तिकेयकी स्तुति और वरप्राप्ति, देवताओंके साथ कुमारका कैलासगमन, कुमारको देखकर शिव-पार्वतीका आनन्दित होना, देवोंद्वारा शिवस्तुति	४६५	३.	त्रिपुरके विनाशके लिये देवताओंका विष्णुसे निवेदन करना, विष्णुद्वारा त्रिपुरविनाशके लिये यज्ञकृष्णसे भूतसमुदायको प्रकट करना, त्रिपुरके भयसे भूतोंका पलायित होना, पुनः विष्णु-द्वारा देवकार्यकी सिद्धिके लिये उपाय सोचना	४९२
१३.	गणेशोत्पत्तिका आख्यान, पार्वतीका अपने पुत्र गणेशको अपने द्वारपर नियुक्त करना, शिव और गणेशका वार्तालाप	४६७	४.	त्रिपुरासी दैत्योंको मोहित करनेके लिये भगवान् विष्णुद्वारा एक मुनिरूप पुरुषकी उत्पत्ति, उसकी सहायताके लिये नरदजीका त्रिपुरमें गमन, त्रिपुराधिपका दीक्षा ग्रहण करना	४९४
१४.	गणेश तथा शिवगणोंका भयंकर युद्ध, पार्वतीद्वारा दो शक्तियोंका प्राकट्य, शक्तियोंका अद्भुत पराक्रम और शिवका कुपित होना	४६९	५.	मायादी यात्राद्वारा अपने धर्मका उपदेश, त्रिपुरासियोंका उसे स्वीकार करना, वेदधर्मके नष्ट हो जानेसे त्रिपुरमें अधर्मचरणकी प्रवृत्ति	४९७
१५.	विष्णु तथा गणेशका युद्ध, शिवद्वारा विशूलसे गणेशका सिर काटा जाना	४७०	६.	त्रिपुरधर्मसे के लिये देवताओंद्वारा भगवान् शिवकी स्तुति	४९९
१६.	पुत्रके वधसे कुपित जगदम्बाका अनेक शक्तियोंको उत्पन्न करना और उनके द्वारा प्रलय मचाया जाना, देवताओं और ऋषियोंका स्वतन्त्रद्वारा पार्वतीको प्रसन्न करना, शिवजीके आज्ञानुसार हाथीक भिर लाया जाना और उसे गणेशके धड़से जोड़कर उन्हें जीवित करना ..	४७६	७.	भगवान् शिवकी प्रसन्नताके लिये देवताओंद्वारा मन्त्र-जप, शिवका प्राकट्य तथा त्रिपुरविनाशके लिये दिव्य रथ आदिके निर्माणके लिये विष्णुजीसे कहना	५०२
१७.	पार्वतीद्वारा गणेशको वरदान, देवोंद्वारा उन्हें अप्रपूर्य माना जाना, शिवजीद्वारा गणेशको सर्वाध्यक्षपद प्रदान करना, गणेशचतुर्थीव्रतविधान तथा उसका माहात्म्य, देवताओंका स्वलोक-गमन	४७९	८.	विश्वकर्माद्वारा निर्मित सर्वदेवमय दिव्य रथका वर्णन	५०३
१८.	स्वामिकार्तिकेय और गणेशकी बाल-लीला, विवाहके विषयमें दोनोंका परस्पर विवाद, शिवजीद्वारा पृथ्वी-परिक्रमाका आदेश, कार्तिकेयका प्रस्थान, बुद्धिमान् गणेशजीका पृथ्वीरूप माता-पिताकी परिक्रमा और प्रसन्न शिवा-शिवद्वारा गणेशके प्रथम विवाहकी	४८१	९.	ब्रह्माजीको सारथी बनाकर भगवान् शंकरका दिव्य रथमें आरूढ़ होकर अपने गणों तथा देवसेनाके साथ त्रिपुर-वधके लिये प्रस्थान, शिवका पशुपति नाम पड़नेका कारण	५०५

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
१०.	भगवान् शिवका त्रिपुरपर सन्धान करना, गणेशजीका विच्छ उत्पस्थित करना, आकाशवाणीद्वारा बोधित होनेपर शिवद्वारा विघ्ननाशक गणेशका पूजन, अभिजित् मुहूर्तमें तीनों पुरोका एकत्र होना और शिवद्वारा बाणगिनसे सम्पूर्ण त्रिपुरको भस्म करना, मयदानवका बचा रहना.....	५०६	१३.	पार्वतीको प्राप्त करनेके लिये जलन्धरका शंकरके पास दूतप्रेषण, उसके बचनसे उत्पन्न क्रोधसे शम्भुके शूमध्यसे एक भयंकर पुरुषकी उत्पत्ति, उससे भयभीत जलन्धरके दूतका पलायन, उस पुरुषका कीर्तिमुख नामसे शिवगणोंमें प्रतिष्ठित होना तथा शिवद्वारपर स्थित रहना	५२४
११.	त्रिपुरदाहके अनन्तर भगवान् शिवके रौद्ररूपसे भयभीत देवताओंद्वारा उनकी स्तुति और उनसे भक्तिका वरदान प्राप्त करना	५०८	२०.	दूतके हाथा कैलासका वृतान्त जानकर जलन्धरका अपनी सेनाको युद्धका आदेश देना, भयभीत देवोंका शिवकी शरणमें जाना, शिवगणों तथा जलन्धरकी सेनाका युद्ध, शिवद्वारा कृत्याको उत्पन्न करना, कृत्याद्वारा शुक्राचार्यको छिपा लेना	५२६
१२.	त्रिपुरदाहके अनन्तर शिवभक्त मयदानवका भगवान् शिवकी शरणमें आना, शिवद्वारा उसे अपनी भक्ति प्रदानकर वितललोकमें निवास करनेकी आज्ञा देना, देवकाये सम्पन्नकर शिवजीका अपने लोकमें जाना..	५१०	२१.	नन्दी, गणेश, कार्तिकेय आदि शिवगणोंका कालनेमि, शुभ्य तथा निशुभ्यके साथ घोर संग्राम, वीरभद्र तथा जलन्धरका युद्ध, भयाकुल शिवगणोंका शिवजीको सारा वृतान्त बताना	५२८
१३.	बृहस्पति तथा इन्द्रका शिवदर्शनने स्थिते कैलासकी ओर प्रस्थान, सर्वज्ञ शिवका उनकी परीक्षा लेनेके लिये दिग्मार्ग जटाधारी रूप धारणकर मार्ग रोकना, कुद्ध इन्द्रद्वारा उनपर वज्रप्रहारकी चेष्टा, शंकरद्वारा उनकी भुजाको स्तम्भित कर देना, बृहस्पतिद्वारा उनकी स्तुति, शिवका प्रसन्न होना और अपनी नेत्राग्निको धार-समुद्रमें फेंकना	५१२	२२.	श्रीशिव और जलन्धरका युद्ध, जलन्धरद्वारा गान्धर्वी मायासे शिवको मोहितकर शीघ्र ही पार्वतीके पास पहुँचना, उसकी मायाको जानकर पार्वतीका अदृश्य हो जाना और भगवान् विष्णुको जलन्धरपत्नी वृन्दाके पास जानेके लिये कहना	५२८
१४.	क्षारसमुद्रमें प्रसिद्ध भगवान् शंकरकी नेत्राग्निसे समुद्रके पुत्रके रूपमें जलन्धरका प्राकृत्य, कालनेमिकी पुत्री वृन्दाके साथ उसका विवाह	५१४	२३.	विष्णुद्वारा माया उत्पन्नकर वृन्दाके स्वप्नके माध्यमसे मोहित करना और स्वयं जलन्धरका रूप धारणकर वृन्दाके पातिव्रतका हरण करना, वृन्दाद्वारा विष्णुको शाप देना तथा वृन्दाके तेजका पार्वतीमें विलीन होना.....	५३०
१५.	राहुके शिरश्छेद तथा समुद्रमन्थनके समयके देवताओंके छलको जानकर जलन्धरद्वारा कुद्ध होकर स्वर्गपर आक्रमण, इन्द्रादि देवोंकी पराय, अमरावतीपर जलन्धरका आधिपत्य, भयभीत देवताओंका सुमेरुकी युग्ममें छिपना	५१५	२४.	दैत्यराज जलन्धर तथा भगवान् शिवका घोर संग्राम, भगवान् शिवद्वारा चक्रसे जलन्धरका शिरश्छेदन, जलन्धरका तेज शिवमें प्रविष्ट होना, जलन्धर-वधसे जगत्में सर्वत्र शान्तिका विस्तार	५३२
१६.	जलन्धरसे भयभीत देवताओंका विष्णुके समीप जाकर स्तुति करना, विष्णुसहित देवताओंका जलन्धरकी सेनाके साथ भयंकर युद्ध.....	५१८	२५.	जलन्धरवधसे प्रसन्न देवताओंद्वारा भगवान् शिवकी स्तुति	५३५
१७.	विष्णु और जलन्धरके युद्धमें जलन्धरके पराक्रमसे सन्तुष्ट विष्णुका देवों एवं लक्ष्मीसहित उसके नगरमें निवास करना	५२०	२६.	विष्णुजीके मोहभंगके लिये शंकरजीकी प्रेरणासे देवोंद्वारा मूलप्रकृतिकी स्तुति, मूलप्रकृतिद्वारा आकाशवाणीके रूपमें देवोंको आश्वासन, देवताओंद्वारा विणुणात्मिका देवियोंका स्तवन, विष्णुका भोगनाश, धात्री (आँवला), मालती तथा तुलसीकी उत्पत्तिका आख्यान	५३७
१८.	जलन्धरके आधिपत्यमें रहनेवाले दुखी देवताओंद्वारा शंकरकी स्तुति, शंकरजीका देवर्णी नारदको जलन्धरके पास भेजना, वहाँ देवोंको आश्वस्त करके नारदजीका जलन्धरकी सभामें जाना, उसके ऐश्वर्यको देखना तथा पार्वतीकी सीन्दर्यका वर्णनकर उसे प्राप्त करनेके लिये जलन्धरको परामर्श देना	५२२	२७.	शंखचूड़ीकी उत्पत्तिकी कथा	५४९
१९.	शंखचूड़ीकी पुर्क-क्षेत्रमें उत्पत्त्य, ब्रह्मद्वारा उसे वरकी प्राप्ति, ब्रह्माकी प्रेरणासे शंखचूड़का तुलसीसे विवाह	५२३	२८.	शंखचूड़का तुलसीसे विवाह	५४३

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या
३१.	शंखचूड़का राज्यपदपर अभियेक, उसके द्वारा देवोंपर विजय, दुखी देवोंका ब्रह्माजीके साथ वैकुण्ठगमन, विष्णुद्वारा शंखचूड़के पूर्वजन्मका वृत्तान्त बताना और विष्णु तथा ब्रह्माका शिवलोक-गमन	५४५	उत्पत्ति तथा माहात्म्यकी कथा.....		५६५
३०.	ब्रह्मा तथा विष्णुका शिवलोक पहुँचना, शिवलोककी तथा शिवसभाकी शोभाका वर्णन, शिवसभाके मध्य उन्हें अप्यासाहित भगवान् शिवके दिव्यस्वरूपका दर्शन और शंखचूड़से प्राप्त कष्टोंसे मुकिके लिये प्रार्थना	५४७	४२. अन्धकासुरकी उत्पत्तिकी कथा, शिवके वरदानसे हिरण्याक्षद्वारा अन्धकको पुत्ररूपमें प्राप्त करना, हिरण्याक्षद्वारा पृथ्वीको पाताललोकमें ले जाना, भगवान् विष्णुद्वारा बाराहरूप धारणकर हिरण्याक्षका वधकर पृथ्वीको यथास्थान स्थापित करना	५६६	
३१.	शिवद्वारा ब्रह्मा-विष्णुको शंखचूड़का पूर्ववृत्तान्त बताना और देवोंको शंखचूड़वधका आश्वासन देना.....	५४८	४३. हिरण्यकशिपुकी तपस्या, ब्रह्मासे वरदान पाकर उसका अत्याचार, भगवान् नृसिंहद्वारा उसका वध और प्रह्लादको राष्ट्रप्राप्ति		५७०
३२.	भगवान् शिवके द्वारा शंखचूड़को समझानेके लिये गन्धर्वराज चित्ररथ (पुष्पदन्त)-को दूतके रूपमें भेजना, शंखचूड़द्वारा सन्देशकी अवहेलना और युद्ध करनेका अपना निश्चय बताना, पुष्पदन्तका वापस आकर सारा वृत्तान्त शिवसे निवेदित करना	५४९	४४. अन्धकासुरकी तपस्या, ब्रह्माद्वारा उसे अनेक बरोंकी प्राप्ति, त्रिलोकीको जीतकर उसका स्वेच्छाचारमें प्रवृत्त होना, मन्त्रियोंद्वारा पावर्तीके सौन्दर्यको सुनकर मुग्ध हो शिवके पास सन्देश भेजना और शिवका उत्तर सुनकर युद्ध हो युद्धके लिये उद्योग करना	५७२	५७०
३३.	शंखचूड़से युद्धके लिये अपने गणोंके साथ भगवान् शिवका प्रस्थान	५५१	४५. अन्धकासुरका शिवकी सेनाके साथ युद्ध		५७६
३४.	तुलसीसे विदा लेकर शंखचूड़का युद्धके लिये सर्वैन्य पुष्पभद्रा नदीके तटपर पहुँचना	५५४	४६. भगवान् शिव और अन्धकासुरका युद्ध, अन्धककी मायासे उसके रक्षसे अनेक अन्धकण्ठोंकी उत्पत्ति, शिवकी प्रेरणासे विष्णुका कालीरूप धारणकर दानवोंके रक्का पान करना, शिवद्वारा अन्धकको अपने क्रिश्लूमें लटका लेना, अन्धककी स्तुतिसे प्रसन्न हो शिवद्वारा उसे गाणपत्य पद प्रदान करना	५७८	
३५.	शंखचूड़का अपने एक बुद्धिमान् दूतको शंकरके पास भेजना, दूत तथा शिवकी वार्ता, शंकरका सन्देश लेकर दूतका वापस शंखचूड़के पास आना	५५५	४७. शुक्राचार्यद्वारा युद्धमें भेर हुए दैत्योंके संजीवनी-विद्यासे जीवित करना, दैत्योंका युद्धके लिये पुनः उद्योग, नन्दीश्वरद्वारा शिवको यह वृत्तान्त बताना, शिवकी आज्ञासे नन्दीद्वारा युद्धस्थलसे शुक्राचार्यको शिवके पास लाना, शिवद्वारा शुक्राचार्यको निगलना ..	५८१	
३६.	शंखचूड़को उद्येश्यकर देवताओंका दानवोंके साथ महासंग्राम	५५७	४८. शुक्राचार्यकी अनुपस्थितिसे अन्धकादि दैत्योंका दुखी होना, शिवके उदरमें शुक्राचार्यद्वारा सभी लोकोंतथा अन्धकासुरके युद्धको देखना और फिर शिवके शुक्ररूपमें बाहर निकलना, शिव-पावर्तीका उन्हें पुत्ररूपमें स्वीकारकर विदा करना	५८३	
३७.	शंखचूड़के साथ कार्तिकेय आदि महावीरोंका युद्ध	५५८	४९. शुक्राचार्यद्वारा शिवके उदरमें जपे गये मन्त्रका वर्णन, अन्धकद्वारा भगवान् शिवको नामस्पी स्तुति-प्रार्थना, भगवान् शिवद्वारा अन्धकासुरको जीवनदानपूर्वक गाणपत्य पद प्रदान करना	५८५	
३८.	श्रीकालीका शंखचूड़के साथ महान् युद्ध, आकाशवाणी सुनकर कालीका शिवके पास आकर युद्धका वृत्तान्त बताना	५६०	५०. शुक्राचार्यद्वारा काशीमें शुक्रेश्वर लिंगकी स्थापनाकर उनकी अराधना करना, मूर्त्युट्क स्तोत्रसे उनका स्तवन, शिवजीका प्रसन्न होकर उन्हें मृतसंजीवनी-विद्या प्रदान करना और ग्रहोंके मध्य प्रतिष्ठित करना	५८७	
३९.	शिव और शंखचूड़के महाभयंकर युद्धमें शंखचूड़के सैनिकोंके संहरका वर्णन	५६१			
४०.	शिव और शंखचूड़का युद्ध, आकाशवाणीद्वारा शंकरको युद्धसे वित्त करना, विष्णुका ब्राह्मणरूप धारणकर शंखचूड़का कवच माँगना, कवचहीन शंखचूड़का भगवान् शिवद्वारा वध, सर्वत्र हृपौल्त्तास	५६३			
४१.	शंखचूड़का रूप धारणकर भगवान् विष्णुद्वारा तुलसीके शीलका हरण, तुलसीद्वारा विष्णुको पापाण होनेका शाप देना, शंकरजीद्वारा तुलसीको सान्त्वना, शंख, तुलसी, गण्डकी एवं शालग्रामकी	५६३			

अध्याय	विषय	पृष्ठ-संख्या	
५१.	प्रद्वादकी वंशपरम्परामें बलिपुत्र बाणसुरकी उत्पत्तिकी कथा, शिवभक्त बाणासुरद्वारा ताण्डव नृत्यके प्रदर्शनसे शंकरको प्रसन्न करना, वरदानके रूपमें शंकरका बाणासुरकी नगरीमें निवास करना, शिव-पार्वतीका विहार, पार्वतीद्वारा बाणपुरी ऊपरको वरदान	५८९	
५२.	अभिमानी बाणासुरद्वारा भगवान्-शिवसे युद्धकी याचना, बाणपुरी ऊपरके गतिके समय स्वप्नमें अनिरुद्धके साथ मिलन, चित्रलेखाद्वारा योगबलसे अनिरुद्धका द्वारकासे अपहरण, अन्तःपुरमें अनिरुद्ध और ऊपरका मिलन तथा द्वारपालोद्वारा यह समाचार बाणासुरको बताना	५९२	
५३.	कुद्ध बाणासुरका अपनी सेनाके साथ अनिरुद्धपर आक्रमण और उसे नागपाशमें बाँधना, दुग्धके स्वप्नद्वारा अनिरुद्धका बन्धनमुक्त होना	५९४	
५४.	नारदजीद्वारा अनिरुद्धके बन्धनका समाचार पाकर श्रीकृष्णकी शोणितपुरपर चढाई, शिवके साथ उनका घोर युद्ध, शिवकी आज्ञासे श्रीकृष्णका उन्हें जृमणाल्यसे मोहित करके बाणासुरकी सेनाका संहार करना	५९६	
५५.	भगवान्-कृष्ण तथा बाणासुरका संग्राम, श्रीकृष्णद्वारा बाणकी भुजाओंका काटा जाना, सिर काटनेके लिये		
५६.	उद्धत हुए श्रीकृष्णको शिवका रोकना और उन्हें समझाना, बाणका गर्वापहरण, श्रीकृष्ण और बाणासुरकी मित्रता, ऊपर-अनिरुद्धको लेकर श्रीकृष्णका द्वारका आना	५९९	
५७.	बाणासुरका ताण्डवनृत्यद्वारा भगवान्-शिवको प्रसन्न करना, शिवद्वारा उसे अनेक मनोऽभिलाषित वरदानोंकी प्राप्ति, बाणासुरकृत शिवस्तुति	६०१	
५८.	महिषासुरके पुत्र गजासुरकी तपस्या तथा ब्रह्माद्वारा बरप्राप्ति, उन्मत्त गजासुरद्वारा अत्याचार, उसका काशीमें आना, देवताओंद्वारा भगवान्-शिवसे उसके वधकी प्रार्थना, शिवद्वारा उसका वध और उसकी प्रार्थनासे उसका चर्म धारणकर 'कृतिवासा' नामसे विख्यात होना एवं कृतिवासेश्वर लिंगकी स्थापना करना	६०२	
५९.	काशीके व्याश्रेश्वर लिंग-माहात्म्यके सन्दर्भमें दैत्य दुर्दुषिणिर्हादिके वधकी कथा	६०४	
६०.	काशीके कन्दुकेश्वर शिवलिंगके प्रादुर्भावमें पार्वती-द्वारा विल एवं उत्पल दैत्योंके वधकी कथा, रुद्र-संहिताका उपसंहार तथा इसका माहात्म्य	६०७	
	६१.	नम्र-निवेदन एवं क्षमा-प्रार्थना	६०९

चित्र-सूची

(रंगीन चित्र)

विषय	पृष्ठ-संख्या
१- शिव-परिवार	आवरण-पृष्ठ प्रथम
२- तपस्यात पार्वतीको भगवान्-शिवका दर्शन ...” ”	द्वितीय
३- देवताओं और मुनियोद्वारा शिवस्तुति	३
४- सतीजीका आश्चर्य	४
५- गुफामें गौरी-शंकर	५
६- पार्वतीजी और सप्तर्षि	६
७- श्रीशिवजीकी विकट बरत	७
८- मयूरवाहन भगवान्-कार्तिकेय	८
९- श्रीनारायणजीके नाभिकमलसे ब्रह्मजीका प्राकट्य	९
१०- वरवेष्यमें भगवान्-शिव	१०
११- वधूवेष्यमें भगवती पार्वती	१०

(सादे चित्र)

१- माता-पिताका पार्वतीको तपके लिये स्त्रीकृति देना ..	४५
२- गणेश-परिवार	५४
३- श्रीसूतजीद्वारा शौनकजीको शिवमहापुराणकी महिमा बताना	६१
४- शिवपुणके कथाश्रवणसे ब्राह्मण देवराजको शिवलोक	
ले जानेके लिये विमान लेकर शिवपार्वदोंका उपस्थित होना	६५
५- चंचुलाका गोकर्णक्षेत्रमें शिवकथाका ब्रवण करना	६७
६- शिवकथाश्रवणसे चंचुलाको शिवलोककी प्राप्ति	७०

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
७- पार्वतीद्वारा गन्धर्वराज तुबुर्से चंचुलाके पति बिन्दुगको शिवपुराणकी कथा सुनानेके लिये कहना.....	७२	३०- कैलासपर ध्यानमग्न भगवान् शिव	२१६
८- विष्वपर्वतपर तुम्बुरुद्वारा पिशाचयोनिग्राप बिन्दुगको शिवपुराणकी कथा सुनाना	७३	३१- नारदजीद्वारा श्रीब्रह्माजीसे शिवचरित्र सुनानेकी प्रार्थना	२१७
९- सरस्वतीके टटपर स्थित श्रीसनकुमारद्वारा व्यासजीको शिवतत्त्वका उपदेश देना	८६	३२- ब्रह्माजीके मनसे देवी सन्ध्याका प्राकट्य	२२०
१०- ब्रह्मा और विष्णुके मध्य अग्निस्तम्भके रूपमें ज्योतिर्लिंगका प्रकट होना	९०	३३- मरीचि आदि ऋषियोंद्वारा कामदेवके अनेक नाम रखना	२२२
११- हिमालयकी एक गुफामें नारदजीद्वारा तपस्या करना	१५९	३४- दश्खाद्वारा अपनी कन्या रतिको कामदेवको साँपना	२२५
१२- नारदजीद्वारा भगवान् विष्णुसे कामविजयका वृत्तान्त बताना	१६१	३५- तेजस्वी ब्रह्मचारीके रूपमें वसिष्ठजीका सन्ध्याके समीप गमन	२२९
१३- राजा शीलनिधिका अपनी पुत्रीके द्वारा नारदजीको प्रणाम करवाना	१६२	३६- तपस्यारात सन्ध्याद्वारा अपने आग्रह भगवान् शिवकी स्तुति	२३०
१४- शीलनिधिकी कन्याका जयमाल लेकर स्वयंवर-सभामें प्रवेश	१६४	३७- मेधातिथिको यज्ञमिसे कन्यारूपमें प्रकट अरुचतीकी प्राप्ति	२३३
१५- वानरसुंहवाले नारदजीका रुद्रगणोंको शाप देना ...	१६४	३८- प्रजापति दक्षके समक्ष जगदम्बा शिवका प्राकट्य	२४५
१६- मायामुक नारदजीद्वारा भगवान् विष्णुके चरणोंमें प्रणाम	१६६	३९- कुपित दक्षका नारदजीकी निन्दा करना	२४८
१७- नारदजीका ब्रह्माजीसे शिवतत्त्वके विषयमें पूछना ..	१७०	४०- वीरणीसहित प्रजापति दक्षका जगदम्बाकी स्तुति करना	२५०
१८- सदाशिवद्वारा स्वरूपभूता शक्ति (अविवका)-का प्रकटीकरण	१७२	४१- विष्णु आदि देवताओंका कैलास पहुँचकर भगवान् शिवकी स्तुति करना	२५३
१९- भगवान् शिवद्वारा अपने वामभागसे विष्णुको प्रकट करना	१७३	४२- सतीका अपनी सखीद्वारा मनोवांछित वरकी प्राप्तिकी बात माता-पिताको बतलाना	२५९
२०- भगवान् शिवद्वारा ब्रह्माजीको विष्णुको साँपना	१८३	४३- भगवान् शिवकी विवाह-यात्रा	२६२
२१- ब्रह्माजीका देवताओंके साथ क्षीरसागर पहुँचना ..	१८८	४४- विवाहके अनन्तर सतीसहित भगवान् शिवकी बरहतक द्विमालयके लिये प्रस्थान	२६८
२२- कैलासपर विराजमान पंचमुख भगवान् सदाशिव ..	१९४	४५- भगवान् शम्भुद्वारा अनेक कथाएं सुनाकर सतीके शोकको दूर करना	२८२
२३- ब्रह्माजीकी भौंहों तथा नासिकके मध्यभागसे भगवान् शिवका अधीनारीश्वररूपमें प्राकट्य	२०२	४६- नन्दीश्वद्वारा शिवनिन्दक दक्षको फटकारना	२८४
२४- शिवद्वारा अपने समान अनेक रुद्रगणोंकी सूर्णि	२०२	४७- सदाशिवद्वारा कुद्द नन्दीश्वरको शान्त करना	२८५
२५- ब्रह्माजीसे मनु और शतरूपाका प्राकट्य	२०३	४८- वृषभपर आरुद्ध हो प्रमधगणोंको लेकर सतीका अपने पिता दक्षके वरकी ओर प्रस्थान	२८९
२६- गुणनिधिका नैवेद्य चुरानेके लिये शिवपन्दिरमें प्रवेश	२०८	४९- महिन्य भृगुद्वारा यज्ञकृष्णसे प्रकट ऋषिगणोंको देखकर भव्यभीत हो शिवगणोंका भागना	२९४
२७- धर्मराजद्वारा अपने गणोंको शिवभक्तोंका माहात्म्य बताना	२१०	५०- भगवान् शिवद्वारा पट्टी गयी जटासे वीरभद्र तथा महाकालीका उत्पन्न होना	२९७
२८- कलिंगराज दमद्वारा ग्रामाध्यक्षोंको शिवालयोंमें दीप-प्रज्वालनका आदेश	२११	५१- दधीचिकी तपस्यासे प्रसन्न भगवान् शिवका उन्हें दर्शन देना	३११
२९- त्रिपुर-विनाशके लिये देवताओंद्वारा शंकरजीकी स्तुति	२१५	५२- भगवान् शिवका देवताओंके साथ दक्षके यज्ञ-विष्वंसका दृश्य देखना	३२०
		५३- शिवजी द्वारा दक्षके धड्में बकरेका सिर लगाना ..	३२१

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
५४-जगन्माता देवी दुर्गा	३२०	उपदेश देना	४३६
५५-मेनाकी भक्तिसे प्रसन्न जगद्वाका प्रकट होना ..	३३३	७४-कार्तिकेय और तारकासुरका युद्ध	४६०
५६-नारदमुनिका जगद्वाका हाथ देखना	३३८	७५-तारकवधके अनन्तर देवताओंके साथ कार्तिकेयका विमानमें बैठकर कैलासकी ओर प्रस्थान	४६६
५७-गिरिप्रिया मेना और हिमालयका संवाद	३४१	७६-पार्वतीद्वारा अपने शरीरके मैलसे पुत्ररूपमें गणेशको उत्पन्न करना	४६८
५८-गिरिराज हिमवानद्वारा भगवान् शिवकी स्तुति	३५४	७७-शंकरजीद्वारा त्रिशूलसे गणेशका शिरश्छेद करना	४७६
५९-हिमालयद्वारा भगवान् शिवसे अपनी युक्ती पार्वतीको अपनी सेवामें रखनेकी प्रार्थना करना	३४७	७८-देवताओंद्वारा अभिमन्त्रित जलसे गणेशको जीवित करना	४७८
६०-देवराज इन्द्र और कामदेवका संवाद	३४६	७९-शंकर आदि सभी देवताओंद्वारा गणेशजीकी पूजाकर उहें सर्वाध्यक्षपद प्रदान करना	४८०
६१-रुद्रकी नेत्राग्निसे कामदेवका भस्म होना	३६०	८०-गणेशजीद्वारा पृथ्वीरूप माता-पिताकी परिक्रमा करना	४८३
६२-शिवकी क्रोधाग्निको अश्वके रूपमें परिवर्तितकर ब्रह्माजीका सागरके समीप जाना	३६२	८१-सिद्धि और बुद्धिके साथ गणेशजीका विवाह	४८४
६३-पार्वतीकी तपस्याकी परीक्षाके लिये आगत सप्तर्षियों और पार्वतीका संवाद	३६७	८२-ब्रौंचपर्वतपर तपस्यारत कुमारकार्तिकेय	४८५
६४-पार्वतीकी परीक्षाके लिये शिवका जटाधारी ब्राह्मणके रूपमें उपस्थित होना	३७१	८३-तारकासुरके तीनों पुत्र-तारकाश, विद्युत्माली तथा कमलाशको बर देनेके लिये ब्रह्माजीका उपस्थित होना	४८८
६५-शिवद्वारा नर्तकवेष धारणकर मेनका आदिके समीप नृत्य करना	३८५	८४-बिष्णु आदि देवताओंके समक्ष भगवान् शिवका आना	४००
६६-ब्राह्मणवेष धारणकर शिवका हिमालयके गुहमें जाना	३८७	८५-भगवान् शिवद्वारा पाशुपतास्त्रसे त्रिपुरको दग्ध करना	४०७
६७-सप्तर्षियोंद्वारा हिमालयको गजा अनरण्यका आख्यान सुनाकर पार्वतीका विवाह शिवसे करनेकी प्रेरणा देना	३९४	८६-शंखचूड़का बदरिकाश्रम जाकर तपस्यारत तुलसीसे मधुर वार्तालाप	४४३
६८-शिवके रूपको देखकर मेनाका विलाप तथा अपनी युक्ती पार्वतीको फटकारना	४१४	८७-विष्णुद्वारा बुद्ध ब्राह्मणका वेष धारणकर शंखचूड़से कवच ग्रहण करना	४४४
६९-हिमालयद्वारा शिवतत्त्वका प्रतिपादनकर मेनाको समझना	४१६	८८-पार्वतीसहित भगवान् शंखद्वारा हिरण्याशको अन्धकासुर नामक पुत्र प्रदान करना	४६९
७०-भगवान् शिवद्वारा परम सुन्दर दिव्य रूपको प्रकट करना	४१९	८९-श्रीकृष्णद्वारा बाणासुरकी भुजाओंका काटना और उसका सिर काटनेके लिये उद्यत होनेपर शंकरजीका उहें समझना	४००
७१-रतिका भगवान् शिवसे अपने पति कामदेवको जीवित करनेकी प्रार्थना करना	४३०	९०-भगवान् शिवद्वारा व्याप्रसूपी दैत्यका वध	४०६

नमः शिवाय "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय"
 "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय"
 "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय"
 "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय"
 "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय"
 "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय" "नमः शिवाय"

स्तुति-प्रार्थना

अष्टमूर्तिस्तव

[संजीवनीविद्या प्रदान करनेवाली स्तुति]

यहर्षि भृगुके वंशमें उत्पन्न श्रीशुक्राचार्य महान् शिवभक्तोंमें परिगणित हैं। उन्होंने काशीपुरीमें आकर एक शिवलिंगकी स्थापना की, जो शुक्रेश्वर नामसे प्रसिद्ध हुआ। भगवान् शिवलिंगाथका ध्यान करते हुए उन्होंने बहुत कालतक घोर तप किया। उनकी उग्र उत्पस्यासे प्रसन्न हो भगवान् शिव लिंगसे साक्षात् प्रकट हो गये। भगवान्का दर्शनकर शुक्राचार्य हर्षसे पुलकित हो उठे और उस समय उन्होंने हर्ष-गदगद वाणीसे जिस स्तोत्रद्वारा भगवान् शिवका स्तवन किया, वही स्तोत्र अष्टमूर्तिस्तव अथवा पूर्वार्थकस्तोत्र कहलाता है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, यजमान (क्षेत्रज्ञ या आत्मा), चन्द्रमा और सूर्य—इन आठोंमें अधिष्ठित शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, महादेव और ईशान—ये शिवकी अष्टमूर्तियोंके नाम हैं। आठ इलोकोंवाली इस स्तुतिके एक-एक इलोकमें पृथक्-पृथक् स्वप्नसे उपर्युक्त एक-एक स्वस्त्रपकी बन्दना है। शुक्राचार्यकी इस स्तुतिसे मृत्युंजय भगवान् शिव इन्होंने प्रसन्न हुए कि उन्होंने मृत व्यक्तियोंको भी जीवित करनेवाली संजीवनीविद्या उन्हें दे दी, जिसके बलपर शुक्राचार्य जिसको चाहते थे, उसे जीवित कर देते थे। भगवान् शिवके अनुग्रहसे ही शुक्र ग्रहोंमें प्रतिष्ठित हुए, सभी प्रकारका सुभ फल देनेमें समर्थ हुए और भगवान् शिव-पार्वतीके प्रिय पुत्ररूपमें उनकी प्रसिद्धि हुई। श्रीशिवमहापुराणमें ग्राप्त शुक्राचार्यद्वारा की गयी वह स्तुति इस प्रकार है—

त्वं भाभिराभिरभिभूय तमः समस्त-
 मस्तं नद्यस्यभिमत्तानि निशाच्चराणाम् ।
 देवीष्वसे दिवमणे गगने हिताय
 लोकत्रयस्य जगदीश्वर तन्मस्ते ॥

हे जगदीश्वर! आप अपने तेजसे समस्त अन्धकारको दूरकर रातमें विचरण करनेवाले राक्षसोंके मनोरथोंको नष्ट कर देते हैं। हे दिनमणे! आप त्रिलोकीका हित करनेके लिये आकाशमें सूर्यरूपसे प्रकाशित हो रहे हैं, आपको नमस्कार है।

लोकेऽतिवेलमतिवेलमहायहोभि-
 निर्भासि कौच गगनेऽखिललोकेनेत्रः ।
 विद्रविताखिलतमाः सुतमो हिमांशो
 पीयूषपूरपरिपूरित तन्मस्ते ॥

हे हिमांशो! आप पृथ्वी तथा आकाशमें समस्त प्राणियोंके नेत्र बनकर चन्द्ररूपसे विराजमान हैं और लोकमें व्याप्त अन्धकारका नाश करनेवाले एवं अमृतकी किरणोंसे युक्त हैं। हे अमृतमय! आपको नमस्कार है।

त्वं पावने पथि सदा गतिरप्युपास्यः
 कस्त्वा विना भुवनजीवन जीवतीह ।

स्तव्यप्रभंजनविवर्द्धितसर्वजंतोः

संतोषिताहिकुलसर्वग वै नमस्ते ॥

हे भुवनजीवन! आप पावनपथ—योगमार्गका आश्रय लेनेवालोंकी सदा गति तथा उपास्यदेव हैं। इस जगत्में आपके बिना कौन जीवित रह सकता है। आप वायुरूपसे समस्त प्राणियोंका वर्धन करनेवाले और सर्पकुलोंको सन्तुष्ट करनेवाले हैं। हे सर्वव्यापिन्! आपको नमस्कार है।

विश्वैकपावक नतावक पावकैक-
 शर्ते ऋते मृतवतामृतदिव्यकार्यम् ।

प्राणिष्वदो जगदहो जगदंतरात्म- ॥

स्त्वं पावकः प्रतिपदं शमदो नमस्ते ॥

हे विश्वके एकमात्र पावनकर्ता! हे शरणगतरक्षक! यदि आपकी एकमात्र पावक (पवित्र करनेवाली एवं दाहिका) शक्ति न रहे, तो मरनेवालोंको योक्ष प्रदान कौन करे? हे जगदन्तरात्मन्! आप ही समस्त प्राणियोंके भीतर वैश्वानर नामक पावक (अग्निरूप) हैं और उन्हें पग-पगपर शान्ति प्रदान करनेवाले हैं, आपको नमस्कार है।

पानीयरूप परमेश जगत्पवित्र
 चित्रं विचित्रसुचरित्रकरोऽसि नूनम् ।

विश्वं पवित्रमपलं किल विश्वनाथ

पानीयगाहनत एतदतो नतोऽस्मि ॥

हे जलरूप ! हे परमेश ! हे जगत्पवित्र ! आप निश्चय ही विचित्र उत्तम चरित्र करनेवाले हैं । हे विश्वनाथ ! आपका यह अमल पानीय रूप अवगाहनमात्रसे विश्वको पवित्र करनेवाला है, अतः आपको नमस्कार करता हूँ ।

आकाशस्तपद्विहितरतावकाश-

दानाद्विक्स्वरामिहश्वर विश्वप्रेतत् ॥

त्वतः सदा सदय संश्वसिति स्वभावात्

संकोचयेति भवतोऽस्मि नतस्ततस्वाम् ॥

हे आकाशरूप ! हे ईश्वर ! यह संसार बाहर एवं भीतरसे अवकाश देनेके ही कारण विकसित है, हे दयामय ! आपसे ही यह संसार स्वभावतः सदा श्वास लेता है और आपसे ही यह संकोचको प्राप्त होता है, अतः आपको प्रणाम करता हूँ ।

विश्वंभरात्मक विभर्षि विभोऽत्र विश्वं

को विश्वनाथ भवतोऽन्यतपत्पत्तमोऽरः ।

स त्वं विनाशय तमो मम चाहिभूष

स्तव्यात्परः परपरं प्रणातस्तस्तस्वाम् ॥

हे विश्वमध्यरात्मक [पृथ्वीरूप] ! हे विभोः ! आप ही इस जगत्का भरण-पोषण करते हैं । हे विश्वनाथ !

आपके अतिरिक्त दूसरा कौन अन्धकारका विनाशक है । हे अहिभूषण ! मेरे अज्ञानरूपी अन्धकारको आप दूर करें, आप स्तवनीय पुरुषोंमें सबसे श्रेष्ठ हैं, अतः आप परात्परको मैं नमस्कार करता हूँ ।

आत्मस्वरूप तव रूपपरंपराभि-

राभिस्ततं हर चराचरस्त्रूपमेतत् ।

सर्वात्मनिलय प्रतिस्त्रूपरूप

नित्यं नतोऽस्मिं परमात्मजनोऽष्टमूर्ते ॥

हे आत्मस्वरूप ! हे हर ! आपकी इन रूप-परम्पराओंसे यह सारा चराचर जगत् विस्तारको प्राप्त हुआ है । सबकी अन्तरात्मामें निवास करनेवाले हैं प्रतिस्त्रूप ! हे अष्टमूर्ते ! मैं भी आपका जन हूँ, मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूँ ।

इत्यष्टमूर्तिभिरिमाभिरबंधुबंधो

युक्तः करोषि खलु विश्वजनीनमूर्ते ।

एतत्ततं सुविततं प्रणतप्रणीत

सर्वार्थसार्थपरमार्थं ततो नतोऽस्मि ॥

हे दीनबन्धो ! हे विश्वजनीनमूर्ते ! हे प्रणतप्रणीत (शरणागतोंके रक्षक) ! हे सर्वार्थसार्थपरमार्थ ! आप इन अष्टमूर्तियोंसे युक्त हैं और यह विस्तृत जगत् आपसे व्याप्त है, अतः मैं आपको प्रणाम करता हूँ । [रुद्रसंहिता, युद्धखण्ड]

द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्मरणमाहात्म्य

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम् । उज्जयिन्यां महाकालमोक्ते परमेश्वरम् ॥

केदारं हिमवत्युष्टे डाकिन्यां भीमशंकरम् । वाराणस्यां च विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे ॥

वैद्यनाथं चिताभूमौ नागेशं दारुकावने । सेतुबंधे च रामेशं घुश्मेशं च शिवालये ॥

द्वादशैतानि नामानि प्रातस्तथाय यः पठेत् । सर्वापापविनिर्मुक्तः सर्वसिद्धिफलं लभेत् ॥

यं यं कामपेश्वैव पठिष्यन्ति नरोत्तमाः । प्राप्यन्ति कामं तं तं हि परत्रेह मुनीश्वराः ॥

ये निष्कामतथा तानि पठिष्यन्ति शुभाशयाः । तेषां च जननीगर्भे वासी नैव भविष्यति ॥

सौराष्ट्रे सोमनाथ, श्रीशैलपर मल्लिकार्जुन, उज्जयिनीमें महाकाल, ॐकार-क्षेत्रमें परमेश्वर, हिमालयके शिखरपर केदार, डाकिनीमें भीमशंकर, वाराणसीमें विश्वेश्वर, गौतमी नदीके टटपर त्र्यम्बकेश्वर, चिताभूमिमें वैद्यनाथ, दारुकवनमें नागेश, सेतुबन्धमें रामेश्वर तथा शिवालयमें घुश्मेश्वर [नामक ज्योतिर्लिङ्ग] हैं । जो प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर इन बारह नामोंका पाठ करता है, उसके सभी प्रकारके पाप छूट जाते हैं और वह सम्पूर्ण सिद्धियोंके फलको प्राप्त कर लेता है । हे मुनीश्वरो ! उत्तम पुरुष जिस-जिस मनोरथकी अपेक्षा करके इन बारह नामोंका पाठ करेंगे, वे उस-उस मनोकामनाको इस लोकमें तथा परलोकमें अवश्य प्राप्त करेंगे । जो शुद्ध अन्तःकरणवाले पुरुष निष्कामभावसे इन नामोंका पाठ करेंगे, उन्हें [पुनः] माताके गर्भमें निवास नहीं करना पड़ेगा । [शिवपुराण, कोटिरुद्रसंहिता]

श्रीशिवमहापुराणसूक्तिसुधा

परोपकारसदृशो नास्ति धर्मोऽपरः खलु॥
परोपकारके समान दूसरा कोई धर्म नहीं है।

[विद्येश्वरसंहिता १ । ३६]

पुण्यक्षेत्रे कृतं पुण्यं बहुधा ऋद्धिमृच्छति ।
पुण्यक्षेत्रे कृतं पापं महदण्डपि जायते ॥

पुण्यक्षेत्रमें किया हुआ थोड़ा-सा पुण्य भी अनेक प्रकारसे वृद्धिको प्राप्त होता है तथा वहाँ किया हुआ छोटा-सा पाप भी महान् हो जाता है।

[विद्येश्वरसंहिता १२ । ३६]

धर्मार्जितार्थभोगेन वैराग्यमुपजायते ॥
विपरीतार्थभोगेन राग एव प्रजायते ॥

धर्मपूर्वक उपार्जित धनसे जो भोग प्राप्त होता है, उससे एक दिन अवश्य वैराग्यका उदय होता है। धर्मके विपरीत अधर्मसे उपार्जित धनके द्वारा जो भोग प्राप्त होता है, उससे भोगोंके प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है।

[विद्येश्वरसंहिता १३ । ५१-५२]

अधर्मो हिंसिकारूपो धर्मस्तु सुखरूपकः ।
अधर्माद् दुःखमाप्नोति धर्मादौ सुखमेधते ॥
विद्याद् दुर्विज्ञितो दुःखं सुखं विद्यात्सुविज्ञितः ।
धर्मार्जिनमतः कुर्याद्भग्नमोक्षप्रसिद्धये ॥

अधर्म हिंसा (दुःख)-रूप है और धर्म सुखरूप है। मनुष्य अधर्मसे दुःख पाता है और धर्मसे सुख एवं अभ्युदयका भागी होता है। दुराचारसे दुःख प्राप्त होता है और सदाचारसे सुख। अतः भोग और मोक्षकी सिद्धिके लिये धर्मका उपार्जन करना चाहिये।

[विद्येश्वरसंहिता १३ । ५७-५८]

आत्मवित्तं त्रिधा कुर्याद्विवृद्ध्यात्मभोगतः ।
नित्यं नैमित्तिकं काप्यं कर्म कुर्यात् धर्मतः ॥

अपने धनके तीन भाग करे—एक भाग धर्मके लिये, दूसरा भाग वृद्धिके लिये तथा तीसरा भाग अपने उपयोगके लिये। नित्य, नैमित्तिक और काप्य—ये तीनों प्रकारके कर्म धर्मार्थ रखे हुए धनसे करे। [विद्येश्वरसंहिता १३ । ७२]

न वदेत्सर्वजन्तुनां हृदि रोषकरं ब्रूधः ।
विद्वान् पुरुष ऐसी बात न कहे, जो किसी भी प्राणीके हृदयमें रोष पैदा करनेवाली हो।

[विद्येश्वरसंहिता १३ । ८०]

येन केनाप्युपायेन हाल्यं च यदि चा ब्रह्म ।
देवतार्पणबुद्ध्या च कृतं भोगाय कल्पते ॥
तपश्चर्या च दानं च कर्तव्यमुभयं सदा ।

जिस किसी भी उपायसे थोड़ा हो या बहुत, देवतार्पण-बुद्धिसे जो कुछ भी दिया अथवा किया जाय, वह दान या सत्कर्म भोगोंकी प्राप्ति करानेमें समर्थ होता है। तपस्या और दान—ये दो कर्म मनुष्यको सदा करने चाहिये। [विद्येश्वरसंहिता १५ । ५८-५९]

पूजया शिवभक्तस्य शिवः प्रीततरो भवेत् ।
शिवस्य शिवभक्तस्य भेदो नास्ति शिवो हि सः ॥

शिवभक्तकी पूजासे भगवान् शिव बहुत प्रसन्न होते हैं। शिव और उनके भक्तमें कोई भेद नहीं है। वह साक्षात् शिवस्वरूप ही है। [विद्येश्वरसंहिता १७ । १३१]
दुःखस्य मूलं व्याधिर्हि व्याधेर्मूलं हि पातकम् ॥
धर्मेणैव हि पापानामपनोदनमीरितम् ॥

दुःखका मूल व्याधि है और व्याधिका मूल पापमें होता है। धर्मचरणसे ही पापोंका नाश बताया गया है।

[विद्येश्वरसंहिता १८ । १३८-१३९]

यो वैदिकमनादृत्य कर्म स्पार्तमथापि चा ।
अन्यतस्माच्चरेन्मत्यो न सङ्कल्पफलं लभेत् ॥

जो मनुष्य वेदों तथा स्मृतियोंमें कहे हुए सत्कर्मोंकी अवहेलना करके दूसरे कर्मको करने लगता है, उसका मनोरथ कभी सफल नहीं होता। [विद्येश्वरसंहिता २१ । ४४]
ते धन्याश्च कृतार्थाश्च सफलं देहधारणम् ।
उदधृतं च कुलं तेषां ये शिवं समुपासते ॥

शिवनामपविभूतिश्च तथा रुद्राक्ष एव च ।
एतत्वयं महापुण्यं त्रिवेणीसदृशं स्मृतम् ॥
शैवं नाम यथा गङ्गा विभूतिर्यमुना मता ।
रुद्राक्षं विधिना प्रोक्ता सर्वपापविनाशिनी ॥

अनेकजन्मभिर्देन तपस्तदं मुनीश्वर।
शिवनाम्नि भवेद्भक्तिः सर्वपापहारिणी ॥
विलोक्य वेदानखिलान् शिवनामजपः परः।
संसारतरणोपाय इति पूर्वविनिश्चितम् ॥

वे ही धन्य और कृतार्थ हैं, उन्हींका शरीर धारण करना भी सफल है और उन्होंने ही अपने कुलका उद्धार कर लिया है, जो शिवकी उपासना करते हैं। शिवका नाम, विभूति (भस्म) तथा रुद्राक्ष—ये तीनों त्रिवेणीके समान परम पुण्यवाले माने गये हैं। भगवान् शिवका नाम गंगा है। विभूति यमुना मानी गयी है तथा रुद्राक्षको सरस्वती कहा गया है। इन तीनोंकी संयुक्त त्रिवेणी समस्त पापोंका नाश करनेवाली है। हे मुनीश्वर! जिसने अनेक जन्मोंतक तपस्या की है, उसीकी शिवनामके प्रति भक्ति होती है, जो समस्त पापोंका नाश करनेवाली है। सम्पूर्ण वेदोंका अवलोकन करके पूर्ववर्ती महर्षियोंने यही निश्चित किया है कि भगवान् शिवके नामका जप संसारसागरको पार करनेके लिये सर्वोत्तम उपाय है।

[विद्येश्वरसंहिता २३।५, १०, १४, ३६, ४०]

दुर्ज्या शास्त्रवी माया सर्वेषां प्राणिनामिह।
भक्तं विनार्पितात्मानं तथा सम्प्रोहाते जगत् ॥

वास्तवमें इस संसारमें सभी प्राणियोंके लिये शम्भुकी मायाको जानना अत्यन्त कठिन है। जिसने अपने-आपको शिवको समर्पित कर दिया है, उस भक्तको छोड़कर शेष सम्पूर्ण जगत् उनकी मायासे मोहित हो जाता है। [रुद्रसंहिता, स०खं० २।२५]

शिवेच्छा यादृशी लोके भवत्येव हि सा तदा।
तदशीनं जगत्सर्वं वज्रस्तन्त्र्यां रिथतं यतः ॥

इस लोकमें शिवकी जैसी इच्छा होती है, वैसा ही होता है। समस्त विश्व उन्हींकी इच्छाके अधीन है और उन्हींकी वाणीरूपी तन्त्रोंसे बैधा हुआ है।

[रुद्रसंहिता, स०खं० २।४०]

भवभक्तिपरा ये च भवप्रणतचेतसः।
भवसंस्मरणा ये च न ते दुःखस्य भाजनाः ॥

जो शिवभक्तिपरायण हैं, जो शिवमें अनुरक्त

चित्तवाले हैं और जो शिवका स्मरण करते हैं, वे दुःखके पात्र नहीं होते। [रुद्रसंहिता, स०खं० १२।२१]
इच्छेत्परापकारं यः स तस्यैव भवेद् ध्युवम्।
इति मत्वापकारं नो कुर्यादन्मस्य पूरुषः ॥

जो दूसरोंका अपकार करना चाहता है, निश्चय ही पहले उसीका अपकार हो जाता है। ऐसा समझकर कोई भी व्यक्ति किसी दूसरोंका अपकार न करे।

[रुद्रसंहिता, सौखं० १९।१६]

अनाहूताश्च ये देवि गच्छन्ति परमन्दिरम्।
अवमानं प्राप्नुवन्ति मरणादधिकं तथा ॥

हे देवि! जो लोग बिना बुलाये दूसरोंके घर जाते हैं, वे वहाँ अनादर ही पाते हैं, जो मृत्युसे भी बढ़कर होता है। [रुद्रसंहिता, सौखं० २८।२६]

तथारिभिर्व्यथते ह्यादितोऽपि शरैर्जनः।
स्वानां दुरुक्तिभिर्भर्मर्मताङ्गितः स यथा मतः ॥

मनुष्य अपने शत्रुओंके बाणसे धायल होकर उतना व्यथित नहीं होता, जितना अपने सम्बन्धियोंके निन्दायुक्त वचनोंसे दुखी होता है। [रुद्रसंहिता, सौखं० २८।२९]
अपूर्णा यत्र पूज्यन्ते पूजनीयो न पूज्यते।
त्रीणि तत्र भविष्यन्ति दारिद्र्यं मरणं भयम् ॥

जहाँ अपूर्ण लोगोंकी पूजा होती है और पूजनीयकी पूजा नहीं होती, वहाँ दरिद्रता, मृत्यु एवं भय—ये तीन अवश्य होंगे। [रुद्रसंहिता, सौखं० ३५।९]

परेषां बलेदनं कर्म न कार्यं तत् कदाचन।
परं द्वेष्टि परेषां यदात्मनस्तद्विव्यति ॥

दूसरोंको कष्ट देनेवाला कार्य कभी नहीं करना चाहिये, जो दूसरोंसे द्वेष करता है, वह द्वेष अपने लिये ही होता है।

[रुद्रसंहिता, सौखं० ४२।६]

दतुः परीक्षा दुर्भिक्षे रणे शूरस्य जायते।
आपलासे तु मित्रस्याशक्तौ स्त्रीणां कुलस्य हि ॥
विनये संकटे प्रामेऽवितथस्य परोक्षतः।
सुस्नेहस्य तथा तात नान्यथा सत्यमीरितम् ॥

दुर्भिक्ष पङ्केपर दानीकी, युद्धस्थलमें शूरवीरकी,

आपत्तिकालमें मित्रकी, असमर्थ होनेपर स्त्रियोंकी तथा कुलकी, नप्रतामें तथा संकटके उपस्थित होनेपर सत्यकी और उत्तम स्नेहकी परीक्षा परोक्षकालमें होती है, यह अन्यथा नहीं है, सत्य कहा गया है।

[रुद्रसंहिता, पा०खं० १७। १२-१३]

कामो हि नरकायैव तस्मात् क्रोधोऽभिजायते ।
क्रोधाद्वर्वति सम्मोहो मोहाच्च भ्रंशते तपः ॥

काम ही नरकका द्वार है, कामसे क्रोध उत्पन्न होता है, क्रोधसे मोह होता है और मोहसे तप विनष्ट हो जाता है। [रुद्रसंहिता, पा०खं० २४। २७]

कुसङ्गा बहवो लोके स्त्रीसङ्गस्तत्र चाधिकः ।
उद्ध्रेत्सकलैर्बन्धीन् स्त्रीसङ्गात्प्रमुच्यते ॥
लोहदारुमयैः पाशैर्दृढं बद्धोऽपि मुच्यते ।
स्वादिपाशसुपंचद्धो मुच्यते न कदाचन ॥
वर्धन्ते विषयाः शश्वमहाबंधनकारिणः ।
विषयाक्रान्तमनसः स्वप्ने मोक्षोऽपि दुर्लभः ॥
सुखमिच्छति चेत्प्राज्ञो विधिवद्विषयासत्यजेत् ।
विषवद्विषयानाहुर्विषयैर्यैर्निहन्त्यते ॥

जनो विषयिणा साकं वार्तातः पतति क्षणात् ।
विषयं प्राहुराचार्याः सितलिपेन्द्रवारुणीप् ॥

संसारमें बहुतसे कुसंग हैं, परंतु उनमें स्त्रीसंग सबसे बढ़कर हैं; क्योंकि मनुष्य सभी प्रकारके बन्धनोंसे छुटकारा प्राप्त कर सकता है, किंतु स्त्रीसंगसे उसका छुटकारा नहीं होता। लोहे तथा लकड़ीके पाशोंमें दृढ़तापूर्वक बँधा हुआ पुरुष उससे छुटकारा पा सकता है, किंतु स्त्री आदिके पाशमें बँधा हुआ कभी मुक्त नहीं होता है। [स्त्रीसंगसे] महाबन्धनकारी विषय निरन्तर बढ़ते रहते हैं, विषयोंसे आक्रान्त मनवालेको स्वप्नमें भी मोक्ष दुर्लभ है। यदि बुद्धिमान् पुरुष सुख प्राप्त करना चाहे, तो विषयोंको भलीभांति छोड़ दे। जिन विषयोंसे प्राणी मारा जाता है, वे विषय विषके समान कहे गये हैं। मोक्षकी कामना करनेवाला पुरुष विषयी पुरुषोंके साथ वार्ता करनेमात्रसे क्षणभरमें ही पतित हो जाता है। आचार्योंने विषयवासनाको शर्करासे आलिप इन्द्रायन फलके समान (आपातमधुर) कहा है। [रुद्रसंहिता, पा०खं० २४। ६१-६५]

बकं साधुं वर्णयन्ति स मत्स्यानन्ति सर्वथा ।
सहवासी विजानीयाच्चरित्रं सहवासिनाम् ॥

बगुलेके श्वेत वर्ण शरीरको देखकर सब लोग उसे साधु कहते हैं। फिर भी क्या वह मछली नहीं जाता! साथमें रहनेवाला ही साथ रहनेवालोंका [वास्तविक] चरित्र जानता है। [रुद्रसंहिता, पा०खं० २५। ४३]

शिवेति मङ्गलं नाम मुखे यस्य निरन्तरम् ।
तस्यैव दर्शनादन्ये पवित्राः सन्ति सर्वदा ॥

जिसके मुखसे 'शिव' यह मंगल नाम निरन्तर निकलता है, उस पुरुषके दर्शनमात्रसे ही दूसरे प्राणी सदा पवित्र हो जाते हैं। [रुद्रसंहिता, पा०खं० २८। २०] महागुणगरिष्ठोऽपि महात्मापि गिरीद्रजे ।
देहीति वचनात्सद्यः पुरुषो याति लाघवम् ॥

हे गिरिजे! महान् गुणोंसे वरिष्ठ कोई कितना भी वड़ा क्यों न हो, वह 'दीजिये'—इस शब्दका उच्चारण करते ही लघुताको प्राप्त हो जाता है।

[रुद्रसंहिता, पा०खं० २१। २७]
परनिन्दा विनाशाय स्वनिन्दा यशसे मता ॥

परनिन्दा विनाशके लिये और आत्मनिन्दा यशके लिये कही गयी है। [रुद्रसंहिता, पा०खं० ३१। २३]
वचनं विविधं शैल लौकिके वैदिकेऽपि च ।
सर्वं जानाति शास्त्रज्ञो निर्मलज्ञानचक्षुषा ॥

असत्यमहितं पश्चात्साम्प्रतं श्रुतिसुन्दरम् ।
सुखुद्विर्वक्ति शत्रुहि हितं नैव कदाचन ॥
आदावप्रीतिजनकं परिणामे सुखावहम् ।
दयालुर्धमशीलो हि बोधयत्येव बान्धवः ॥

श्रुतिमात्रात्सुधातुल्यं सर्वकालसुखावहम् ।
सत्यसारं हितकरं वचनं श्रेष्ठमीमितम् ॥

हे शैल! लोक एवं वेदमें तीन प्रकारके वचन होते हैं, शास्त्रका ज्ञाता अपने निर्मल ज्ञानरूपी नेत्रसे उन सबको जानता है। जो वचन सुननेमें मुन्द्र लगे, पर असत्य एवं अहितकारी हो, ऐसा वचन बुद्धिमान् शत्रु बोलते हैं। ऐसा वचन किसी प्रकार हितकारी नहीं होता। जो वचन आरम्भमें अप्रिय लगनेवाला हो, किंतु परिणाममें सुखकारी हो, ऐसा वचन दयालु तथा धर्मशील बन्धु ही कहता है। सुननेमें अमृतके समान, सभी कालमें

सुखदायक, सत्यका सारस्वरूप तथा हितकारक बचन श्रेष्ठ होता है। [ऋद्धसंहिता, पा०खं० ३३। ३०—३३]

सुखदुःखदो न चान्योऽस्ति यतः स्वकृतभुक् पुमान्।

कोई भी किसीको सुख-दुःख देनेवाला नहीं है, पुरुष स्वयं अपने किये हुए कर्मका फल भोगता है।

[ऋद्धसंहिता, पा०खं० ५१। २७]

मितं ददाति जनको मितं भ्राता मितं सुतः।

अमितस्य हि दातारं भर्तारं पूजयेत्सदा॥

माता, पिता, पुत्र, भाई तो स्त्रीको बहुत थोड़ा ही सुख देते हैं, परंतु परि तो अपरिमित सुख देता है। इसलिये स्त्रीको चाहिये कि वह पतिकी सदैव सेवा-पूजा करे। [ऋद्धसंहिता, पा०खं० ५४। ५०]

सा धन्या जननी लोके स धन्यो जनकः पिता।

धन्यः स च पतिर्यस्य गृहे देवी पतिनिता॥

इस लोकमें उसकी माता धन्य है और उसके पिता भी धन्य हैं तथा उसका वह परि भी धन्य है, जिसके घरमें देवीरूपा पतिनिता स्त्रीका निवास होता है।

[ऋद्धसंहिता, पा०खं० ५४। ५८]

न गङ्ग्या तथा भेदो या नारी पतिदेवता।

उमाशिवसमौ साक्षात्तस्मात्तौ पूजयेद् बुधः॥

गंगा तथा पतिनिता स्त्रीमें कोई भेद नहीं है। वे दोनों स्त्री-पुरुष शिव तथा पार्वतीके तुल्य हैं, अतः बुद्धिमान् पुरुषको उनका पूजन करना चाहिये।

[ऋद्धसंहिता, पा०खं० ५४। ६१]

पित्रोश्च पूजनं कृत्वा प्रक्रान्तिं च करोति यः।

तस्य वै पृथिवीजन्यं फलं भवति निश्चितम्॥

माता-पिताका पूजनकर जो उनकी परिक्रमा कर लेता है, उसे पृथिवीकी परिक्रमा करनेसे होनेवाला फल निश्चित रूपसे प्राप्त हो जाता है।

[ऋद्धसंहिता, कु०खं० ११। ३१]

बुद्धिर्यस्य बलं तस्य निर्बुद्धेस्तु कुतो बलम्।

कूपे सिंहो मदोन्मत्तः शशकेन निपातितः॥

जिसके पास बुद्धि है, उसीके पास बल है। बुद्धि-हीनको बल कहाँसे प्राप्त होगा? [बुद्धिके बलसे]

किसी खरगोशने मदोन्मत्त सिंहको कुएँमें गिरा दिया था। [ऋद्धसंहिता, कु०खं० ११। ५२]

संपीडनाय जगतो यदि स क्रियते तपः। सफलं तद्वत् वेद्यं तस्मात्सुविहितं तपः॥

यदि जगत्को पीड़ा पहुँचानेके लिये तप किया जाय, तो उसका फल नष्ट समझना चाहिये। अतः उत्तम उद्देश्यके लिये किया गया तप सफल होता है।

[ऋद्धसंहिता, यु०खं० १। ३९]

सर्वे तनुभृतस्तुल्या यदि बुद्ध्या विचार्यते।

इदं निश्चित्य केनापि नो हिंस्यः कोऽपि कुत्रचित्॥

धर्मो जीवदद्यातुल्यो न व्यापि जगतीतत्त्वे।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कार्या जीवदद्या नृभिः॥

एकस्मिन् रक्षिते जीवे त्रैलोक्यं रक्षितं भवेत्।

घातिते घातितं तद्वत्स्माद्रक्षेन घातयेत्॥

न हिंसासदृशं पापं त्रैलोक्ये सच्चराचरे।

हिंसको नरकं गच्छेत्स्वर्गं गच्छेदहिंसकः॥

भीतेभ्यश्चाभयं देयं व्याधितेभ्यस्तथौषधम्।

देया विद्यार्थिनां विद्या देयमन्नं क्षुधातुरे॥

यदि बुद्धिसे विचार किया जाय, तो सभी शरीरधारी समान हैं—ऐसा निश्चय करके किसीको कभी किसी भी जीवको हिंसा नहीं करनी चाहिये।

पृथ्वीतलपर जीवोंपर दया करनेके समान कोई दूसरा धर्म नहीं है, अतः ऐसा जानकर सभी प्रकारके प्रयत्नोंद्वारा मनुष्योंको जीवोंपर दया करनी चाहिये।

जैसे एक जीवको भी रक्षा करनेसे तीनों लोकोंकी रक्षा हो जाती है, उसी प्रकार एक जीवके मारनेसे त्रैलोक्यवधका पाप लगता है, इसलिये जीवोंकी रक्षा करनी चाहिये, हिंसा नहीं। इस चराचर जगत्में हिंसाके समान कोई पाप नहीं है। हिंसक नरकमें जाता है

तथा आहिंसक स्वार्गको जाता है। भयभीत लोगोंको अभ्य प्रदान करना चाहिये, रोगियोंको औषधि देनी चाहिये, विद्यार्थियोंको विद्या देनी चाहिये तथा भूखोंको

अन्न प्रदान करना चाहिये।

[ऋद्धसंहिता, यु०खं० ५। १५—१७, २०, २३]

श्रीशिवमहापुराण [पूर्वार्ध]—एक सिंहावलोकन

ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः
शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय
च ॥

कल्याण एवं सुखके मूल स्रोत भगवान् सदाशिवके नमस्कार है। कल्याणका विस्तार करनेवाले तथा सुखका विस्तार करनेवाले भगवान् शिवको नमस्कार है। मंगलस्वरूप और मंगलमयताकी सीमा भगवान् शिवको नमस्कार है।

पुण्योंमें शिवमहापुराणका अत्यन्त महिमामय स्थान है। पुराणोंकी परिगणनामें वेदतुत्प्य, पवित्र और सभी

लक्षणोंसे युक्त यह चौथा महापुराण है। इस ग्रन्थरत्नके आदि, मध्य और अन्तमें सर्वत्र भूतभावन भगवान् सदाशिवकी महिमाका प्रतिपादन किया गया है। इस पुराणमें पत्रब्रह्म परमात्माकी सदाशिवस्वरूपमें उपासनाका वर्णन है। भगवान् सदाशिवकी लीलाएँ अनन्त हैं, उनकी लीला-कथाओं तथा उनको महिमाका वर्णन ही इस ग्रन्थका मुख्य प्रतिपाद्य विषय है, जिसके सम्यक् अवगाहनसे साधकों-भक्तोंका मन महादेवके पदपद्मपरागका भ्रमर बनकर मुक्तिमार्गका पाठिक बन जाता है।

माहात्म्य

एक बार श्रीशौनकजीने महाज्ञानी सूतजीसे निवेदन किया—हे सूतजी! सदाचार, भगवद्भक्ति और विवेककी वृद्धि कैसे होती है तथा साधु पुरुष किस प्रकार अपने काम, क्रोध, लोभ आदि मानसिक विकारोंका निवारण करते हैं? आप हमें ऐसा कोई शाश्वत साधन बताइये, जो कल्याणकारी एवं परम मंगलकारी हो और वह साधन ऐसा हो, जिसके अनुष्ठानसे शीघ्र ही अन्तःकरणकी विशेष शुद्धि हो जाय तथा निर्मल चित्तवाले पुरुषको सदाके लिये शिवपदकी प्राप्ति हो जाय। सूतजीने कहा—मुनिश्रेष्ठ शौनक! सम्पूर्ण शास्त्रोंके सिद्धान्तसे समन्वित, भक्ति आदिको बढ़ानेवाला तथा भगवान् शिवको सन्तुष्ट करनेवाला उत्तम शिवपुराण कालरूपी सर्पसे प्राप्त महात्रासका भी विनाश करनेवाला है। हे मुने! पूर्वकालमें शिवजीने इसे कहा था, गुरुदेव व्यासजीने सनन्तुकुमार मुनिका उपदेश पाकर कलियुगके प्रणियोंके कल्याणके लिये बड़े आदरसे संक्षेपमें इस पुराणका प्रतिपादन किया। इसे भगवान् शिवका वाइमय स्वरूप समझना चाहिये तथा सब प्रकारसे इसका सेवन करना चाहिये।

इसके पठन, पाठन और श्रवणसे शिवभक्ति पाकर मनुष्य शीघ्र ही शिवपदको प्राप्त कर लेता है। इस पुराणको सुननेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है तथा बड़े-बड़े उत्कृष्ट भोगोंका भोग करके अन्तमें

शिवलोकको प्राप्त कर लेता है।

शिवपुराणका श्रवण और भगवान् शंकरके नामका संकीर्तन—दोनों ही मनुष्योंको कल्पवृक्षके समान सम्यक् फल देनेवाले हैं, इसमें सन्देह नहीं है—

पुराणश्रवणं शश्वोर्नामसङ्कीर्तनं तथा।

कल्पद्रुमफलं सम्यक् मनुष्याणां न संशयः ॥

यह शिवपुराण चौबीस हजार श्लोकोंसे युक्त है, इसमें सात संहिताएँ हैं। मनुष्यको चाहिये कि वह भक्ति, ज्ञान और वैराग्यसे भलीभांति सम्पन्न हो बड़े आदरसे इसका श्रवण करे। जिस घरमें इस शिवपुराणकी कथा होती है, वह घर तीर्थरूप ही है, उसमें निवास करनेवालोंके पाप यह नष्ट कर देता है।

सूतजी शिवपुराणकी महिमाका वर्णन करते हुए पुराने इतिहासका उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। पहला उदाहरण देवराज नामके एक ब्राह्मणका है, जो वेश्यागामी एवं दुष्ट था तथा दूसरा उदाहरण चंचुला नामकी एक स्त्री एवं बिन्दुगा नामके उसके पतिका है। ये दोनों ही दुरात्मा और महापापी थे, परंतु शिवपुराणकी कथाके श्रवणके प्रभावसे इन सबका उद्धार हो जाता है और इन्हें शिवपदकी प्राप्ति हो जाती है।

शिवपुराणके श्रवणकी विधि

शौनकजीके पूछनेपर सूतजी शिवपुराणके श्रवणकी

विधिका वर्णन करते हुए कहते हैं—

शिवपुराणको सुननेके प्रायः सभी अधिकारी हैं, शिव-उपासकके अतिरिक्त गणेशभक्त, शाक, सूर्योपासक, वैष्णव और इसके साथ ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—चारों वर्णोंके स्त्री-पुरुष एवं ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासी—ये सभी सकाम भाव अथवा निष्काम भावसे कथा-श्रवण कर सकते हैं, किंतु जो लोग विष्णु और शिवमें भेददृष्टि रखते हैं, शिवभक्तिसे रहित हैं; पाखण्डी, हिंसक तथा दुष्ट हैं, नास्तिक हैं; परस्त्री, पराया धन तथा देवसम्पत्तिके हरणके लिये लुब्ध रहते हैं—वे कथा-श्रवणके अधिकारी नहीं हैं। श्रोताको चाहिये कि वह ब्रह्मवर्यका पालन करे, पृथ्वीपर सोये, सत्य बोले, जितेन्द्रिय रहे तथा कथाकी समाप्तिक पतलपर भोजन करे तथा लोभ एवं हिंसा आदिसे रहित हो और काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य, ईर्ष्या, राग-द्वेष, पाखण्ड एवं अहंकारको भी छोड़ दे। श्रोताको सदा विनयशील,

सरलचित्, पवित्र, दयालु, कम बोलनेवाला तथा उदार मनवाला होना चाहिये।

कथावाचकके लिये संयमी, शास्त्रज्ञ, शिव-आराधनामें तत्पर, दयालु, निर्लोभी, दक्ष, धैर्यशाली तथा वक्तुत्व-शक्तिसे सम्पन्न होना उत्तम माना गया है। व्यासके आसनपर बैठा हुआ कथावाचक ब्राह्मण जबतक कथा समाप्त न हो जाय, तबतक किसीको प्रणाम न करे।

इस तरह विधि-विधानका पालन करनेपर श्रीसम्पन्न शिवपुराण सम्पूर्ण फलको देनेवाला तथा भोग एवं मोक्षका दाता होता है। हे मुने! मैंने आपको शिवपुराणका यह माहात्म्य जो सम्पूर्ण अभीष्टोंको देनेवाला है, बता दिया। जो सदा भगवान् विश्वनाथका ध्यान करते हैं, जिनकी वाणी शिवके गुणोंकी स्तुति करती है और जिनके दोनों कान उनकी कथा सुनते हैं, इस जीव-जगत्में उर्ध्वोंका जन्म लेना सफल है। वे निश्चय ही संसार-सागरसे पार हो जाते हैं।

विद्येश्वरसंहिता

व्यासजी कहते हैं—जो धर्मका महान् क्षेत्र है, जहाँ गंगा-यमुनाका संगम हुआ है, जो ब्रह्मलोकका मार्ग है, उस परम पुण्यमय प्रयागमें महात्मा मुनियोंने एक विशाल ज्ञानयज्ञका आयोजन किया। उस ज्ञानयज्ञका तथा मुनियोंका दर्शन करनेके लिये व्यासाश्रव्य महामुनि सूतजी वहाँ पधारे। वहाँ उपस्थित महात्माओंने उनकी विधिवत् स्तुति करके विनयपूर्वक उनसे निवेदन किया— हे सूतजी! इस समय हमें एक ही बात सुननेकी इच्छा है, आपका अनुग्रह हो तो गोपनीय होनेपर भी आप उस विषयका वर्णन करें।

घोर कलियुग आनेपर मनुष्य पुण्यकर्मसे दूर रहेंगे, दुर्योगमें फँस जायेंगे, सब-के-सब सत्यवाणसे विमुख हो जायेंगे, दूसरोंकी निन्दामें तत्पर होंगे, पराये धनको हड्डप लेनेकी इच्छा करेंगे, उनका मन परायी स्त्रियोंमें आसक्त होगा तथा वे दूरपरे प्राणियोंकी हिंसा किया करेंगे। वे अपने शरीरको ही आत्मा समझेंगे। वे मूढ़ नास्तिक तथा पशुबुद्धि रखनेवाले होंगे। माता-पितासे विमुख होंगे तथा वे कामवश स्त्रियोंकी सेवामें लगे

रहेंगे। वे अपनेको ब्रेष्ट कुलवाला मानकर चारों वर्णोंसे विपरीत व्यवहार करनेवाले, सभी वर्णोंको भ्रष्ट करनेवाले होंगे। कलियुगकी स्त्रियाँ प्रायः सदाचारसे भ्रष्ट होंगी, पतिका अपमान करनेवाली होंगी। सास-ससुरसे द्रोह करनेवाली होंगी, किसीसे भय नहीं मानेंगी।

हे सूतजी! इस तरह जिनकी बुद्धि नष्ट हो गयी है और जिन्होंने अपने धर्मका त्याग कर दिया है, ऐसे लोगोंको इहलोक और परलोकमें उत्तम गति कैसे प्राप्त होगी—इसी चिन्तासे हमारा मन सदा व्याकुल रहता है। सूतजी बोले—हे साधु महात्माओ! आप सबने तीनों लोकोंका हित करनेवाली अच्छी बात पूछी है, मैं इस विषयका वर्णन करता हूँ, आप लोग आदरपूर्वक सुनें।

कल्याणप्राप्तिका उत्तम साधन—शिवपुराण

सबसे उत्तम जो शिवपुराण है, वह वेदान्तका सार-सर्वस्व है तथा वक्ता और श्रोताका समस्त पापोंसे उद्धार करनेवाला है। वह परलोकमें परमार्थ वस्तुको देनेवाला है, कलिकी कल्मपराशिका वह विनाशक है। उसमें भगवान् शिवके उत्तम यशका वर्णन है। हे ब्राह्मणो! धर्म,

अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंको देनेवाले उस पुराणका प्रभाव विस्तारको प्राप्त हो रहा है।

हे विप्रवरो! उस सर्वोत्तम शिवपुराणके अध्ययन एवं त्रवणमात्रसे वे कलियुगके पापासक्त जीव ब्रेष्टतम गतिको प्राप्त हो सकेंगे। एक बार महर्षिगण परस्पर वाद-विवादमें फैस गये, तब वे सब-के-सब अपनी शंकरके समाधानके लिये सृष्टिकर्ता ब्रह्माजीके पास गये। मुनिगणोंने कहा—हे भगवन्! परम साध्य क्या है और उसका परम साधन क्या है तथा उसका साधक कैसा होता है?

ब्रह्माजी कहते हैं—शिवपदकी प्राप्ति ही साध्य है, उनकी सेवा ही साधन है तथा उनके प्रसादसे जो नित्य, ऐपित्तिक आदि फलोंके प्रति निःस्पृह होता है, वही साधक है। भगवान् शंकरका श्रवण, कीर्तन और मनन—ये तीनों महत्तर साधन कहे गये हैं, ये तीनों ही वेदसम्पत्त हैं।

सूतजी कहते हैं—हे शौनक! जो श्रवण, कीर्तन और मनन—इन तीनोंके अनुष्ठानमें समर्थ न हो, वह भगवान् शंकरके लिंग या मूर्तिकी स्थापनाकर नित्य उसकी पूजा करके संसार-सागरसे पार हो सकता है।

त्रिधिगणोंके यह पृछनेपर कि मूर्तिमें ही सर्वत्र देवताओंकी पूजा होती है, परंतु भगवान् शिवकी पूजा सब जगह मूर्तिमें और लिंगमें क्यों की जाती है?

सूतजी कहते हैं—एकमात्र भगवान् शिव ही ब्रह्मरूप होनेके कारण निराकार कहे गये हैं। रूपवान् होनेके कारण साकार भी हैं। निराकार होनेके कारण ही उनकी पूजाका आधारभूत लिंग भी निराकार ही प्राप्त हुआ है अर्थात् शिवलिंग शिवके निराकार स्वरूपका प्रतीक है।

भगवान् शिवके ज्योतिलिंगका प्राकृत्य

एक समय शेषशायी भगवान् विष्णु अपनी पराशक्ति तथा पार्वदोंसे घिरे हुए शयन कर रहे थे, उसी समय ब्रह्मवेताओंमें ब्रेष्ट ब्रह्माजी वहाँ पधारे तथा विष्णुसे वार्ता करते हुए वाद-विवाद करते लगे। वाद-विवाद इतना बढ़ गया कि उसने भयंकर युद्धका रूप धारण कर लिया। उस

भयंकर युद्धको देखकर देवतागण भयभीत होकर भगवान् शंकरके पास कैलास पहुँचे और उन्हें अवगत कराया।

निराकार भगवान् शंकर इस भयंकर युद्धको देखकर एक विशाल अग्निस्तम्भके रूपमें उन दोनोंके बीचमें प्रकट हो गये। इस अद्भुत स्तम्भको देखकर ब्रह्मा, विष्णु तथा अन्य सभी लोग आश्चर्यचकित हो गये। ब्रह्मा-विष्णु दोनोंने इसकी ऊँचाई तथा जड़की सीमा देखनेका विचार किया। विष्णु शुक्रका रूप धारणकर इसकी जड़की खोजमें नीचेकी ओर चले। इसी प्रकार ब्रह्मा भी हंसका रूप धारणकर उसका अन्त खोजनेके लिये ऊपरकी ओर चल पड़े। पाताललोकको खोदकर बहुत दूरतक जानेपर भी विष्णुको उस अग्निस्तम्भका आधार नहीं मिला। वे थक-हारकर रणभूमिमें वापस आ गये। दूसरी ओर ब्रह्माजीने आकाशमार्गसे जाते हुए मार्गमें एक अद्भुत केतकी (केवड़े)-के पुष्पको गिरते हुए देखा। उस केतकी पुष्पने ब्रह्माजीसे कहा—इस स्तम्भके आदिका कहीं पता नहीं है, आप उसे देखनेकी आशा छोड़ दें। ब्रह्माजीने केतकी पुष्पसे निवेदन किया कि तुम मेरे साथ चलकर विष्णुके समक्ष यह कह देना कि मैंने इस स्तम्भका अन्त देख लिया है, मैं इसका साक्षी हूँ। आपत्कालमें मिथ्याभाषणका दोष नहीं है। केतकीने वैसा ही किया।

भगवान् शंकर तो अन्तर्यामी थे ही, उन्होंने विष्णुकी सत्यनिष्ठासे प्रसन्न होकर देवताओंके समक्ष उन्हें अपनी समानता प्रदान की तथा ब्रह्मासे कहा—हे ब्रह्म! तुमने असत्यका आश्रय लिया है, इसलिये संसारमें तुम्हारा सत्कार नहीं होगा और तुम्हारे मन्दिर नहीं बनेंगे तथा पूजनोत्सव आदि भी नहीं होंगे।

भगवान् शिवने झटी गवाही देनेवाले कर्ती केतकीसे कहा—तुम दुष्ट हो, मेरी पूजामें उपस्थित तुम्हारा फूल मुझे प्रिय नहीं होगा। तदनन्तर भगवान् शंकर ब्रह्मा, विष्णु तथा केतकी पुष्पर अनुग्रह करके सभी देवताओंसे स्तुत होकर सभामें सुशोभित हुए।

पंचाक्षरमन्त्रकी महिमा

आगेके अध्यायोंमें भगवान् सदाशिवने प्रणव एवं पंचाक्षर मन्त्रकी उत्पत्ति और महिमाका वर्णन किया है।

सबसे पहले भगवान् शिवके मुखसे आँकार (३०) प्रकट हुआ। यह मन्त्र शिवस्वरूप ही है। इसी प्रणवसे पंचाक्षर मन्त्रकी उत्पत्ति हुई है। प्रणवसे युक्त पंचाक्षर मन्त्र (३० नमः शिवाय)-से सम्पूर्ण मनोरथोंकी सिद्धि होती है। इस मूल मन्त्रसे भोग और मोक्ष दोनों ही प्राप्त होते हैं।

इसके अनन्तर सूतजी शिवलिंगकी स्थापना, उसके लक्षण और पूजनकी विधि तथा शिवपदकी प्राप्ति करनेवाले सत्कर्मोंका वर्णन करते हैं। आगे मोक्षदायक काशी आदि मुकिक्षेत्रोंका वर्णन, विशेष कालमें विभिन्न नदियोंके जलमें स्नानके उत्तम फलका निर्देश तथा तीर्थोंमें पापसे बचे रहनेकी चेतावनी भी दी गयी है। सदाचार, शौचाचार, स्नान, भस्म-धारण, सन्ध्यावन्दन, प्रणवजप, गायत्रीजप, दान, न्यायतः धनोपार्जन तथा अग्निहोत्र आदिकी विधि एवं उसकी महिमाका वर्णन हुआ है।

सूतजी कहते हैं कि मुमुक्षु व्यक्तिको सदा ज्ञानका ही अध्यास करना चाहिये। धर्मसे अर्थकी प्राप्ति होती है, अर्थसे भोग सुलभ होता है और उस भोगसे वैराग्यकी प्राप्ति होती है। धर्मपूर्वक उपार्जित धनसे जो भोग प्राप्त होता है, उससे एक दिन अवश्य वैराग्यका उदय होता है। धर्मके विपरीत अधर्मसे उपार्जित धनद्वारा जो भोग प्राप्त होता है, उससे भोगोंके प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है। ईश्वरार्पण बुद्धिसे यज्ञ-दान आदि कर्म करके मनुष्य मोक्षफलका भागी होता है।

शिवसपर्याका अनन्त फल

भगवती उमा जगतकी माता हैं और भगवान् सदाशिव जगत्के पिता। जो इनकी सेवा करता है, उस पुत्रपर इन दोनों माता-पिताकी कृपा नित्य अधिकाधिक

रुद्रसंहिता (सृष्टिखण्ड)

व्यासजी कहते हैं—एक समयकी बात है, नैमित्यारण्यमें निवास करनेवाले शौनक आदि ऋषियोंने सूतजीसे पूजा—है सूतजी। हमने सुना है कि भगवान् शिव शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं, वे महान् दयालु हैं, इसलिये वे अपने भक्तोंका कष्ट नहीं देख सकते।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश—ये तीनों देवता शिवके

बढ़ती रहती हैं। वे उसे अपना आन्तरिक ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, अतः आन्तरिक आनन्दकी प्राप्तिके लिये शिवलिंगको माता-पिताका स्वरूप मानकर उसकी पूजा करनी चाहिये। भक्तिपूर्वक की गयी शिवपूजा मनुष्योंको पुनर्जन्मसे छुटकारा दिलाती है। शिवभक्तकी पूजासे भगवान् शिव बहुत प्रसन्न होते हैं। शिवभक्त साक्षात् शिवस्वरूप ही है, अतः उसकी सेवामें तत्पर रहना चाहिये।

भगवान् शिवको अपनी आत्मा मानकर उनकी पूजा करनी चाहिये। भगवान् शिवकी प्रदक्षिणा, नमस्कार और घोडशोपचार पूजन अत्यन्त फलदायी होता है। इस पृथ्वीपर ऐसा कोई पाप नहीं है, जो शिव-प्रदक्षिणासे नष्ट न हो सके। इसलिये प्रदक्षिणाका आश्रय लेकर सभी पापोंका नाश कर देना चाहिये।

लिंगार्चनका माहात्म्य

इसके अनन्तर पर्यावरण शिवलिंगके पूजनका माहात्म्य, पर्यावरण लिंगके निर्माणकी विधि और वेदमन्त्रोद्वाप उसके पूजनकी विस्तृत एवं संक्षिप्त विधिका वर्णन किया गया है।

चारों वेदोंमें लिंगार्चनसे बढ़कर कोई पुण्य नहीं है। केवल शिवलिंगकी पूजा होनेपर समस्त चराचर जगत्की पूजा हो जाती है।

रुद्राक्ष-धारणसे एक चौथाई, विभूति (भस्म)-धारणसे आधा, मन्त्रजपसे तीन चौथाई और पूजासे पूर्ण फल प्राप्त होता है।

सूतजी कहते हैं—प्रिय मुनीश्वरो! इस प्रकार मैंने शिवकी आज्ञाके अनुसार उत्तम मुक्ति देनेवाली विद्येश्वरसंहिता आपके समक्ष पूर्णरूपसे कह दी।

ही अंशसे उत्पन्न हुए हैं। उनके प्राक्ट्यकी कथा तथा उनके विशेष चरित्रोंका वर्णन कीजिये। प्रभो! आप उमाके आविर्भाव तथा विवाहकी भी कथा कहें; विशेषतः उनके गृहस्थधर्मका तथा अन्य लीलाओंका भी वर्णन करें। निष्पाप सूतजी! हमारे प्रश्नके उत्तरमें ये सब तथा दूसरी बातें भी अवश्य कहनी चाहिये। सूतजी

बोले—हे मुनीश्वरो! जैसे आप लोग पूछ रहे हैं, उसी प्रकार नारदजीने शिवरूपी भगवान् विष्णुसे प्रेरित होकर अपने पिता ब्रह्माजीसे पूछा था।

व्रष्णिगणोंने सूतजीसे उन् पूछा कि हे प्रभो! ब्रह्मा और नारदका यह महान् सुख देनेवाला संवाद कब हुआ था, जिसमें संसारसे मुक्ति प्रदान करनेवाली शिवलीला वर्णित है, कृपाकर इसका वर्णन करें।

नारदमोहकी कथा

सूतजी बोले—एक समयकी बात है, नारदजीने तपस्याके लिये मनमें विचार किया तथा हिमालयकी एक सुन्दर गुफामें तपस्यामें स्थित हो गये। उसी समय उनकी तपस्या देखकर देवराज इन्द्र संतप्त होने लगे और उन्होंने कामदेवसे वहाँ जाकर नारदजीकी तपस्याको भंग करनेका आदेश दिया। कामदेवने अपनी सम्पूर्ण कलाओंसे उनकी तपस्यामें विज्ञ डालनेका प्रयत्न किया, परंतु वे सफल नहीं हुए। महादेवजीके अनुग्रहसे कामदेवका गर्व चूर हो गया। वास्तवमें महादेवजीकी कृपासे ही नारदपुनिपर कामदेवका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

पहले उसी आश्रममें भगवान् शिवने उत्तम तपस्या की थी और वहाँ उन्होंने कामदेवको भस्म कर डाला था। उस समय रतिकी प्रार्थना एवं देवताओंकी याचना करनेपर भगवान् शंकरने कुछ समय व्यतीत होनेके बाद कामदेवको जीवित होनेका वरदान दिया था।

नारदजीको यह गर्व हो गया कि कामदेवपर मेरी विजय हुई। भगवान् शिवकी मायासे मोहित होनेके कारण उन्हें यथार्थ बातका ज्ञान नहीं रहा। वे तत्काल कैलास पर्वतपर गये, वहाँ रुद्रदेवको उन्होंने कामदेवपर अपनी विजयका वृत्तान्त सुनाया। यह सब सुनकर भगवान् शंकरने नारदजीकी प्रशंसा करते हुए भगवान् विष्णुके सामने इसकी चर्चा कदापि न करनेकी बात कही, परंतु नारदजीके चित्तमें मदका अंकुर जम गया था। इसलिये नारदजीने वहाँसे विष्णुलोक जाकर भगवान् विष्णुसे अपना सारा वृत्तान्त अभिमानके साथ कह सुनाया। नारदमुनिका अहंकारयुक्त वचन सुनकर भगवान् विष्णुने यथार्थ बातें पूर्ण रूपसे जान लीं।

नारदजीकी प्रशंसा करते हुए भगवान् विष्णुने कहा—आप तो नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं तथा सदा ज्ञान-वैराग्यसे युक्त रहते हैं, फिर आपमें काम-विकार कैसे आ सकता है? विष्णुजीकी बात सुनकर नारदजी प्रसन्न होकर वहाँसे चले गये।

नारदजीके आगे जानेपर मार्गमें श्रीहरिने एक सुन्दर नगरकी रचना की, जो अत्यन्त मनोहर एवं वैकृष्णसे अधिक रमणीय था, जिसमें शीलनिधि नामके एक राजाकी देवकन्याके समान सुन्दरी कन्या थी। नारदमुनि उस नगरको देखकर मोहित हो गये और शीलनिधिके द्वारपर गये। महाराज शीलनिधिने श्रीमती नामक अपनी सुन्दरी कन्याको वहाँ बुलाकर नारदजीके चरणोंमें प्रणाम करवाया और निवेदन किया—यह मेरी पुत्री है, अपने विवाहके निमित्त स्वयंवरमें जानेवाली है। महर्षे! आप इसका भाग्य बताइये। नारदजी उस कन्याके शुभ लक्षणोंको देखकर अत्यधिक प्रभावित हुए तथा कन्याके पिता राजासे उसके सुख-सौभाग्य तथा गुणोंकी विशेष सराहना करते हुए वहाँसे विदा हो गये।

नारदजीके मनमें यह भाव आया कि किस प्रकार इस कन्यासे मेरा विवाह हो। वे तत्काल भगवान् विष्णुके पास जा पहुँचे और एकान्तमें विष्णुसे अपनी इच्छा व्यक्त की तथा उनसे यह प्रार्थना की कि आप अपना स्वरूप मुझे दे दें, जिससे वह कन्या मेरा वरण कर ले। भगवान् विष्णु बोले—मैं पूरी तरह तुम्हारा हित-साधन करूँगा। यह कहकर भगवान् विष्णुने नारदमुनिको मुख तो वानरका दे दिया तथा शेष अंगोंमें अपना-सा स्वरूप देकर वे वहाँसे अन्तर्धान हो गये। इस रहस्यसे अनभिज्ञ नारदजी स्वयंवरमें पहुँचे। सुलक्षणा राजकुमारी स्वयंवरके मध्य भागमें खड़ी होकर अपने मनके अनुरूप वरका अन्वेषण करने लगी। नारदका वानर-सा मुख देखकर वह कुपित हो गयी और उनकी ओरसे दृष्टि हटाकर अपने मनोबांधित वरको ढूँढ़ने लगी। उसी समय राजाका वेष धारणकर विष्णु वहाँ आ पहुँचे। तब भगवान् विष्णुके गलेमें वरमाला डालकर वह उनके साथ अन्तर्धान हो गयी।

नारदजीकी इस मुख्याकृतिको स्वयंवरमें और किसीने तो नहीं देखा, शिवजीके दो पार्षद वहाँ उपस्थित थे; उन्होंने यह सब देखकर नारदजीका उपहास किया तथा उन्हें अपना प्रतिबिम्ब देखनेके लिये कहा। तब नारदजीको वास्तविकताका पता लगा तथा वे क्रोधसे व्याकुल हो गये। उन दोनों शिवगणोंको उन्होंने रक्षस होनेका शाप दिया। इसके अनन्तर विष्णुलोक जाकर मायासे मोहित नारद विष्णुको शाप देते हुए बोले—तुमने स्त्रीके लिये मुझे व्याकुल किया है, तुम भी मनुष्य हो जाओ और स्त्रीके वियोगका दुःख भोगो। तुमने जिन बानरोंके समान मेरा मुख बनाया था, वे ही उस समय तुम्हारे सहायक हों।

कुछ ही क्षणोंमें भगवान् शंकरने अपनी विश्व-मोहिनी मायाको खींच लिया। उस मायाके तिरोहित होते ही नारदजी शुद्ध बुद्धिसे युक्त हो गये और उनकी सारी व्याकुलता जाती रही। श्रीनारदजी भगवान् विष्णुके चरणोंमें गिर पड़े और अत्यन्त पश्चात्पाप करने लगे।

भगवान् विष्णुद्वारा नारदजीको

शिवोपासनाका उपदेश

भगवान् विष्णु बोले—तात! खेद न करो, भगवान् शिव तुम्हारा कल्याण करेंगे। तुमने मदसे मोहित होकर जो भगवान् शिवकी बात नहीं मानी थी, उसी अपराधका भगवान् शिवने तुम्हें ऐसा फल दिया है। सबके स्वामी परमेश्वर शंकर ही परब्रह्म परमात्मा हैं, उन्हींका सच्चिदानन्द स्वरूप है। वे ही अपनी मायाको लेकर ब्रह्मा, विष्णु और महेश—इन तीन रूपोंमें प्रकट होते हैं। अपने सारे संशयोंको त्यागकर अनन्य भावसे शिवके शतनाम-स्तोत्रका पाठ करो तथा निरन्तर उन्होंकी उपासना तथा उन्हींका भजन करो। भगवान् शंकरकी उपासनासे सभी प्रकारके पातक एवं दोष समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकार प्रसन्नचित भगवान् विष्णु नारदभूमिको उपदेश देकर वहाँसे अनन्दाधार हो गये।

इसके अनन्तर श्रीनारदजी भी अत्यन्त आनन्दित हो शिवतीर्थीका दर्शन करते हुए भू-मण्डलमें विचरने लगे। अन्तमें वे सबके ऊपर विहजमान शिवस्वरूपीणी काशीपुरीमें

पहुँचे। काशीपुरीका दर्शन करके नारदजी कृतार्थ हो गये। उसके बाद ब्रह्मलोक पहुँचकर शिवतत्त्वका विशेष रूपसे ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छासे नारदजीने ब्रह्माजीको भक्तिपूर्वक नमस्कार किया और कहा कि जगत्रभो! आपकी कृपासे मैंने भगवान् विष्णुके उत्तम माहात्म्यका ज्ञान प्राप्त किया, परंतु शिवतत्त्वका ज्ञान मुझे अभीतक नहीं हुआ है। मैं भगवान् शंकरकी पूजा-विधिको भी नहीं जानता। अतः प्रभो! आप भगवान् शिवके विविध चरितोंको तथा उनके स्वरूपतत्त्व, प्राकट्य, विवाह, गृहस्थ-धर्म सब मुझे बताइये। कातिकेयके जन्मकी कथा भी मुझे सुनाइये।

शिवतत्त्वका निरूपण

ब्रह्माजीने नारदसे शिवतत्त्वका वर्णन करते हुए कहा—शिवतत्त्वका स्वरूप बड़ा उत्कृष्ट तथा अद्भुत है, जिस समय प्रलयकाल उपस्थित हुआ, उस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया। सर्वत्र केवल अन्धकार ही अन्धकार था। इस प्रकार सब और निरन्तर सूचीभेद घोर अन्धकारमें उस समय 'तत्सत् ब्रह्म'—इस श्रुतिमें जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था, जिसे योगीजन अपने हृदयाकाशके अन्दर निरन्तर देखते हैं। कुछ कालके बाद (सृष्टिका समय आनेपर) परमात्माको द्वितीयकी इच्छा प्रकट हुई—उसके भीतर एक-से अनेक होनेका संकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्माने अपनी लीलाशक्तिसे अपने लिये मूर्ति (आकार)-की कल्पना की। वह मूर्ति सम्पूर्ण ऐश्वर्य गुणोंसे सम्पन्न, सर्वज्ञानमयी हुई। जो मूर्तिरहित परब्रह्म है, उसीकी मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव हैं। सभी विद्वान् उन्हींको ईश्वर कहते हैं। उस समय स्वेच्छया विहार करनेवाले उन सदाशिवने अपने विग्रहसे एक स्वरूपभूता शक्तिकी सृष्टि की, जो उनके अपने श्रीअंगसे कभी अलग होनेवाली नहीं थी।

अविमुक्तक्षेत्र काशी

उन साम्बसदाशिव ब्रह्मने एक ही समय शक्तिके साथ 'शिवलोक' नामक क्षेत्रका निर्माण किया। इस क्षेत्रको ही काशी कहते हैं। यह परम निर्वाण या मोक्षका

स्थान है, जो सबके ऊपर विराजमान है।

वे प्रिया-प्रियतमरूप शक्ति और शिव जो परमानन्द स्वरूप हैं, उस मनोरम क्षेत्र काशीपुरीमें नित्य निवास करते हैं।

हे मुने! शिव और शिवाने प्रलयकालमें भी कभी उस क्षेत्रको अपने सान्निध्यसे मुक्त नहीं किया। इसी लिये विद्वान् पुरुष उसे 'अविमुक्तक्षेत्र' भी कहते हैं। यह क्षेत्र आनन्दका हेतु है, इसलिये पिनाकधारी भगवान् शिवने उसका नाम पहले 'आनन्दवन' रखा था।

सदाशिवसे नारायणका प्राकट्य

हे देवर्ण! एक समय उस आनन्दवनमें रमण करते हुए शिवा और शिवके मनमें यह इच्छा हुई कि किसी दूसरे पुरुषकी भी सृष्टि करनी चाहिये। जिसपर सृष्टि-संचालनका महान् भार रखकर हम दोनों केवल काशीमें रहकर इच्छानुसार विचरण करें। वही पुरुष हमारे अनुग्रहसे सदा सबकी सृष्टि करे, वही पालन करे और अन्तमें वही सबका संहार भी करे।

ऐसा निश्चय करके शक्तिसहित सर्वव्यापी परमेश्वर शिवने अपने वाम भागके दसवें अंगपर अमृत मल दिया। वहाँ उसी समय एक पुरुष प्रकट हुआ, जो तीनों लोकोंमें सबसे अधिक सुन्दर और शान्त था। उसकी कान्ति इन्द्रनीलमणिके समान श्याम थी। उसके श्रीअंगोंपर स्वर्णसदृश कनिनिवाले दो रेशमी पीताम्बर शोधा दे रहे थे। शिवजीने 'विष्णु' नामसे उसे विख्यात किया तथा अपने श्वासमारीसे उहें वेदोंका ज्ञान प्रदान किया।

इसके अनन्तर भगवान् विष्णुने दीर्घकालतक तपस्या की। तपस्याके परिश्रमसे विष्णुके अंगोंसे अनेक प्रकारकी जलधाराएँ निकलने लगीं। नार अर्थात् जलमें शयन करनेके कारण ही उनका नारायण—यह श्रुतिसम्मत नाम प्रसिद्ध हुआ।

सदाशिवके दक्षिणांगसे ब्रह्माका प्रादुर्भाव

ब्रह्माजी कहते हैं—हे देवर्ण! जब नारायणदेव जलमें शयन करने लगे, उस समय उनकी नाभिसे भगवान् शंकरकी इच्छासे सहसा एक विशाल तथा उत्तम कमल प्रकट हुआ, जो बहुत बड़ा था, तत्पश्चात्

परमेश्वर साम्बसदाशिवने पूर्ववत् परम प्रयत्न करके मुझे अपने दाहिने अंगसे उत्पन्न किया तथा मुझे तुरन्त ही अपनी मायासे मोहित करके नारायणदेवके नाभिकमलमें डाल दिया और लीलापूर्वक मुझे वहाँसे प्रकट किया। इस प्रकार उस कमलसे पुत्रके रूपमें मुझ हिरण्यगर्भका जन्म हुआ। मेरे चार मुख हुए और शरीरकी कान्ति लाल हुई।

हे मुने! उस समय भगवान् शिवकी इच्छासे परम मंगलमयी तथा उत्तम आकाशवाणी प्रकट हुई। उस वाणीने कहा—तप करो। उस आकाशवाणीको सुनकर अपने जन्मदाता पिताका दर्शन करनेके लिये उस समय पुनः बारह वर्षोंतक मैंने घोर तपस्या की। तब मुझपर अनुग्रह करनेके लिये ही चार भुजाओं और सुन्दर नेत्रोंसे सुशोभित भगवान् विष्णु वहाँ सहसा प्रकट हो गये। तदनन्तर अपनी श्रेष्ठताको लेकर हम दोनोंमें विवाद होने लगा। इसे शान्त करनेके लिये हम दोनोंके सामने एक लिंग प्रकट हुआ। मैं और विष्णु दोनों उन ज्योतिर्मय शिवको प्रणामकर बार-बार कहने लगे—हे महाप्रभो! हम आपके स्वरूपको नहीं जानते; आप जो हैं, वही हैं। आपको हमारा नमस्कार है। आप शीघ्र ही हमें अपने स्वरूपका दर्शन करायें।

भगवान् शिवके शब्दमय शरीरका वर्णन

भगवान् शंकर हम दोनोंपर दयालु हो गये। उस समय वहाँ उन सुरश्रेष्ठसे 'ॐ ॐ' ऐसा शब्दरूप नाद प्रकट हुआ, जो स्पष्ट रूपसे सुनायी दे रहा था। उस परब्रह्म परमात्मा शिवका बाचक एकाक्षर प्रणव ही है। परब्रह्मको इस एकाक्षरके द्वारा ही जाना जा सकता है।

इसी बीचमें विश्वपालक भगवान् विष्णुने मेरे साथ एक और भी अद्भुत और सुन्दर रूपको देखा। हे मुने! वह रूप पाँच मुखों और दस भुजाओंसे अलंकृत था, उसकी कान्ति कर्पूरके समान गौर थी। उस परम उदार महापुरुषके उत्तम लक्षणोंसे सम्पन्न अत्यन्त उत्कृष्ट रूपका दर्शन करके मेरे साथ श्रीहरि कृतार्थ हो गये। तत्पश्चात् भगवान् महेश प्रसन्न होकर दिव्य सब्दमय रूपको प्रकट करके खड़े हो गये।

उसी समय सम्पूर्ण धर्म तथा अर्थका साधक बुद्धिस्वरूप, अत्यन्त हितकारक गायत्री महामन्त्र लक्षित हुआ। आठ कलाओंसे युक्त पंचाक्षर मन्त्र (नमः शिवाय) तथा मृत्युञ्जय मन्त्र, चिन्तामणि मन्त्र और दक्षिणामूर्ति मन्त्रको भगवान् विष्णुने देखा। इसके बाद भगवान् विष्णुने शंकरको 'तत्त्वमसि' वही तुम हो—यह महावाक्य कहा। इस प्रकार उक्त पंचमन्त्रोंको प्राप्त करके वे भगवान् श्रीहरि उनका जप करने लगे। तदनन्तर उन्होंने शिवकी स्तुति की।

विष्णुके द्वारा की हुई अपनी स्तुति सुनकर करुणानिधि महेश्वर प्रसन्न हुए और उमादेवीके साथ सहसा वहाँ प्रकट हो गये।

भगवान् विष्णुने पूछा—हे देव! आप कैसे प्रसन्न होते हैं? आपकी पूजा किस प्रकार की जाय, हम लोगोंको क्या करना चाहिये? कौन-सा कार्य अच्छा है और कौन बुरा है?—इन सब बातोंको हम दोनोंके कल्पणाहेतु आप प्रसन्न होकर बतानेकी कृपा करें।

भगवान् शिव प्रसन्न होकर हम दोनोंसे कहने लगे—मेरा लिंग सदा पूज्य है और सदा ही ध्येय है। लिंगरूपसे पूजा गया मैं प्रसन्न होकर सभी लोगोंको अनेक प्रकारके फल तो देंगा ही साथ ही उनकी अभिलाषाएँ भी पूरी करूँगा। आगे शंकरजीने कहा—मेरी पार्थिव मूर्ति बनाकर आप दोनों अनेक प्रकारसे उसकी पूजा करें। ऐसा करनेपर आपलोगोंको सुख प्राप्त होगा।

त्रिदेवोंके एकत्वका प्रतिपादन

हे ब्रह्मन्! आप मेरी आज्ञाका पालन करते हुए जगत्की सृष्टि कीजिये और हे विष्णु! आप इस चराचर जगत्का पालन कीजिये।

आगे भगवान् शिव कहते हैं—हे ब्रह्मन्! मेरा ऐसा ही परम उत्कृष्ट रूप हमारे इस शरीरसे लोकमें प्रकट होगा, जो नामसे रुद्र कहलायेगा। मेरे अंशसे प्रकट हुए रुद्रकी सामर्थ्य मुझसे कम नहीं होगी। जो मैं हूँ, वही यह रुद्र है। पूजाकी दृष्टिसे भी मुझमें और उसमें कोई अन्तर नहीं है। यह मेरा शिवस्वरूप है। हे महामुन! उनमें परस्पर भेद नहीं करना चाहिये।

वास्तवमें सारा विश्व ही मेरा शिवस्वरूप है। मैं, आप, ब्रह्मा तथा जो ये रुद्र प्रकट होंगे—ये सब—के-सब एक रूप हैं, इनमें भेद माननेपर अवश्य ही बन्धन होगा।

हे विष्णु! अब आप मेरी आज्ञासे जगत्में (सब लोगोंके लिये) मुक्तिदाता बनें। मेरा दर्शन होनेपर जो फल प्राप्त होता है, वही फल आपका दर्शन होनेपर भी प्राप्त होगा। मैंने आज आपको यह वर दे दिया। मेरे हृदयमें विष्णु हैं, विष्णुके हृदयमें मैं हूँ। रुद्र शिवके पूर्णावतार हूँ।

हे विष्णु! जो आपकी शरणमें आ गया, वह निश्चय ही मेरी शरणमें आ गया। जो मुझमें-आपमें अन्तर समझता है, वह निश्चय ही नरकमें गिरता है। इसके बाद भक्तवत्सल भगवान् शम्भु शीघ्र वहीं अन्तर्धान हो गये।

तभीसे इस लोकमें लिंगपूजाका विधान प्रचलित हुआ है। लिंगमें प्रतिष्ठित भगवान् शिव भोग और मोक्ष देनेवाले हैं। शिवलिंगकी वेदी महादेवीका स्वरूप है और लिंग साक्षात् महेश्वर है, इसीमें सम्पूर्ण जगत् स्थित रहता है।

आगेके अध्यायोंमें शिवपूजनकी विधि तथा उसके फलका वर्णन किया गया है। जो शिवभक्तिपरायण होकर प्रतिदिन पूजन करता है, उसे अवश्य ही पग-पगपर सब प्रकारकी सिद्धि प्राप्त होती है। रोग, दुःख, शोक, उद्गेग, कुटिलता, विष तथा अन्य जो भी कष्ट उपस्थित होता है, उसे कल्पणाकारी शिव अवश्य नष्ट कर देते हैं। अतः भगवान् सदाशिवकी प्रसन्नताके लिये सदैव अपने वर्णाश्रमविहित कर्म करते रहना चाहिये।

बिना ज्ञान प्राप्त किये ही जो प्रतिमाका पूजन छोड़ देता है, उसका निश्चित ही पतन हो जाता है। जबतक शरीरमें पाप रहता है, तबतक सिद्धिकी प्राप्ति नहीं होती। पापके दूर हो जानेपर उसका सब कुछ सफल हो जाता है। विज्ञानका मूल अनन्य भक्ति है और ज्ञानका मूल भी भक्ति ही कही जाती है। भक्तिका मूल सत्कर्म और अपने इष्टदेव आदिका पूजन है।

पंचदेवोपासना

जबतक मनुष्य गृहस्थाश्रममें रहे तबतक प्रेमपूर्वक उसे पाँच देवताओं (गणेश, विष्णु, शिव, सूर्य एवं देवी)– की और उनमें भी सर्वश्रेष्ठ भगवान् सदाशिवकी मूर्तिका पूजन करना चाहिये। एकमात्र सदाशिव ही सबके मूल हैं। अतः सदाशिवके पूजनसे ही सब देवताओंका पूजन

हो जाता है और वे प्रसन्न हो जाते हैं।

आगेके अध्यायोंमें मनुष्यकी दैनिकचर्याका वर्णन शास्त्रीय विधिसे किया गया है तथा शिवपूजन-विधि विस्तारसे बतायी गयी है। इसके अनन्तर ब्रह्माकी सृष्टिके सृजनका विस्तारसे वर्णन हुआ है।

इस प्रकार रुद्रसंहिताका सृष्टिखण्ड पूर्ण हुआ।

रुद्रसंहिता (सतीखण्ड)

ब्रह्माजीसे देवी सन्ध्या एवं कामदेवका

प्राकट्य

नारदजीके जिज्ञासा करनेपर ब्रह्माजी वर्णन करते हैं कि मेरे द्वारा जब मानसपुत्रोंकी सृष्टि हो रही थी, उसी समय मेरे मनसे एक सुन्दर रूपवाली श्रेष्ठ युवती भी उत्पन्न हुई। वह सन्ध्याके नामसे प्रसिद्ध हुई। वह प्रातः— सन्ध्या तथा सायं—सन्ध्याके रूपमें अत्यन्त सुन्दरी, सुन्दर भौंहोंवाली तथा मुनियोंके मनको मोहित करनेवाली थी। उस कन्याको देखते ही मैं तथा मेरे मानसपुत्र उसका चिन्तन करने लगे। उसी समय एक अत्यन्त अद्भुत एवं मनोहर 'मानसपुत्र' उत्पन्न हुआ, जो कामदेवके नामसे विख्यात हुआ।

कामदेवने ब्रह्माजीसे पूछा कि मैं कौन-सा कार्य करूँ? मेरे लिये जो कर्म करणीय हो, उस कर्ममें मुझे नियुक्त कीजिये। ब्रह्माजीने कहा—अपने गुप्त रूपसे प्राणियोंके हृदयमें प्रवेश करते हुए तुम स्वयं सबके सुखके कारण बनकर सनातन सृष्टि करो।

उसी समय कामदेवने तीक्ष्ण पृथ्वीवाणोंसे मुझ ब्रह्मा तथा सभी मानसपुत्रोंको मोहित कर दिया। सभीके मनमें काम-विकार उत्पन्न हो गया। हम सभी देवी सन्ध्या के प्रति आकर्षित होने लगे। ब्रह्माजीके पुत्र धर्मने अपने पिता तथा भाइयोंकी ऐसी दशा देखकर धर्मकी रक्षा करनेवाले भगवान् सदाशिवका स्मरण किया।

भगवान् सदाशिवके प्रभावसे ब्रह्माजीका काम-विकार दूर हो गया। उसी समय दक्षके शरीरसे श्वेतकण निकलकर पृथ्वीपर गिरा, उससे समस्त गुणसम्मन्न, परम मनोहर एक स्त्रीकी उत्पत्ति हुई, जिसका नाम रति था। रतिका कामदेवसे विवाह हो गया।

नारदजी कहते हैं—हे ब्रह्मन्! पितरोंकी जन्मदात्री उस ब्रह्मपुत्री सन्ध्याका क्या हुआ?

ब्रह्माजी कहते हैं—वह सन्ध्या जो पूर्वकालमें मेरे मनसे उत्पन्न हुई, वही तपस्याकर शरीर छोड़नेके बाद अरुन्धती हुई। उस बुद्धिमती तथा उत्तम ब्रत करनेवाली सन्ध्याने मुनिश्रेष्ठ मेधातिथिकी कन्याके रूपमें जन्म ग्रहणकर ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वरके वचनोंसे महात्मा वसिष्ठका अपने पतिरूपमें वरण किया। वह पतिव्रता, वन्दनीया, पूजनीया तथा दयाकी मूर्ति थी।

नारदजीने कहा—ब्रह्मन्! आपने अरुन्धतीकी तथा पूर्वजन्ममें उसकी स्वरूपभूता सन्ध्याकी बड़ी उत्तम कथा सुनायी है, अब आप भगवान् शिवके उस परम पवित्र चरित्रका वर्णन कीजिये, जो दूसरोंके पापोंका विनाश करनेवाला, उत्तम एवं मंगलदायक है।

शिवविवाहके लिये ब्रह्माजीका प्रयत्न

ब्रह्माजीने कहा—तात! पूर्वकालमें मैं जब एक बार मोहमें पड़ गया और भगवान् शंकरने मेरा उपहास किया तो मुझे बड़ा खोभ हुआ था। मैं भगवान् शिवके प्रति ईर्ष्या करने लगा। मैं उस स्थानपर गया, जहाँ दक्ष उपस्थित थे, वहाँ रतिके साथ कामदेव भी था। उस समय मैंने दक्ष तथा दूसरे पुत्रोंको सम्बोधित करते हुए कहा—पुत्रो! तुम्हें ऐसा प्रयत्न करना चाहिये, जिससे महादेवजी किसी कमनीय कान्तिवाली स्त्रीका पाणिग्रहण करें। उसके बाद भगवान् शिवको मोहित करनेका भार मैंने कामदेवको सौंपा। मेरी आज्ञा मानकर कामदेवने बामदेव शिवको मोहनेकी बराबर चेष्टा की, परंतु उसे सफलता न मिली। कामदेवने कहा—प्रभो! सुन्दर स्त्री ही मेरा अस्त्र है, अतः शिवजीको मोहित करनेके लिये

किसी नारीकी सृष्टि कीजिये। यह सुनकर मैं चिन्तामें पड़ गया। मैं मनमें सोचने लगा कि निविकार भगवान् शंकर किसी स्त्रीको अपनी सहधर्मिणी बनाना कैसे स्वीकार करेंगे? यही सोचते-सोचते मैंने भक्तिभावसे उन श्रीहरिका स्मरण किया, जो साक्षात् शिवस्वरूप और मेरे शरीरके जन्मदाता हैं। मेरी स्तुतिसे प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु प्रकट हो गये और मुझ ब्रह्मासे बोले—‘लोकसभ्या ब्रह्मान्! तुमने किसलिये आज मेरा स्मरण किया है?’

तब मैंने कहा—केशव! यदि भगवान् शिव किसी तरह पत्नीको ग्रहण कर लें तो मैं सुखी हो जाऊँगा। मेरे अन्तःकरणका सारा दुःख दूर हो जायगा। इसीके लिये मैं आपकी शरण आया हूँ। मेरी यह बात सुनकर भगवान् मधुसूदन बोले—‘हे विधाता! शिव ही सबके कर्ता, भर्ता (पालक) और हर्ता (संहारक) हैं। वे ही परातपर परब्रह्म एवं परमेश्वर हैं। तुम उन्हींकी शरणमें जाओ और सर्वात्मना शम्भुका भजन करो, इससे सन्तुष्ट होकर वे तुम्हारा कल्याण करेंगे।’

ब्रह्मान्! यदि तुम्हारे मनमें यह विचार हो कि शंकर पत्नीका पाणिग्रहण करें तो शिवाको प्रसन्न करनेके उद्देश्यसे शिवका स्मरण करते हुए उत्तम तपस्या करो। यदि वे देवेश्वरी प्रसन्न हो जायें तो सारा कार्य सिद्ध कर देंगे।

इसके अनन्तर ब्रह्माजीने परब्रह्मस्वरूपिणी शम्भुप्रिया देवी दुर्गाकी आराधना की।

ब्रह्माजीने नारदजीसे कहा—हे मुने! मेरेद्वारा स्तुति करनेपर वे योगनिद्रा भगवती मेरे सामने प्रकट हो गयीं। भक्तिसे सिर झुकाकर मैं उहें प्रणामकर स्तुति करने लगा। मेरी स्तुतिसे प्रसन्न होकर कल्याण करनेवाली वे महाकाली प्रेमपूर्वक कहने लार्णा—हे ब्रह्मान्! आपने मेरी स्तुति किसलिये की है? आप अपनी मनोभिलिष्ट बात कहें, मैं उसे निश्चितरूपसे पूर्ण करूँगी।

ब्रह्माजी बोले—हे देवी! आप दक्षकी कन्या बनकर अपने रूपसे शिवजीको मोहित करनेवाली हों। हे शिवे! आप शिवपत्नी बनें।

भगवतीने कहा—हे पितामह! मैं दक्षकी पत्नीके

गर्भसे सतीरूपमें जन्म लेकर अपनी लीलाके द्वारा शिवजीको प्राप्त करूँगी। यह कहकर जगदम्बा शिव वहीं अन्तर्धान हो गयीं।

दक्षकन्याके रूपमें सतीका प्रादुर्भाव

इसके अनन्तर मेरी आज्ञा पाकर दक्षप्रजापतिने भगवतीको प्रसन्न करनेके लिये घोर तपस्या प्रारम्भ कर दी। दक्षकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवती जगदम्बा प्रकट हो गयीं और दक्षको यह वरदान दिया कि मैं कुछ ही दिनोंमें आपकी कन्या बनकर शिवकी पत्नी बनूँगी। यदि आपने कभी मेरा अनादर किया तो मैं अपना शरीर त्याग दूँगी और दूसरा शरीर धारण करूँगी—यह कहकर महेश्वरी वहाँ से अन्तर्धान हो गयीं। कुछ समय बाद शुभ मुहूर्तमें भगवती शिवा दक्षके घरमें प्रकट हो गयीं। दक्षने प्रसन्न होकर विष्णु आदि देवताओंकी आज्ञासे सभी गुणोंसे सम्पन्न भगवती जगदम्बिकाका नाम ‘उमा’ रखा। कुछ समय व्यतीत होनेके अनन्तर युवावस्था प्राप्त होनेपर परमेश्वरी सती महेश्वरको पतिरूपमें प्राप्त करनेकी इच्छासे माताकी आज्ञासे तपस्या करने लगीं। विष्णु आदि सभी देवताएं मुनिगण सती देवीकी तपस्याका दर्शनकर आश्चर्यचकित हो गये। वे सभी सती देवीको प्रणामकर भगवान् शिवके परमधारम कैलासको चले गये। वहाँ सभी देवताओं तथा ऋषियोंने भगवान् शंकरकी स्तुति की। उनको स्तुतिसे प्रसन्न होकर भगवान् शंकरने उनके आनेका कारण पूछा। सभी देवताओं और ऋषियोंने भगवान् शिवसे आग्रह किया कि विश्वहितके लिये तथा देवताओंके सुखके लिये परम सुन्दरी स्त्रीको पत्नीके रूपमें ग्रहण करें।

हे प्रभो! वे शिवा सती नामसे दक्षपुत्रीके रूपमें अवतीर्ण हुई हैं। वे दृढ़व्रतमें स्थित होकर आपके लिये तप कर रही हैं। वे महातेजस्विनी सती आपको पतिरूपमें प्राप्त करनेकी इच्छुक हैं। हे महेश्वर! उन सतीके कूपर कृपाकर उन्हें वर देकर उनके साथ विवाह करनेकी कृपा करें।

भक्तवत्सल भगवान् शिवजीने ‘तथास्तु’ कहकर उनके निवेदनको स्वीकार कर लिया।

शिव और सतीका विवाह

सतीकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवान् शंकर प्रकट हो गये और भगवती सतीको पलीरूपमें स्वीकार करनेका बर प्रदान कर दिया। इसके अनन्तर ब्रह्माजीकी सन्निधिमें दक्षके यहाँ शिव-सतीका विवाह समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। विवाहके अनन्तर भगवती सती और भगवान् शंकर अपने स्थान कैलासपर पधार गये।

कैलास तथा हिमालय पर्वतपर शिवा और शिवके विविध विहारोंका विस्तारपूर्वक वर्णन करनेके पश्चात् ब्रह्माजीने कहा—मुने! एक दिनकी बात है, देवी सतीने भगवान् शंकरसे जीवोंके उद्धारके लिये तत्त्वज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा व्यक्त की। भगवान् शंकरने अपनी भार्या सतीसे उत्तम ज्ञानका प्रतिपादन करते हुए नवधार्भक्तिके स्वरूपका विवेचन किया।

सतीमोहकी कथा

एक समयकी बात है, भगवान् रुद्र वृषभब्रैष्ट नन्दीपर आरूढ़ हो भूतलपर भ्रमण कर रहे थे। घूमते-घूमते उन्होंने दण्डकारण्यमें लक्ष्मणसहित श्रीरामको देखा, जो अपनी प्यारी पली सीताकी खोज करते हुए 'हा सीते!' ऐसा उच्च स्वरसे युक्तरते तथा बारंबार रोते थे। उस समय भगवान् शंकरने बड़ी प्रसन्नताके साथ उन्हें प्रणाम किया और श्रीरामके सामने अपनेको प्रकट किये बिना वे दूसरी ओर चल दिये। भगवान् शिवकी मोहमें डालनेवाली ऐसी लीला देख सतीको बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने शंकायुक्त होकर भगवान् शंकरसे पूछा—हे देव! विहसे व्याकुल उन दोनोंको देखकर आपने इतना विनम्र होकर उन्हें आदरपूर्वक प्रणाम क्यों किया? भगवान् शिवने कहा—हे देवी! ये दोनों राजा दशरथके विद्वान् पुत्र हैं, बड़े भाई राम भगवान् विष्णुके सम्पूर्ण अंशसे प्रकट हुए हैं, छोटे भाई लक्ष्मण शेषावतार हैं। वे जगत्के कल्याणके लिये इस पृथ्वीपर अवतारीं हुए हैं। भगवान् शिवकी यह बात सुनकर भी सतीके मनमें विश्वास नहीं हुआ। शिवने कहा—यदि तुम्हारे मनमें मेरे कथनपर विश्वास नहीं है तो श्रीरामकी परीक्षा कर लो, जिससे तुम्हारा भ्रम नष्ट हो जाय।

ब्रह्माजी कहते हैं—भगवान् शिवकी आज्ञासे रामकी

परीक्षा लेनेके लिये सती सीताका रूप धारणकर रामके पास गयी। सतीको सीताके रूपमें सामने आया देख 'शिव-शिव' का जप करते हुए श्रीराम सब कुछ जान गये। भगवान् रामने सतीसे पूछा—भगवान् शम्भु कहाँ गये हैं? आपने अपना स्वरूप त्यागकर किसलिये यह नूतन रूप धारण किया है? श्रीरामजीकी यह बात सुनकर सती उस समय आशचर्यचकित हो गयी और लज्जित भी हुई। उन्होंने कहा—हे राघव! मैंने उनकी आज्ञा लेकर आपकी परीक्षा की है, अब मुझे ज्ञात हो गया कि आप साक्षात् विष्णु हैं। आप शिवके बन्दीय कैसे हो गये? कृपाकर आप मेरे इस संशयको दूर करें।

श्रीराम बोले—एक समय भगवान् शम्भुने अपने परमधारमें विश्वकर्माको बुलाकर एक रमणीय ध्वन बनवाया और उसमें एक श्रेष्ठ सिंहासनका भी निर्माण करवाया। उस मण्डपमें स्वयं भगवान् महेश्वरने श्रीहरिका अभिषेक किया और उन्हें अपना सारा ऐश्वर्य प्रदान करते हुए ब्रह्माजीसे कहा—लोकेश! आजसे मेरी आज्ञाके अनुसार ये विष्णु हरि स्वयं मेरे बन्दीय हो गये—इस बातको सभी सुन लें। ऐसा कहकर रुद्रदेवने स्वयं ही श्रीहरिको प्रणाम किया।

इधर भगवती सती चिन्ताग्रस्त होकर शिवजीके पास आ गयी। भगवान् शिवके पृष्ठनेपर सतीने कहा—मैंने कोई परीक्षा नहीं ली। इसके अनन्तर भगवान् महेश्वरने व्यान लगाकर सतीका सारा चरित्र जान लिया। शिवजी बोले—यदि मैं अब सतीसे स्नेह करूँ तो मुझ शिवकी महान् प्रतिज्ञा ही नष्ट हो जायगी—इस प्रकार विचारकर शंकरजीने हृदयसे सतीका त्याग कर दिया।

दक्षप्रजापतिका शिवसे द्वेष

पूर्वकालमें प्रयागमें मुनियों तथा महात्माओंका विधि-विधानसे बड़ा यज्ञ हुआ। इस यज्ञमें दक्षप्रजापतिके पथानेपर समस्त देवर्थियोंने नतमस्तक हो स्तुति और प्रणामद्वारा दक्षका आदर-सत्कार किया, परंतु उस समय महेश्वरने दक्षको प्रणाम नहीं किया। महादेवजीको वहाँ मस्तक न झुकाते देख दक्षप्रजापति रुद्रप्र कृपित होते हुए बोले—मैं इस रुद्रको यज्ञसे बहिष्कृत करता हूँ। यह

देवताओंके साथ यज्ञमें भाग न पाये।

सतीका योगाग्निद्वारा शरीरको भस्म करना

ब्रह्माजी बोले—हे मुने! एक समय दक्षने एक बड़े यज्ञका आयोजन किया और उस यज्ञमें सभी देवताओं तथा ऋषियोंको बुलाया। देवता तथा ऋषिगण बड़े उत्साहके साथ उस यज्ञमें जा रहे थे। सतीको जब यह मालूम हुआ कि मेरे पिता दक्षने बड़े यज्ञका आयोजन किया है तो उन्होंने भगवान् शंकरसे वहाँ जानेकी अनुमति माँगी। महेश्वर बोले—देवि! तुम्हारे पिता दक्ष मेरे विशेष द्वाही हो गये हैं, जो लोग विना बुलाये दूसरोंके घर जाते हैं, वे वहाँ अनादर ही पाते हैं, जो मृत्युसे भी बढ़कर होता है।

भगवान् शंकरकी यह बात सुनकर सती अपने पितापर बहुत कुपित हुई तथा वहाँ जानेके लिये तत्पर हो गयी। शिवजीने अपने गणोंके साथ सजे हुए नन्दी वृषभपर सतीको चिदा किया। यज्ञशालामें शिवका भाग न देखकर असह्य क्रोध प्रकट करते हुए वे विष्णु आदि सब देवताओंको फटकारने लगीं। अपने पिताके प्रति रोष व्यक्त करते हुए वे बोलीं—हे तात! आप शंकरके निन्दक हैं, आपको पश्चात्पाप करना पड़ेगा। इस लोकमें महान् दुःख भोगकर अन्तमें आपको यातना भोगनी पड़ेगी। जिनका 'शिव'—यह दो अक्षरोंका नाम एक बार उच्चरित हो जानेपर सम्पूर्ण पापराशिको शीघ्र ही नष्ट कर देता है, अहो! आप उन्हीं शिवसे विपरीत होकर उन पवित्र कीर्तिवाले सर्वेश्वर शिवसे विद्वेष करते हैं।

इस प्रकार दक्षपर कुपित हो सहसा अपने शरीरको त्यागेनेकी इच्छासे सतीने योगमार्गसे शरीरके दग्ध हो जानेपर पवित्र वायुमय रूप धारण किया। तदनन्तर अपने पतिके चरण-कमलका चिन्नन करते हुए सतीने अन्य सब वस्तुओंका ध्यान भुला दिया। वहाँ उन्हें पतिके चरणोंके अतिरिक्त कुछ दिखायी नहीं दिया। हे मुनिश्रेष्ठ! यज्ञाग्निमें गिरा उनका निष्पाप शरीर अग्निसे जलकर उनके इच्छानुसार उसी समय भस्म हो गया।

उस समय देवताओं आदिने जब यह घटना देखी तो वे बड़े जोरसे हाहाकार करने लगे। सतीके प्राणत्यागको

देखकर शिवजीके पार्षद शीघ्र ही अस्त्र-शस्त्र लेकर खड़े हो गये। उसी समय आकाशवाणी हुई—समस्त देवता आदि यज्ञमण्डपसे शीघ्र निकलकर अपने-अपने स्थान को छले जायें।

दक्षयज्ञविघ्वंसका वृत्तान्त

गणोंके मुखसे तथा नारदके द्वारा सतीके दग्ध होनेका समाचार प्राप्त हुआ, जिसे सुनकर भगवान् शंकर अत्यधिक कुपित हो गये। शिवने अपनी जटासे वीरभद्र और महाकालीको प्रकट करके उन्हें यज्ञको विघ्वंस करनेकी तथा विरोधियोंको जला डालनेकी आज्ञा प्रदान की।

दक्ष-यज्ञ-विघ्वंसके लिये वीरभद्र एवं महाकालीने प्रस्थान किया। उधर दक्षके यज्ञमण्डपमें यज्ञ-विघ्वंसकी सूचना देनेवाले त्रिविध उत्पात प्रकट होने लगे। बहुत-से भयानक अपशकुन होने लगे। इसी बीच आकाशवाणी हुई—ओ दक्ष! तू महामूढ़ और पापात्मा है, भगवान् हरकी ओरसे तुझे महान् दुःख प्राप्त होगा। जो मूढ़ देवता आदि तेरे यज्ञमें स्थित हैं, उनको भी महान् दुःख होगा।

आकाशवाणीकी यह बात सुनकर और अशुभ-सूचक लक्षणोंको देखकर दक्ष तथा देवता आदिको भी अत्यन्त भय प्राप्त हुआ। दक्षने अपने यज्ञकी रक्षाके लिये भगवान् विष्णुसे अत्यन्त दीन होकर प्रार्थना की। भगवान् विष्णुने भी कई प्रकारसे दक्षको समझाते हुए शिवकी महिमाका वर्णन किया।

इस बीच शिवगणोंके साथ वीरभद्रके वहाँ पहुँचनेपर घोर युद्ध प्रारम्भ हो गया। विष्णु और देवतागण थोड़ी देसे वहाँसे अन्तर्धान हो गये। वीरभद्रने अपने दोनों हाथोंसे दक्षकी गर्दन मरोड़कर तोड़ डाली और सिरको अग्निकुण्डमें डाल दिया। इसके अतिरिक्त वहाँ जो भी देवगण थे, वे भी घायल हो गये।

वे वीरभद्र दक्ष और उनके यज्ञका विनाश करके कृतकार्य हो तुरन्त कैलास पर्वतपर चले गये। कार्यको पूर्ण किये हुए वीरभद्रको देखकर परमेश्वर शिवजी मन-ही-मन प्रसन्न हुए और उन्होंने वीरभद्रको गणोंका अध्यक्ष बना दिया।

शिवके अनुग्रहसे दक्षका जीवित होना और यज्ञकी पूर्णता

नारदजीने ब्रह्माजीसे पूछा—हे तात! परक्रमी वीरभद्र जब दक्षके यज्ञका विनाश करके कैलास पर्वत चले गये तब क्या हुआ? इसके उत्तरमें ब्रह्माजीने कहा—समस्त देवताओं और मुनियोंने छिन्-भिन्न अंगोंवाले होकर मेरे पास आकर पूर्ण रूपसे अपने क्लेशको बताया। उनकी बात सुनकर मैं व्यथित हो गया। तदनन्तर देवताओं और मुनियोंके साथ मैं विष्णुलोक गया। वहाँ मैंने भगवान् विष्णुकी स्तुति करते हुए अपने दुःखका वर्णन किया तथा भगवान् श्रीहरिसे प्रार्थना की कि हे देव! जिस तरह भी यज्ञ पूर्ण हो, यज्ञकर्ता दक्ष जीवित हों तथा समस्त देवता और मुनि सुखी हो जायें, आप वैसा कीजिये। देवता और मुनि लोग आपकी शरणमें आये हैं। भगवान् विष्णु बोले—हे विधे! समस्त देवता शिवके अपराधी हैं; व्याप्तिकि इन सबने उनको यज्ञका भाग नहीं दिया। अब आप सभी लोग शुद्ध हृदयसे भगवान् शिवके चरणोंमें गिरकर उन्हें प्रसन्न कीजिये।

इसके अनन्तर विष्णु आदि सभी देवताओंने कैलास पर्वतपर विराजमान वटवृक्षके नीचे बैठे हुए भगवान् शिवजीका दर्शन किया तथा सभी देवताओंने भगवान् शिवके चरणोंमें प्रणाम किया। भगवान् शंकरकी विशेषरूपसे प्रार्थना करते हुए देवताओंने कहा—हे करुणानिधान! आप हम लोगोंकी रक्षा कीजिये। आप प्रसन्न होकर दक्षकी यज्ञशालाकी ओर चलें। उनकी प्रार्थनासे प्रसन्न होकर भगवान् शम्भु विष्णवादि देवताओंके साथ कनखलमें स्थित प्रजापति दक्षकी यज्ञशालामें गये। वहाँ वीरभद्रद्वारा किया गया यज्ञका विष्णुसंस रुद्रने देखा।

यज्ञकी वैसी दुरवस्था देखकर भगवान् शंकरने वीरभद्रको बुलाकर कहा—हे महाबाहो! तुमने थोड़ी ही देरमें देवताओं तथा ऋषियों आदिको बड़ा भारी दण्ड दे दिया। जिसने विलक्षण यज्ञका आयोजनकर यह द्रोहपूर्ण कार्य किया, उस दक्षको तुम शीघ्र यहाँ ले आओ। वीरभद्रने शीघ्रतापूर्वक दक्षका धड़ लाकर शम्भुके समक्ष रख दिया। भगवान् शंकरने वीरभद्रसे पूछा—दक्षका सिर

कहाँ है? वीरभद्रने कहा—हे शंकर! मैंने तो उसी समय दक्षके सिरको यज्ञकुण्डमें हवन कर दिया।

तदनन्तर शम्भुके आदेशसे प्रजापति दक्षके धड़के साथ सवनीय पशु—बकरेका सिर जोड़ दिया गया। उस सिरके जुड़ जाते ही शम्भुकी कृपादृष्टि पड़नेसे प्रजापति दक्ष तत्क्षण जीवित हो गये। शिवजीके दर्शनसे तत्काल उनका अन्तःकरण निर्मल हो गया। तदनन्तर लज्जित होकर वे भगवान् शंकरकी स्तुति करते हुए बोले—हे महादेव! आपको नमस्कार है, मुझपर कृपा कीजिये। आप मेरे अपराधको क्षमा कीजिये। दक्षप्रजापतिकी स्तुतिसे प्रसन्न होकर महादेवजी बोले—हे दक्ष! मैं प्रसन्न हूँ, यद्यपि मैं सबका ईश्वर हूँ और स्वतन्त्र हूँ, फिर भी सदा भक्तोंके अधीन रहता हूँ। केवल कर्मके वशीभूत मूढ़ मानव न बेदोंसे, न यज्ञोंसे, न दानोंसे और न तपस्यासे ही मुझे पा सकते हैं, तुम केवल कर्मके द्वारा ही संसारको पार करना चाहते थे, इसीलिये रुद्ध होकर मैंने इस यज्ञका विनाश किया है। अतः हे दक्ष! आजसे तुम बुद्धिके द्वारा मुझे परमेश्वर मानकर ज्ञानका आश्रय लेकर सावधान होकर कर्म करो। यदि कोई विष्णुभक्त मेरी निन्दा करेगा और मेरा भक्त विष्णुकी निन्दा करेगा तो आपको दिये हुए समस्त शाप उन्हीं दोनोंको प्राप्त होंगे और निश्चय ही उन्हें तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति नहीं होगी।

हे मुने! उसके बाद भगवान् शिवकी आज्ञा प्राप्तकर प्रसन्नचित्त शिवभक्त दक्षने शिवजीकी कृपासे यज्ञ पूरा किया। तदनन्तर सब देवता और ऋषि सन्तुष्ट होकर अपने-अपने स्थानको चले गये।

भगवान् शंकरकी महिमा अनन्त है, जिसे बड़े-बड़े विद्वान् भी जाननेमें असमर्थ हैं, किंतु भक्त लोग उनकी कृपासे बिना श्रमके ही उत्तम भक्तिके द्वारा उसे जान लेते हैं।

हे नारद! इस प्रकार मैंने आपसे सतीके परम अद्भुत चरितका वर्णन किया, जो धोग-मोक्षको देनेवाला तथा सभी काप्तनाओंको पूर्ण करनेवाला है।

इस प्रकार रुद्रसंहिताका सतीखण्ड पूर्ण हुआ।

रुद्रसंहिता (पार्वतीखण्ड)

पार्वतीखण्डके प्रथम अध्यायमें पितरोंकी कन्या मेनाके साथ हिमालयके विवाहका वर्णन हुआ है। देवताओंके आग्रह करनेपर पितरोंने अपनी कन्या मेनाका विवाह विधिपूर्वक हिमालयके साथ कर दिया।

पितरोंकी तीन कन्याओंका वृत्तान्त

ब्रह्माजीके पुत्र दक्षको साठ कन्याएँ हुईं, उनमेंसे एक स्वधा नामकी कन्याका विवाह उन्होंने पितरोंके साथ कर दिया। स्वधाकी तीन पुत्रियाँ थीं। ये पितरोंकी मानसिक पुत्रियाँ थीं। इनका जन्म माताके गर्भसे नहीं, उनके मनसे हुआ था। ये तीनों बहनें भगवान् विष्णुके निवास-स्थान श्वेतद्वीपमें उनका दर्शन करनेके लिये गयीं। वहाँ उनका दर्शनकर वे वहाँ रहर गयीं। उसी समय ब्रह्माजीके पुत्र सनत्कुमार वहाँ पहुँच गये। वहाँ उपस्थित सभीने खड़े होकर सनत्कुमारका स्वागत किया, परंतु ये तीनों बहनें बैठी रह गयीं। इससे नाराज होकर सनत्कुमारने इन तीनोंको शाप दे दिया। बादमें तीनोंद्वारा स्तुति करनेपर सनत्कुमारने प्रसन्न होकर वरदान भी दिया और कहा कि तुम तीनोंमें ज्येष्ठ कन्या मेना हिमालयकी पत्नी बनेगी, जिससे पार्वतीका जन्म होगा। दूसरी धन्या नामवाली कन्या राजा जनककी पत्नी होगी, जिससे सीताका जन्म होगा। तीसरी कन्या कलावती वृषभानकी पत्नी होगी, जिससे 'राधा' नामकी कन्याका जन्म होगा। पार्वती भगवान् शिवकी पत्नी बनेगी, सीता भगवान् रामकी पत्नी बनेगी और राधा भगवान् कृष्णको प्राप्त करेंगी। इस प्रकार शापके व्याजसे दुर्लभ वरदान देकर सनत्कुमारसुनि भाइयोंसहित अन्तर्धान हो गये।

ब्रह्माजी नारदजीसे कहते हैं—हे नारद! मेनाके साथ हिमालयका विवाह होनेके अनन्तर श्रीविष्णु आदि समस्त देवता और महात्मा मुनिाण गिरिराज हिमालयके पास गये तथा हिमालयको जगदम्बा भगवती सतीके दक्ष-यज्ञमें शरीर त्यागनेकी कथा सुनायी और निवेदन किया कि यदि वे सती पुनः तुम्हारे घरमें प्रकट हो जायें तो देवताओंका महान् लाभ हो सकता है। देवताओंकी

यह बात सुनकर गिरिराज हिमालय मन-ही-मन प्रसन्न होकर बोले—प्रभो! ऐसा हो तो बड़े सौभाग्यकी बात है। तदनन्तर वे देवता उन्हें बड़े आदसे उमाको प्रसन्न करनेकी विधि बताकर स्वयं भगवती उमाकी शरणमें गये और अद्वापूर्वक उनकी स्तुति करने लगे।

देवताओंके इस प्रकार स्तुति करनेपर जगजननी देवी दुर्गा उनके सामने प्रकट हो गयीं। देवताओंने निवेदन किया—भगवती शिवे! आप भूतलपर अवतीर्ण होकर पुनः रुद्रदेवकी पत्नी बनें और यथायोग्य ऐसी लीला करें, जिससे देवताओंका मनोरथ पूर्ण हो जाय। हे देवी! इससे कैलास पर्वतपर निवास करनेवाले रुद्रदेवभी सुखी होंगे। आप ऐसी कृपा करें, जिससे सब सुखी हो जायें और सबका सारा दुःख नष्ट हो जाय। भक्तवत्सला दयामयी उमादेवी विष्णु आदि सभी देवताओंको सम्बोधित करके प्रसन्नतापूर्वक बोलीं—हे देवताओं तथा मुनियो! आप सब अपने-अपने स्थानको जायें, मैं अवतार लेकर मेनाकी पुत्री होकर रुद्रदेवकी पत्नी बनौंगी—यह मेरा अत्यन्त गुप्त मत है। यह कहकर जगदम्बा अदृश्य हो गयीं और तुरन्त अपने लोकमें चली गयीं।

जगदम्बाका मेना एवं हिमाचलको वरदान

इधर गिरिराज हिमाचल एवं मेना—दोनों दम्पतीने भगवती जगदम्बाको प्रसन्न करनेके लिये तपस्या आरम्भ की। उनकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवती उमादेवीने प्रत्यक्ष दर्शन देकर प्रसन्नतापूर्वक मेनासे मनोऽभिलाषित वर माँगनेका आग्रह किया। मेनाने कहा—जगदम्बिके! यदि मैं वर पानेके योग्य हूँ तो मुझे सौ पुत्र हों, उन पुत्रोंके पश्चात् मेरे एक पुत्री हो। शिवे! आप ही देवताओंका कार्य सिद्ध करनेके लिये मेरी पुत्री तथा रुद्रदेवकी पत्नी बनें और तदनुसार लीला करें। मेनाकी बात सुनकर प्रसन्नहृदया देवीने उनके मनोरथको पूर्ण करनेका वरदान दिया और कहा कि मैं स्वयं तुम्हारे यहाँ पुत्रीके रूपमें उत्पन्न होकर देवताओंका समस्त कार्य सिद्ध करूँगी—ऐसा कहकर जगदम्बी परमेश्वरी शिवा

अदृश्य हो गयीं।

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे नारद! तदनन्तर मेना और हिमालय कन्या-प्राप्तिके निमित्त भगवती उमाकी उपासना करने लगे। कुछ समय बाद भगवती जगदम्बा जन्म लेकर मेनाके समक्ष अपने स्वरूपमें प्रकट हो गयीं। उसी क्षण विष्णु आदि सब देवता वहाँ आये और जगदम्बाका दर्शनकर उन्होंने उनका स्वत्वन किया। जब देवता लोग स्तुति करके चले गये तो देवीके उस दिव्य रूपका दर्शन करके मेनाको ज्ञान प्राप्त हो गया। मेनाने प्रार्थना की कि हे महेश्वरी! आप कृपा करें, इसी रूपमें मेरे ध्यानमें स्थित हो जायें। साथ ही मेरी पुत्रीके अनुरूप प्रत्यक्ष दर्शनीय रूप धारण करें।

ब्रह्माजी कहते हैं—नारद! मेनाके समक्ष वह कन्या लौकिक गतिका आश्रय लेकर रोने लगी। उसका मनोहर रुदन सुनकर सब लोग प्रसन्न होकर उसके पास पहुँच गये। देवी शिवा दिनों-दिन आनन्दपूर्वक बढ़ने लगीं।

देवर्षि नारदद्वारा बालिका पार्वतीके भविष्यकी बात बताना

एक समयकी बात है, नारदजी हिमाचलके घर गये। गिरिराज हिमालयने उन्हें प्रणाम करके उनकी पूजा की और अपनी पुत्रीको बुलाकर उनके चरणोंमें प्रणाम कराया तथा नारदजीसे निवेदन किया कि मेरी पुत्रीकी जन्म-कुण्डलीमें जो गुण-दोष हों, उन्हें बताइये? मेरी देटी किसकी सौभाग्यवती प्रिय पत्नी होगी? नारदजीने शिवाकी हस्तरेखा देखकर बताया—शैलराज और मेना! यह कन्या समस्त शुभ लक्षणोंसे युक्त है। अपने पतिके लिये सुखदायिनी और माता-पिताकी कीर्ति बढ़ानेवाली होगी। हे गिरिराज! तुम्हारी पुत्रीके हाथमें सब उत्तम लक्षण ही विद्यमान हैं, केवल एक रेखा विलक्षण है, जिसके अनुसार इसका पति ऐसा होगा, जो योगी, नंग-धड़ा रहनेवाला, निर्जुन और निष्काम होगा। उसके न माँ होगी न बाप। उसको मान-सम्मानका भी कोई छाल नहीं रहेगा और वह सदा अमंगल वेष धारण करेगा। नारदकी इन बातोंको सुनकर मेना और हिमाचल—दोनों अत्यन्त दुखित हुए, परंतु जगदम्बा शिवा नारदके

वचनको सुनकर अपने भावी पतिको शिव मानकर मन-ही-मन हर्षसे खिल उठीं।

हिमवान्‌ने कहा—मुने! मैं अपनी पुत्रीको उससे बचानेके लिये क्या उपाय करूँ? नारदजीने उन्हें सब प्रकारसे सान्त्वना दी और कहा कि ये सारे लक्षण भगवान् शिवमें घटते हैं, तुम्हें यह कन्या भगवान् शंकरके शिवा दूसरे किसीको नहीं देनी चाहिये। नारदने गिरिराजको शिवकी पूर्वपत्नी सतीका आख्यान सुनाया और कहा कि सती ही फिर तुम्हारे घरमें उत्पन्न हुई है। तुम्हारी पुत्री साक्षात् जगदम्बा शिवा है। यह पार्वती भगवान् हरकी पत्नी होगी, इसमें संशय नहीं है।

कुछ समय व्यतीत होनेपर मेनाने हिमवान्‌से पार्वतीके लिये सुन्दर वर खोजनेका अनुरोध किया। हिमवान्‌ने मेनाको समझाया कि शिव ही पार्वतीके लिये योग्य वर हैं, परंतु उन्हें प्राप्त करनेके लिये पार्वतीको तपस्या करनेकी प्रेरणा देनी चाहिये। हिमवान्‌की बातसे सन्तुष्ट होकर मेना पार्वतीके पास गयीं, परंतु वह तपस्याकी बात पार्वतीसे कहनेमें संकोच करने लगीं। उसी समय पार्वतीने स्वयं अपने एक स्वप्नको बात मातासे बतायी और कहा कि आज स्वप्नमें एक दयालु तपस्वी ब्राह्मणने मुझे शिवको प्राप्त करनेके लिये उत्तम तपस्या करनेका उपदेश दिया है। यह सुनकर मेनाकाने वहाँ शीघ्र अपने



पतिको बुलाकर पुत्रीके देखे हुए उस स्वप्नको बताया।
यह सुनकर गिरिराज बड़े प्रसन्न हुए।

हिमवान्द्वारा पुत्री पार्वतीको शिवकी सेवामें रखना

ब्रह्माजी बोले—हिमालयकी वह लोकपूजित पुत्री पार्वती उनके घरमें बढ़ती हुई आठ वर्षकी हो गयी। उसी समय शम्भुने अपने मनको एकाग्र करनेके लिये हिमालयके गंगावतार नामक उत्तम शिखरपर तपस्या आरम्भ की। तदनन्तर गिरिराज हर्षित होकर अपनी पुत्रीके साथ भगवान् छरके समीप गये और शम्भुसे प्रार्थना की कि मेरी पुत्री आपकी सेवा करनेके लिये बड़ी उत्सुक है, अतः आप अपनी सेवाके लिये इसे आज्ञा दीजिये।

शम्भु बोले—हे शैलराज! वेदोंके पारगामी विद्वानोंने स्त्रीको मायारूपा कहा है, उसमें भी विशेष रूपसे युवती स्त्री तो तपस्वियोंके लिये विच्छकारिणी होती है। उनके संगसे शीघ्र ही विषयवासिना उत्पन्न हो जाती है, वैराग्य नष्ट हो जाता है। अतः हे शैल! तपस्वियोंको स्त्रियोंका संग नहीं करना चाहिये।

ब्रह्माजी बोले—हे देवर्ये! उन शम्भुका वह स्पृहारहित निष्ठुर वचन सुनकर हिमालय विस्मयमें पड़ गये। अपने पिता गिरिराजको आश्चर्यमें पड़ा देखकर भवानीने शिवजीको प्रणामकर उनसे कहा—हे शम्भो! आप तपकी शक्तिसे सम्पन्न होकर ही महातपस्या कर रहे हैं। सभी कर्मोंको करनेवाली उस शक्तिको ही प्रकृति जानना चाहिये, उसीके द्वारा सबका सुजन, गलन और संहार होता है। हे शंकर! यदि आप प्रकृतिसे परे हैं तो मेरे समीप रहनेपर भी आपको डरना नहीं चाहिये।

पार्वतीके वचनोंसे प्रभावित होकर भगवान् शंकरने हिमालयकी पुत्रीको अपने पास रहकर सेवा करनेके लिये स्वीकार कर लिया। भगवती पार्वती शिवकी सेवामें पूर्णरूपसे तप्त हो गयी तथा महायोगीश्वर भगवान् शिव शीघ्र ही अपने ध्यानमें निमग्न हो गये।

तारकासुरका आख्यान

उसी समय महाप्रक्रमी तारकासुरसे अत्यन्त पीड़ित इन्द्र आदि देवताओं तथा मुनियोंने उन रुद्रके साथ

भगवती कालीका कामभावसे योग करनेके लिये ब्रह्माजीकी आज्ञासे कामदेवको आदरपूर्वक वहाँ भेजा। कामदेवने वहाँ जाकर अपने समस्त उपाय लगाये, परंतु शिव कुछ भी विश्वधन नहीं हुए और उन्होंने उसे भस्म कर दिया।

आगे के अध्यायोंमें नारदजीके पूछनेपर ब्रह्माजी तारकासुरकी उत्पत्ति तथा शंकरजीद्वारा कामदेवको भस्म करने एवं अनुग्रह करनेकी कथाका विस्तारसे वर्णन करते हैं, जिसका संक्षेप इस प्रकार है—कश्यपकी सबसे बड़ी पत्नी दिति थी, उसके दो पुत्र पृथु विरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिषु हुए। भगवान् विष्णुने वराह एवं नरसिंहरूप धारणकर उन दोनोंका वध किया। तत्पश्चात् देवगण निर्भय एवं सुखी रहने लगे। इससे दिति दुखी हुई और वह कश्यपकी शरणमें गयी तथा उनकी सेवाकर पुनः गर्भ धारण किया। देवराज इन्द्रने अवसर पाकर उसके गर्भमें प्रविष्ट होकर उसके गर्भके दुकड़े-दुकड़े कर दिये। उसके गर्भसे उनचास पुत्र उत्पन्न हुए। वे सभी पुत्र मरु, नामके देवता हुए और स्वर्गको चले गये। दितिने पुनः तपस्याकर गर्भ धारण किया और देवताओंके समान बलवान् वज्रांग नामके पुत्रको जन्म दिया। वह जन्मसे महाप्रतापी और बलवान् था। वरांगी इसकी पत्नी थी। इनसे एक महाप्रतापी असुरका जन्म हुआ, जिसका नाम तारकासुर रखा गया। तारकासुरने अपनी मातासे आज्ञा प्राप्तकर घोर तपस्या प्रारम्भ कर दी। उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर ब्रह्माजी वर देनेको प्रकट हुए। तारकासुरने ब्रह्माजीसे वर माँगते हुए कहा—हे महाप्रभु! आपके बनाये हुए इस समस्त लोकमें कोई भी पुरुष मेरे समान बलवान् न हो और शिवजीके वीर्यसे उत्पन्न हुआ पुत्र देवताओंका सेनापति बनकर जब मेरे ऊपर शस्त्र-प्रहर करे तब मेरी मृत्यु हो। इसके अनन्तर वह दुरात्मा असुर तीनों लोकोंको अपने अधीनकर स्वयं इन्द्र बन बैठा। उससे पीड़ित हुए समस्त इन्द्र आदि देवगण अनाथ तथा अत्यन्त व्याकुल होकर ब्रह्माके पास आये। ब्रह्माजीसे प्रार्थनाकर उन्हें अपना कष्ट सुनाया। ब्रह्माजीने कहा—हे देवताओ! मेरे वरदानसे ही वह असुर इतना बलवान् हुआ है, अब उसे मारनेका एक ही उपाय है

कि हिमवान्‌की पुत्री पार्वतीसे भगवान्‌ शंकरका विवाह सम्पन्न हो जाय।

भगवान्‌ शंकर तपस्यामें लीन हैं, किसी प्रकार उनकी तपस्या भंग हो जाय एवं वे सकाम होकर शिवाकी अभिलाषा करें, ऐसा उपाय करना चाहिये।

कामदहन

तारकासुरसे अत्यन्त पीड़ित हुए इन्द्रने कामदेवका स्मरण किया तथा उससे मित्रवत् निवेदन किया—हे काम! इस प्रकारका उपाय करना चाहिये, जिससे कि वित्तको वशमें रखनेवाले शिवकी अभिरुचि पार्वतीमें हो जाय। कामदेवने इन्द्रके वचनको स्वीकार करते हुए उन्हें पूरी तरह आश्वस्त किया। इसके अनन्तर वह अपनी पत्नी रति तथा मित्र वसन्तको साथ लेकर शिवजीके पास पहुँच गया। कामदेवने भगवान्‌ शंकरपर अपने सभी अमोघ अस्त्रोंका प्रयोग किया, परंतु भगवान्‌ शिवपर उसके अस्त्रोंका कोई प्रभाव नहीं पड़ा और उनके ललाटके मध्य भागमें स्थित तीसरे नेत्रसे क्रोधाग्नि प्रकट हुई, जिससे कामदेव जलकर भस्म हो गया। कामदेवके भस्म हो जानेपर रति अत्यन्त दुखी होकर विलाप करने लगी। रतिका दुःख देखकर देवतागण भगवान्‌ शिवसे अत्यन्त कातर होकर उसका दुःख दूर करनेकी प्रार्थना करने लगे। देवताओंकी प्रार्थनासे प्रसन्न होकर शिवजीने वरदान देते हुए कहा—रतिका शक्तिशाली पति तभीतक अनंग रहेगा, जबतक श्रीकृष्णका धर्तीपर अवतार नहीं हो जाता।

श्रीकृष्णके द्वारा रुक्मिणीके गर्भसे प्रद्युम्न नामका पुत्र होगा, वही कामके रूपमें रतिका पति बनेगा। इस प्रकार कहकर रुद्रदेव अनर्थन हो गये और सभी देवता भी प्रसन्न हो गये।

कामदेवको भस्म करके महादेवजीके अन्तर्धान हो जानेपर उनके विरहसे पार्वती अत्यन्त व्याकुल हो गयीं। उन्हें कहीं भी शान्ति नहीं मिल रही थी। पिताके घर जाकर जब वे अपनी मातासे मिलीं, उस समय पार्वतीने अपना नया जन्म हुआ माना।

नारदजीद्वारा पार्वतीको पंचाक्षरमन्त्रका उपदेश

एक दिन इन्द्रकी प्रेरणासे इच्छानुसार धूमते हुए

नारदजी हिमालय पर्वतपर पहुँचे। हिमवान्‌ने उनका सत्कार किया और अपनी कन्याके चरित्रका पूरा वर्णन सुनाया। नारदजी गिरिराजसे ‘भगवान्‌ शिवका भजन करो’—ऐसा कहकर वहाँसे विदा हुए। वहाँसे वे भगवती कालीके पास आ गये और उन्हें सम्बोधित करके उनके लिये हितकारी वचन कहने लगे—‘हे शिव! तुम्हारे स्वामी महेश्वर विरक्त और महायोगी हैं। उन्होंने कामदेवको जलाकर तुम्हें सकुशल छोड़ दिया है। इसलिये तुम उत्तम तपस्यामें निरत हो चिरकालतक महेश्वरकी आराधना करो। तपस्याके द्वारा संस्कारयुक्त हो जानेपर रुद्रदेव तुम्हें अपनी भार्या अवश्य बनायेंगे और तुम भी कभी कल्याणकारी शम्भुका परित्याग नहीं करोगी।’

शिवने नारदजीसे कहा—‘हे मुने! रुद्रदेवकी आराधनाके लिये मुझे किसी मन्त्रका उपदेश कीजिये।

ब्रह्माजी बोले—हे नारद! पार्वतीका यह वचन सुनकर आपने पंचाक्षर मन्त्र (नमः शिवाय) का उन्हें विधिपूर्वक उपदेश देते हुए कहा—यह मन्त्राराज सब मन्त्रोंका राजा, मनोबांधित फल प्रदान करनेवाला, शंकरको बहुत ही प्रिय तथा साधकको भोग और मोक्ष देनेवाला है। हे शिव! नियमोंमें तत्पर रहकर उनके स्वरूपका चिन्तन करती हुई तुम पंचाक्षर मन्त्रका जप करो, इससे शिवजी शीघ्र ही सन्तुष्ट होंगे। अपने माता-पितासे किसी प्रकार आज्ञा प्राप्तकर भगवती पार्वती तपस्यामें संलग्न हो गयीं और पंचाक्षर मन्त्रके जपमें रत होकर तप करती हुई वे भगवान्‌ शंकरका ध्यान करने लगीं। इस प्रकार तप और महेश्वरका चिन्तन करती हुई उन कालीने तीन हजार वर्ष उस तपोवनमें बिता दिये। उनकी कठोर तपस्यासे यह सम्पूर्ण चराचर जगत् संतप्त होने लगा। देवतागणोंने ब्रह्माजीके पास पहुँचकर निवेदन किया—हे विभो! इस समय यह सारी सृष्टि क्यों जल रही है—इसका कारण ज्ञात नहीं हो पा रहा है।

ब्रह्माजी कहते हैं—तब मैं भगवान्‌ विष्णुसे निवेदन करनेके लिये उन सभीके साथ शीघ्र ही क्षीरसागर गया और उनसे सारी स्थितिका वर्णन किया।

विष्णुजी बोले—मैंने सारा कारण जान लिया है। आप सब लोग पार्वतीकी तपस्यासे संतप्त हो रहे हैं। अतः मैं आप लोगोंके साथ अभी परमेश्वरके पास चल रहा हूँ।

शंकरद्वारा विवाहकी स्वीकृति

इसके अनन्तर ब्रह्मा एवं विष्णुसहित सभी देवता पार्वतीके तपकी प्रशंसा करते हुए वहाँ गये, जहाँ वृषध्वज महादेव थे। उन सबोंने शिवजीको प्रणामकर उनकी स्तुति की। तब वहाँ नन्दिकेश्वरने भगवान् शिवसे कहा—हे प्रभो! देवता और मुनि संकटमें पड़कर आपकी शरणमें आये हैं। नन्दीके इस प्रकार सूचित करनेपर भगवान् शम्भुने अपने-आप समाधिसे विरत होकर विष्णु ब्रह्मा एवं देवताओंसे आनेका कारण पूछा।

भगवान् विष्णुने कहा—शम्भो! तारकासुरने देवताओंको महान् कष्ट प्रदान किया है—यही बतानेके लिये सब देवता वहाँ आये हैं। भगवन्! आपके औरस पुत्रसे तारक दैत्य मारा जा सकेगा, और किसी प्रकारसे नहीं। आप कृपाकर गिरिराज हिमवान्की पुत्री गिरिजाका पाणिग्रहण करें।

श्रीविष्णुका यह वचन सुनकर भगवान् शंकरने ब्रह्मा, विष्णु, देवताओं तथा मुनियोंको निष्काम धर्मका उपदेश दिया। तदनन्तर भगवान् शम्भु पुनः ध्यानमें निमग्न हो गये। परमेश्वर शिवको ध्यानमन देखकर उन्होंने नन्दीकी सहमति ली। नन्दीने पुनः दीनभावसे स्तुति करनेके लिये कहा। वे सभी देवगण दीनभावसे पुनः स्तुति करने लगे। भगवान् विष्णुने पुनः निवेदन किया—सुखदायक भगवान् शंकर! हम सब देवताओंको तारकासुरसे अनेक प्रकारका कष्ट प्राप्त हो रहा है। आपके लिये ही देवताओंने गिरिराज हिमालयसे शिवाकी उत्पत्ति करायी है। शिवाके गर्भसे आपके द्वारा जो पुत्र उत्पन्न होगा, उसीसे तारकासुरकी मृत्यु होगी, दूसरे किसी उपायसे नहीं। नारदजीकी आज्ञासे पार्वती कठोर तपस्या कर रही हैं। उनके तेजसे समस्त त्रिलोकी आच्छादित हो गयी है। इसलिये परमेश्वर! शिवाको

स्वीकारकर सबका दुःख मिटाइये। शंकर! मेरे तथा देवताओंके हृदयमें आपके विवाहका उत्सव देखनेके लिये बड़ा भारी उत्साह है। अतः आप यथोचित रीतिसे विवाह कीजिये।

ब्रह्माजी कहते हैं—नारद! ऐसा कहकर उन्हें प्रणाम करके विष्णु आदि देवता और मर्हिषियोंने पुनः उनकी स्तुति की। भक्तोंके अधीन रहनेवाले भगवान् शंकरने विवाहका तर्क और युक्तिपूर्वक निषेध वचन कहा, परंतु साथ ही यह भी कहा कि जब-जब भक्तोंपर कहाँ कोई विपत्ति आती है, तब मैं तत्काल उनके सारे कष्ट हर लेता हूँ। तारकासुरसे तुम सब लोगोंको जो दुःख प्राप्त हुआ है, उसे मैं जानता हूँ। उसका मैं निवारण करूँगा। यद्यपि मेरे मनमें विवाह करनेकी कोई रुचि नहीं है तथापि मैं पुत्रोत्पादनके लिये गिरिजाके साथ विवाह करूँगा। तुम सब देवता अब निर्भय होकर अपने-अपने घर जाओ। मैं तुम्हारा कार्य सिद्ध करूँगा।

सप्तर्षियोंद्वारा पार्वतीके तपकी परीक्षा

देवताओंके चले जानेपर पार्वतीके तपकी परीक्षाके लिये भगवान् शंकर समाधिस्थ हो गये। उन दिनों पार्वती देवी बड़ी भारी तपस्या कर रही थीं, उस तपस्यासे रुद्रदेव भी बड़े विस्मयमें पड़ गये। भक्ताधीन होनेके कारण वे समाधिसे विचलित हो गये। सृष्टिकर्ता हरने वसिष्ठादि सप्तर्षियोंका स्मरण किया। उनके स्मरण करते ही वे सातों ऋषि वहाँ शीघ्र ही आ पहुँचे। भगवान् शिवने प्रसन्नतापूर्वक कहा—गिरिराजकुमारी देवेश्वरी पार्वती इस समय गौरीशिखर नामक पर्वतपर तपस्या कर रही हैं, मुझे पतिरूपमें प्राप्त करना ही उनकी तपस्याका उद्देश्य है। मुनीश्वरो! तुम लोग मेरी आज्ञासे वहाँ जाओ और उनकी दृढ़ताकी परीक्षा करो। भगवान् शंकरकी यह आज्ञा पाकर वे सातों ऋषि तुरन्त ही उस स्थानपर जा पहुँचे, जहाँ पार्वती तपस्या कर रही थीं। सप्तर्षियोंद्वारा तपस्याका कारण पूछनेपर पार्वतीने संकोचपूर्वक बताया कि वे भगवान् सदाशिवको पतिरूपमें चाहती हैं। नारदजीके आज्ञानुसार वे उन्हें प्राप्त करनेके लिये कठोर तप कर रही हैं।

नारदजीका नाम सुनकर वे सप्तर्षि छलपूर्वक मिथ्या वचन कहने लगे। पहले उन्होंने नारदकी निन्दा की और कई प्रकारके उदाहरण देकर कहा कि नारदने आजतक किसीका घर नहीं बसाया, वह तो घर फोड़नेवाला है। इसके अनन्तर भगवान् शिवके अमंगल वेश आदिका वर्णन करते हुए पार्वतीको उनसे विरत करनेका प्रयास किया और विष्णुकी प्रशंसा करते हुए उनसे विवाह करनेका प्रस्ताव रखा, परंतु पार्वतीने इसे स्वीकार नहीं किया। शिवकी महिमाका वर्णन करते हुए वे बोलीं—शिव परब्रह्म एवं विकारहित हैं। वे भक्तोंके लिये ही शरीर धारण करते हैं। वे सदाशिव प्रभु निर्णुण, मायारहित एवं विराट हैं। हे ब्राह्मणो! यदि शंकर मेरे साथ विवाह नहीं करेंगे तो मैं सर्वदा अविवाहित रहूँगी। यह कहकर और उन मुनियोंको प्रणाम करके वे पार्वती मौन हो गयीं।

तदनन्तर ऋषियोंने भी पार्वतीका दृढ़ निश्चय जानकर उनकी जय-जयकार की और उन्हें उत्तम आशीर्वाद प्रदान किया। इसके अनन्तर वे ऋषिगण शिवलोक पहुँचकर भगवान् सदाशिवको सम्पूर्ण वृत्तान्त निवेदनकर अपने-अपने लोकको चले गये।

शंकरद्वारा वृद्धब्राह्मणके रूपमें पार्वतीकी परीक्षा

उन सप्तर्षियोंके चले जानेपर प्रभु शिवने स्वयं पार्वतीके तपकी परीक्षा लेनेकी इच्छा की। वे एक बूढ़ ब्राह्मण ब्रह्मचारीका वेश धारणकर तपस्यामें रत भगवती पार्वतीके पास पहुँचे। उन्होंने पार्वतीसे पूछा—तुम कौन हो और किसकी कन्या हो? इस निर्जन वनमें रहकर इतनी कठिन तपस्या क्यों कर रही हो? पार्वतीने अपना परिचय देते हुए ब्रह्मचारीको अपना पूर्ण वृत्तान्त सुनाया तथा कहा कि बहुत समयतक कठोर तपस्या करनेके बाद भी मुझे मेरे प्राणवल्लभ सदाशिव प्राप्त नहीं हुए, इस कारण अब मैं अग्निमें प्रवेश करूँगी। इस प्रकार कहकर पार्वतीजी ब्रह्मचारीद्वारा निषेध करनेपर भी अग्निमें प्रवेश कर गयीं, परंतु उसी समय अग्नि चन्दनके समान शीतल हो गयी।

ब्रह्मचारीने पार्वतीसे फिर पूछा—तुम अपनी तपस्याका कारण सत्य-सत्य बताओ? पार्वतीजीने कहा—मैंने मन, वचन और कर्मसे शंकरजीको ही पतिभावसे वरण किया है। मनकी उत्सुकतावश मैं यह कठोर तप कर रही हूँ। उस ब्राह्मण ब्रह्मचारीने पार्वतीकी बात सुनकर भगवान् शंकरकी ओर निन्दा करनी प्रारम्भ कर दी। शंकरको अवगुणोंकी खान सिद्ध करनेका प्रयास करते हुए पार्वतीको उनसे विरत होनेका बार-बार परामर्श दिया।

उस ब्राह्मणके इस प्रकारके वचन सुनकर पार्वती कुपित मनसे शिवनिन्दक ब्राह्मणसे बोलीं—आप ब्रह्मचारीका रूप धारणकर मुझे छलना चाहते हैं, इसीलिये कुतर्कसे भरी हुई बातें मुझसे कह रहे हैं। वे सदाशिव निर्णय ब्रह्म हैं और कारणवश सगुण हो जाते हैं। जो सात जन्मोंका दरिद्र हो तो वह भी यदि शंकरकी सेवा करे तो उसे लोकमें स्थिर रहनेवाली लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। जो पुरुष शिवतत्वको न जानकर शिवकी निन्दा करता है, उसका जीवनपर्यन्त संचित किया हुआ पुण्य भस्म हो जाता है। वे सज्जनोंके प्रिय, निर्विकारी प्रभु मेरे तो सर्वस्व हैं और मुझे अत्यन्त प्रिय हैं। उन महात्मा सदाशिवकी ब्रह्मा, विष्णु भी किसी प्रकार समता नहीं कर सकते।

इस प्रकार कहती हुई वे गिरिराजपुत्री मौन हो गयीं और निर्विकार चित्तसे शिवजीका ध्यान करने लगीं।

उन शिवने जैसा पार्वती ध्यान कर रही थीं, उसी प्रकारका अत्यन्त सुन्दर रूप धारणकर उन्हें दर्शन दिया और पुनः पार्वतीसे वे शिव कहने लगे—हे दूढ़ मनवाली! मैंने तुम्हारी अनेक प्रकारसे परीक्षा की, मेरे इस अपराधके लिये क्षमा करो। मैंने तुम्हारी-जैसी पतित्रा सती त्रिलोकमें कहीं नहीं देखी। हे शिव! मैं सर्वथा तुम्हारे अधीन हूँ, तुम अपनी कामना पूर्ण करो।

भगवान् सदाशिवका वचन सुनकर और उनके परमानन्दकारी रूपका दर्शनकर पार्वतीजी परम आनन्दित हो गयीं। इसके अनन्तर पार्वतीजी अपने घरके लिये प्रस्थान कर गयीं, वहाँ उनका पूर्ण स्वागत हुआ। माता

मेनका पार्वतीको पाकर विहृल हो गयीं। धरमें नित्य गान और उत्सव होने लगे। इसी बीच भगवान् सदाशिव एक नटका रूप धारणकर वहाँ पधारे और अद्भुत लीलाओंका प्रदर्शन किया। मेनका नटकी लीलासे प्रसन्न होकर रत्नोंसे भरपूर उपहार उस नटके लिये लेकर आयीं। उस विलक्षण नटने इसे स्वीकार नहीं किया और इसके बदले शिवाकी याचना की। यह सुनकर मेनका अत्यधिक कुपित हो गयीं और नटको वहाँसे हटानेका प्रयास किया। नटरूपी भगवान् शंकर अपने स्थानपर आ गये।

देवताओंकी प्रेरणासे भगवान् शंकर पुनः वैष्णव-ब्राह्मणके वेशमें हिमवानके यहाँ पधारे और शिवकी निन्दा करते हुए उनके दोषोंका वर्णन किया। इसे सुनकर मेनका अत्यधिक दुखित हुई और वे पार्वतीका विवाह शिवसे करनेके लिये किसी प्रकार तैयार नहीं हुईं।

इधर भगवान् शिवको इस बातका पता लगा तो उन्होंने अरुन्धतीसहित सप्तरियोंको बुलाया तथा मेनाके पास जाकर उन्हें समझानेकी आज्ञा दी।

अरुन्धतीसहित सप्तरियोंने शिवकी आज्ञासे हिमवान्नके यहाँ पहुँचकर उन्हें समझानेका प्रयास किया। हिमवान्नने कहा कि एक वैष्णववेशधारी ब्राह्मणने आकर मेनाके समक्ष शिवके दोषोंका वर्णन करते हुए उनकी अत्यधिक निन्दा की। इसे सुनकर मेना नाराज होकर कोपभवनमें चली गयी हैं। सप्तरियोंने अरुन्धतीको मेनाके पास भेजा। अरुन्धतीको देखकर मेना उठ खड़ी हुई। अरुन्धतीने भगवान् सदाशिवकी कई प्रकारसे प्रशंसा करते हुए मेनाको समझाया। अन्ततोगत्वा मेना और हिमवान् भगवान् शिवके साथ पार्वतीका विवाह करनेको राजी हो गये।

शिव-पार्वतीके विवाहकी तैयारी

सप्तरियोंने भगवान् शंकरके पास जाकर उन्हें यह समाचार विस्तारपूर्वक सुनाकर अनुरोध किया कि वेदोक्त विधिसे पार्वतीका पाणिग्रहण कीजिये।

उधर हिमवान्नने विवाहकी तैयारियाँ प्रारम्भ कर दीं और विश्वकर्मकि द्वारा बरातियोंके लिये कृत्रिम आवासका निर्माण एवं सजावट आदि करायी।

इधर शिवजीके पास लग्नपत्रिका भेजी गयी, जिसे पढ़कर वे अत्यन्त आनन्दित हुए और नारदजीके द्वारा सभी देवताओं, मुनियों, सिद्धोंको तथा अन्य लोगोंको विवाहमें सम्मिलित होनेके लिये निमन्त्रण भेजा। तदनन्तर समस्त देवता, यक्ष, दानव, नाग, पक्षी, अप्सरा आदि विवाह-उत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये पधारे।

भगवान् विष्णुके अनुरोध करनेपर भगवान् सदाशिवने पूजन आदिका सब कार्य वेदोक्त विधिसे सम्पन्न किया। तदनन्तर सबके साथ नन्दी आदि अपने सब गणोंको साथ लेकर हिमाचलपुरीकी ओर प्रस्थान कर गये।

शिव-ब्राह्मका वर्णन

भगवान् शिवकी बरात विलक्षण थी, बरातमें वाहनोंपर विराजित खूब सजे-धजे बाजे-गाजेके साथ पताकाएँ फहराते हुए वसु आदि गन्धर्व, मणिग्रीवादि यक्ष, देवराज इन्द्र, भृगु आदि मुनीश्वर, ब्रह्मा तथा भगवान् विष्णु—सबकी टोलियाँ अलग-अलग चला रही थीं। इनमेंसे प्रत्येक दलके स्वामीको देखकर मेना पूछती थीं कि क्या ये ही शिव हैं? नारदजी कहते—ये तो शिवके सेवक हैं। मेना यह सुनकर बड़ी प्रसन्न होतीं और मनमें सोचतीं कि जब उनके सेवक ही इतने सुन्दर हैं तो इनके स्वामी शिव तो पता नहीं कितने सुन्दर होंगे। इसी क्रममें भगवान् रुद्रदेवकी परम अद्भुत सेना भी वहाँ आ पहुँची, जो भूत-प्रेत आदिसे संयुक्त तथा नाना गणोंसे सम्पन्न थी। इनमें किहींके मुँह टेढ़े थे तो कोई अत्यन्त कुरुप दिखायी देते थे, कोई बड़े विकराल थे, कोई लैंगड़े थे तो कोई अन्ये। गणोंमेंसे कितनोंके तो मुँह नहीं थे तो बहुतोंके बहुतेरे मुख थे। इस तरह सभी गण नाना प्रकारकी वेषभूषा धारण किये थे। उन असंख्य भूत-प्रेत आदि गणोंको देखकर मेना तत्काल भयसे व्याकुल हो गयीं, उन्होंके बीचमें भगवान् शंकर भी थे। वे वृषभपर सवार थे, उनके पाँच मुख थे, प्रत्येक मुखमें तीन-तीन नेत्र थे और सारे अंगमें विभूति लगी हुई थी। मस्तकपर जटाजट और चन्द्रमाका मुकुट, आँखें भयानक और आकृति विकराल थी। यह कैसा विकृत दृश्य है, मैं दुराग्रहमें फँसकर मारी गयी—इस प्रकार कहकर मेना

उसी क्षण मूर्च्छित हो गयीं। थोड़ी देरमें चेत होनेपर वे क्षुब्ध होकर अत्यन्त विलाप एवं तिरस्कार करने लगीं। उसी समय भगवान् विष्णु भी वहाँ पधारे और उन्होंने अनेक प्रकारसे मेनाको समझाते हुए शिवके महत्वका वर्णन किया।

मेनाने शिवके महत्वको स्वीकार करते हुए श्रीहरिसे कहा—यदि भगवान् शिव सुन्दर शरीर धारण कर लें तो मैं उन्हें अपनी पुत्री दे सकती हूँ।

ब्रह्माजीने नारदजीसे कहा कि उसी समय तुमने भगवान् विष्णुकी प्रेरणासे भगवान् शंकरके पास जाकर उन्हें स्तोत्रोद्घारा प्रसन्न किया। तुम्हारी बात सुनकर शम्भुने प्रसन्नतापूर्वक अद्भुत, उत्तम एवं दिव्य रूप धारण कर लिया।

भगवान् शिवका मंगलमय वरवेश

भगवान् शम्भुका वह स्वरूप कामदेवसे भी अधिक सुन्दर और लावण्यका परम आश्रय था। उस स्वरूपका दर्शनकर शैलराजकी पत्नी मेना आश्चर्यचकित हो गयीं। वहाँ उपस्थित सभी पुरावासिनियाँ भगवान् शंकरका वह मनोहर रूप देखकर सम्मोहित हो गयीं। हिमाचलकी पत्नी मेना भी शम्भुकी आरती उत्तरनेके लिये हाथमें दीपकोंसे सजी हुई थाली लेकर सभी ऋषिपत्नियों तथा अन्य स्त्रियोंके साथ आदरपूर्वक द्वारपर आयीं। विवाहका सब कार्य विधि-विधानसे सम्पन्न हुआ।

रुद्रसंहिता (कुमारखण्ड)

नारदजीने ब्रह्माजीसे पूछा—हे ब्रह्मन्! भगवान् शंकरने पार्वतीसे विवाह करनेके पश्चात् कैलास जाकर क्या किया? उन परमात्मा शिवको किस प्रकार पुत्र उत्पन्न हुआ? तारकासुर-वध किस प्रकार हुआ?

ब्रह्माजीने कहा—शिवजीके कैलास पहुँचते ही वहाँ महान् उत्सव होने लगा। सब देवताएँ प्रसन्न होकर अपने-अपने स्थानको छले गये। इसके बाद भगवान् शम्भु पार्वतीके साथ देवताओंके वर्ष-परिमाणके अनुसार एक हजार वर्षतक विहार करते रहे।

कुमार कार्तिकेयके जन्मकी कथा

ब्रह्माजीने कथा-प्रसंग सुनाकर कुमारके गंगासे

एक ब्राह्मणपत्नीद्वारा पार्वतीको प्रतिव्रत्तधर्मका उपदेश

सप्तरिष्योंके आग्रह करनेपर मेना पार्वतीको विदा करनेके लिये उद्यत हुई। उन्होंने विधिपूर्वक वैदिक एवं लौकिक कुलाचारका पालन करते हुए राजेचित् शृंगारकर पार्वतीको विभूषित किया। तत्पश्चात् मेनाके मनोभावोंको जानकर एक सती साध्यी ब्राह्मणपत्नीने गिरिजाको उत्तम पातिक्रतकी शिक्षा प्रदान की। ब्राह्मणपत्नी बोली—गिरिराजकिशोरी! संसारमें पतिव्रता नारी ही धन्य है। पतिव्रता सब लोकोंको पवित्र करनेवाली और समस्त पापराशिको नष्ट कर देनेवाली है। श्रुतियों और स्मृतियोंमें पातिव्रतधर्मको महान् बताया गया है। इसको जैसा श्रेष्ठ बताया जाता है, वैसा दूसरा धर्म नहीं है। पतिव्रत धर्मकी शिक्षा यहाँ विस्तारसे दी गयी है।

इसके अनन्तर भगवती शिवाकी विदाईका मार्मिक वर्णन हुआ है। शिवाने समस्त गुरुजनोंको, माता-पिताको, पुरोहित और ब्राह्मणोंको, भौजाइयों और दूसरी स्त्रियोंको प्रणाम करके यात्रा प्रारम्भ की। सबने शिवाको आशीर्वाद प्रदान किया।

ब्रह्माजी कहते हैं—तात! इस प्रकार मैंने परम मंगलमय शिव-विवाहका वर्णन किया। यह शोकनाशक, आनन्ददायक तथा धन और आयुकी वृद्धि करनेवाला है।

इस प्रकार लुद्धसंहिताका पार्वतीखण्ड पूर्ण हुआ।

उत्पन्न होने तथा कृतिकादि छः स्त्रियोंके द्वारा उनके पाले जाने, उन छहोंकी सन्तुष्टिके लिये उनके छः मुख धारण करने और कृतिकाओंके द्वारा पाले जानेके कारण उनका कार्तिकेय नाम होनेकी बात कही। तदनन्तर उनके शंकर-गिरिजाकी सेवामें लाये जानेकी कथा सुनायी। फिर ब्रह्माजीने कहा—भगवान् शंकरने कुमारको गोदमें बैठाकर अत्यन्त स्नेह किया। देवताओंने उन्हें नाना प्रकारके पदार्थ, विद्याएँ, शक्ति तथा अस्त्र-शस्त्र प्रदान किये। पार्वतीके हृदयमें प्रेम समाता नहीं था, उन्होंने हर्षपूर्वक कुमारको उत्तम ऐश्वर्य प्रदान किया, साथ ही चिरंजीवी भी बना दिया।

तारकासुर-संग्राम

इसी बीच देवताओंने भगवान् शंकरसे कहा—
प्रभो ! तारकासुर कुमारके हाथों ही मारा जानेवाला है,
इसलिये ही यह पार्वती-परिणय तथा कुमार-उत्पत्ति
आदि उत्तम चरित्र घटित हुआ है। अतः हम लोगोंके
हितार्थ उसका कामतमाम करनेके हेतु कुमारको आज्ञा
दीजिये। हम लोग आज ही अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित
होकर तारकको मारनेके लिये रणयात्रा करेंगे।

ब्रह्माजी कहते हैं—मुने ! यह सुनकर भगवान्
शंकरका हृदय दयार्द्र हो गया। उन्होंने उनकी प्रार्थना
स्वीकार करके उसी समय तारकका वध करनेके लिये
अपने पुत्र कुमारको देवताओंको सौंप दिया। फिर तो
शिवजीकी आज्ञा मिल जानेपर ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी
देवता एकत्र होकर ऊरंत ही उस पर्वतसे चल दिये। उस
समय श्रीहरि आदि देवताओंके मनमें पूर्ण विश्वास था
कि ये तारकासुरका वध अवश्य कर डालेंगे। वे भगवान्
शंकरके तेजसे भावित हो कुमारके सेनापतित्वमें तारकका
संहार करनेके लिये रणक्षेत्रमें आये। उधर महाबली
तारकने जब देवताओंके इस युद्धोद्योगको सुना तो वह
भी एक विशाल सेनाके साथ देवोंसे युद्ध करनेके लिये
तत्काल ही चल पड़ा। उसकी उस विशाल वाहिनीको
आते देख देवताओंको परम विस्मय हुआ। उसी समय
भगवान् विष्णु आदि सम्पूर्ण देवताओंके प्रति आकाशवाणी
हुई—देवगण ! तुम लोग जो कुमारके अधिनायकत्वमें
युद्ध करनेके लिये उद्यत हुए हो, इससे तुम संग्राममें
दैत्योंको जीतकर विजयी होगे।

ब्रह्माजी कहते हैं—मुने ! उस आकाशवाणीको
सुनकर सभी देवताओंका उत्साह बढ़ गया। उनकी
युद्धकामना बलवती हो गयी और वे सब युद्धके लिये
आ डटे। इधर बहुसंख्यक असुरोंसे घिरा हुआ वह तारक
भी बहुत बड़ी सेनाके साथ वहाँ आ धमका। भयंकर
युद्ध होने लगा।

भगवान् श्रीहरिने अपने आयुध सुदर्शन चक्र और
शार्ङ्ग धनुषको लेकर युद्धस्थलमें महादेव्य तारकपर
आक्रमण किया। तदनन्तर सबके देखते-देखते श्रीहरि

और तारकासुरमें अत्यन्त रोमांचकारी महायुद्ध छिड़
गया। तब ब्रह्माजीने स्वामिकार्तिकसे कहा—हे पार्वतीसुत !
विष्णु और तारकासुरका यह व्यर्थ युद्ध शोभा नहीं दे
रहा है; क्योंकि विष्णुके हाथों इस तारककी मृत्यु नहीं
होगी। यह मुझसे वरदान पाकर अत्यन्त बलवान् हो गया
है। हे पार्वतीनन्दन ! तुम्हरे अतिरिक्त इस पापीको दूसरा
कोई नहीं मार सकता। तुम शीघ्र ही उस दैत्यका वध
करनेके लिये तैयार हो जाओ। तारकका संहार करनेके
निमित्त ही तुम शंकरसे उत्पन्न हुए हो।

ब्रह्माजीका यह वचन सुनकर कुमार कार्तिकेयने
प्रसन्नतापूर्वक 'तथास्तु'—ऐसा ही होगा कहा तथा वे
युद्धके लिये तत्पर हो गये।

कुमार कार्तिकेयके साथ तारकासुरका भयंकर युद्ध
होने लगा। सबके देखते-देखते कुमारके आघातसे
तारकासुर सहसा धराशायी हो गया और उसके प्राण-
पर्ख उड़ गये। महाबली दैत्यराज तारकके मारे जानेपर
सभी देवता आनन्दमान हो गये। उस समय भगवान्
शंकर भी कार्तिकेयकी विजयका समाचार पाकर पार्वतीजीके
साथ प्रसन्नतापूर्वक वहाँ पधारे। स्नेहसे युक्त पार्वतीजी
परम प्रेमपूर्वक अपने पुत्र कुमारको अपनी गोदमें लेकर
लाड़-प्यार करने लगीं। उस समय वहाँ एक महान्
विजयोत्सव मनाया गया। देवताओंने पुष्पवर्षा की।
तत्पश्चात् भगवान् रुद्र जगज्जननी भवानीके साथ अपने
निवास-स्थान कैलास पर्वतको चले गये। इधर सभी
देवताओंने शंकरनन्दन कुमारका स्तवन करते हुए निवेदन
किया—हे कुमार ! आपने असुरराज तारकको मारकर
हम सबको तथा चाराचर जगत्को सुखी कर दिया। अब
आप अपने माता-पिता पार्वती और शंकरका दर्शन
करनेके लिये शिवके निवासस्थल कैलासपर चलनेकी
कृपा करें।

तदनन्तर सब देवताओंके साथ कुमार स्कन्द
शिवजीके समीप कैलास पहुँच गये। वहाँ शिव-शिवाके
साथ सबने बड़ा आनन्द मनाया। देवताओंने शिवजीकी
सूति की। शिवजीने उन सबोंको वरदान तथा अभयदान
देकर विदा दिया।

भगवान् गणपतिके जन्मकी कथा
नारदजी बोले—प्रजानाथ! मैंने स्वामिकार्तिकके सब वृचान्त तथा उनकी उत्तम कथा सुन ली, अब गणेशका उत्तम चरित्र सुनना चाहता हूँ।

ब्रह्माजी बोले—हे नारद! एक समय पार्वतीके मनमें ऐसा विचार आया कि मेरा कोई एक ऐसा सेवक होना चाहिये, जो परम शुभ, कार्यकुशल और मेरी ही आज्ञामें तत्पर रहनेवाला हो। यों विचारकर पार्वतीदेवीने अपने शरीरके मैलसे एक ऐसे चेतन पुरुषका निर्माण किया, जो सम्पूर्ण शुभ लक्षणोंसे संयुक्त था। देवीने कहा—तात! तुम मेरे पुत्र हो, मेरे अपने हो, अतः तुम मेरी बात सुनो। आजसे तुम मेरे द्वारपाल हो जाओ। मेरी आज्ञाके बिना कोई भी हठपूर्वक मेरे महलके भीतर प्रवेश न करने पाये, चाहे वह कहाँसे भी आये, कोई भी हो।

ब्रह्माजी कहते हैं—यों कहकर पार्वतीने गणेशके हाथमें एक सुन्दर छड़ी दे दी और गणराजको अपने द्वारपर स्थापित कर दिया तथा सखियोंके साथ स्वयं स्नान करने लगीं। इसी समय भगवान् शिव द्वारपर आ पहुँचे। गणेश पार्वतीपतिको पहचानते तो थे नहीं, अतः बोल उठे—माताकी आज्ञाके बिना अभी भीतर मत जाओ, कारण माता स्नान करने बैठ गयी हैं। महेश्वरके गण उन्हें समझाकर हटानेका प्रयास कर रहे थे, परंतु गणेश वहाँसे हटे नहीं। शिवगणों एवं गणेशजीका युद्ध होने लगा, पर वे गणेशको पराजित न कर सके, तब स्वयं शूलपाणि महेश्वरने गणेशसे युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। घोर युद्ध हुआ अन्ततोगत्वा स्वयं शूलपाणि महेश्वरने त्रिशूलसे गणेशजीका सिर काट डाला।

जब यह समाचार पार्वतीजीको मिला, तब वे क्रुद्ध हो गयीं और बहुत सारी सखियोंको उत्पन्न करके प्रलय-जैसी स्थिति बना दीं। यह देख देवर्थियोंने भगवतीको प्रसन्न करनेके लिये प्रार्थना की तो भगवती पराम्बाने कहा—यदि मेरा पुत्र जीवित हो जाय तो सब ठीक हो जायगा।

भगवान् शंकरके आज्ञानुसार शिवगणोंने उत्तर दिशासे एक हाथीका सिर लाकर उस धड़में जोड़ दिया। इसके अनन्तर देवताओंने वेदमन्त्रोद्धारा जलको अधिमन्त्रितकर उस बालकके शरीरपर छिड़का, जिससे वह बालक चेतनायुक्त होकर जीवित हो गया।

अपने पुत्रको जीवित देखकर पार्वती देवी प्रसन्न हो गयीं और उन्होंने हर्षप्रतिरेकसे उसका मुख चूमा और प्रेमपूर्वक उसे वरदान देते हुए कहा—अबसे सम्पूर्ण देवताओंमें तेरी अग्रपूजा होती रहेगी और तुझे कभी दुःखका सामना नहीं करना पड़ेगा।

ब्रह्माजी कहते हैं—हे मुने! तदनन्तर ब्रह्मा, विष्णु और शंकर आदि सभी देवताओंने मिलकर पार्वतीको प्रसन्न करनेके लिये गणेशको 'सर्वाध्यक्ष' घोषित कर दिया।

शिवजी कहते हैं—हे गिरिजानन्दन! विघ्ननाशके कार्यमें तेरा नाम सबसे श्रेष्ठ होगा। तू सबका पूज्य है—इतना कहनेके पश्चात् महात्मा शंकर गणेशको पुनः वरदान देते हुए बोले—हे गणेश्वर! तू भाद्रपद मासके कृष्ण पक्षकी चतुर्थीको चन्द्रमाका शुभोदय होनेपर उत्पन्न हुआ है, इसलिये उसी दिनसे आरम्भ करके तेरा उत्तम ब्रत करना चाहिये। यहाँ शिवजीने चतुर्थीव्रतकी शास्त्रोक्त तथा उसकी महिमाका वर्णन प्रस्तुत किया है।

गणेशविवाहकी कथा

कुछ समय बीत जानेपर एक दिन शिव-पार्वतीके मनमें यह विचार आया कि हमारे दोनों पुत्र विवाहके योग्य हो गये हैं। उधर गणेश और कार्तिक दोनों पुत्रोंमें भी विवाह करनेकी इच्छा प्रवल होने लगी। पहले विवाह हमारा होना चाहिये—दोनोंने यह इच्छा व्यक्त की। शिव-पार्वतीने कहा—सुपुत्रो! हम लोगोंने पहलेसे एक ऐसा नियम बना रखा है कि जो सारी पृथ्वीकी परिक्रमा करके पहले लौट आयेगा, उसीका विवाह पहले होगा।

माता-पिताकी यह बात सुनकर महावली कार्तिकेय अपने स्थानसे पृथ्वीकी परिक्रमा करनेके लिये चल दिये,

परंतु गणेश वहीं खड़े रह गये। वे मनमें विचार करने लगे कि परिक्रमा तो मुझसे हो नहीं सकेगी, अब मैं क्या करूँ?

गणेशजीने अपने माता-पिता शिव-पार्वतीको सुन्दर आसनपर बिठाया और विधिपूर्वक उनकी पूजाकर सात परिक्रमाएँ सम्पन्न कीं और निवेदन किया कि शास्त्रोंके अनुसार मेरी पृथ्वी-परिक्रमा पूर्ण हो गयी। अतः मेरा विवाह पहले कर देना चाहिये।

भगवान् शिवा-शिवने गणेशजीकी बात स्वीकार कर ली और सिद्ध एवं बुद्धिके साथ गिरिजानन्दन गणेशका विवाह सम्पन्न हो गया। उनकी सिद्धि



नामक पलीसे 'क्षेम' और बुद्धिसे 'लाभ' नामक पुन हुआ।

कुमार कार्तिकेयका क्रौंचपर्वतपर जाना

इधर नारदने कार्तिकेयको माता-पिताके द्वारा छल करनेकी बात कहकर उन्हें भड़काया। कुमार स्कन्द माता-पिताको प्रणामकर क्रोधाग्निसे जलते हुए शिवा-शिवके मना करनेपर भी क्रौंच पर्वतपर चले गये और तभीसे वे आज भी वहींपर हैं।

ब्रह्माजी कहते हैं—हे देवर्ष! उसी दिनसे लेकर वे शिवपुत्र कार्तिकेय कुमार ही रह गये। कृतिका नक्षत्रयुक्त कार्तिक पूर्णिमा तिथिमें जो व्यक्ति कुमारका दर्शन करता है, उसके पाप भस्म हो जाते हैं और उसे मनोवाचित फलकी प्राप्ति हो जाती है। स्कन्दका वियोग होनेपर उन्हें सुखी करनेके लिये शिव-पार्वती स्वयं अपने अंशसे क्रौंच पर्वतपर गये। वहाँ मलिलकार्जुन नामक ज्योतिलिंग है, आज भी वहाँ उनके दर्शन होते हैं। पार्वतीसहित उन शिवको आया जानकर वे कुमार विरक्त होकर वहाँसे अन्यत्र जानेको उद्यत हो गये। देवताओं और मुनियोंके बहुत प्रार्थना करनेपर भी वे कार्तिकेय उस स्थानसे तीन योजन दूर हटकर निवास करने लगे।

हे नारद! पुत्रके स्नेहसे आतुर वे दोनों शिव-शिव कुमारके दर्शनके लिये पर्व-पर्वपर वहाँ जाते रहते हैं। अमावस्याके दिन वहाँ शिवजी स्वयं जाते हैं और पूर्णमासीके दिन पार्वतीजी निश्चित रूपसे वहाँ जाती हैं।

हे मुनीश्वर! आपने कार्तिकेय और गणेशका जो-जो वृत्तान्त पूछा, वह श्रेष्ठ वृत्तान्त मैंने वर्णित किया।

इस प्रकार स्तुतिहासिका चतुर्थ कुमारखण्ड पूर्ण हुआ।

रुद्रसंहिता (युद्धखण्ड)

नारदजी कहते हैं—हे ब्रह्मन्! पराक्रमी भगवान् शंकरने एक ही वाणसे एक साथ दैत्योंके तीनों पुत्रोंको किस प्रकार जलाया? मायासे निरन्तर विहार करनेवाले भगवान् शंकरके सम्पूर्ण चरित्रका वर्णन कीजिये।

ब्रह्माजी बोले—हे ऋषिश्रेष्ठ! पूर्वकालमें व्यासजीने महर्षि सनत्कुमारसे यही बात पूछी थी। तब सनत्कुमारजीने उस समय जो कुछ कहा था, वही बात मैं आपको सुनाता हूँ।

त्रिपुरवधकी कथा

सनत्कुमार व्यासजीसे कहते हैं—हे मुनीश्वर! शिवजीके पुत्र कार्तिकेयके द्वाया तारकासुरका वध कर दिये जानेपर उसके तीनों पुत्र—तारकाक्ष, विद्युम्माली तथा कमलाक्ष घोर तप करने लगे। उन तीनों दैत्योंने सम्पूर्ण भौगोंको त्यागकर मेरुपर्वतकी गुफामें जाकर अत्यन्त अद्भुत तप किया। इस प्रकार तप करते हुए तथा ब्रह्माजीमें मन लगाये हुए उन तारकपुत्रोंका बहुत समय

बीत गया। उनके तपसे सन्तुष्ट होकर ब्रह्माजी वहाँ प्रकट हो गये और उन असुरोंसे अभीष्ट वर माँगनेको कहा।

दैत्य बोले—हे देवेश! यदि आप प्रसन्न हैं तो हमें सब प्राणियोंसे अवध्यत्व प्रदान कीजिये। हम अजर-अमर हो जायें और तीनों लोकोंमें अन्य प्राणियोंको मार सकें। उनकी यह बात सुनकर ब्रह्माजीने कहा—हे असुरो! पूर्ण अमरत्व किसीको नहीं मिल सकता, अतः कोई अन्य वर माँग लो। इस भूतलपर जहाँ भी कोई प्राणी जन्मा है, वह अवश्य मरेगा।

दैत्य बोले—हे भगवान्! हम लोग यद्यपि परक्रमशील हैं, किंतु हमारे पास कोई ऐसा स्थान नहीं है, जिसमें शत्रु प्रवेश कर न सके और वहाँ हम सुखसे निवास कर सकें। अतः आप ऐसे तीन नगरोंका—एक स्वर्णका पुर, दूसरा चाँदीका तथा तीसरा बड़के समान लोहेका पुर निर्माण कराकर हमें प्रदान कीजिये, जो परम अद्भुत, सभी सम्पत्तियोंसे परिपूर्ण और देवताओंके लिये सर्वथा अनन्तक्रमणीय हों।

सन्तकुमारजीने व्यासजीसे कहा—उनका यह बचन सुनकर लोकपितामह ब्रह्माने उन्हें यह वर प्रदान कर दिया। उसके बाद उन्होंने दैत्यशिल्पी मयको आज्ञा दी—हे मय! तुम सोने, चाँदी और लोहेके तीन नगरोंका निर्माण कर दो। मयको यह आज्ञा प्रदानकर ब्रह्माजी अपने लोकको चले गये। तदनन्तर मयने बड़े प्रयत्नके साथ तीनों पुरोंका निर्माण किया। ये तीनों पुर क्रमसे स्वर्गमें, आकाशमें एवं भूलोकमें अवस्थित हुए।

इस प्रकार तीनों पुरोंको प्राप्तकर महाबली तारकासुके पुत्र उनमें प्रविष्ट हुए और सभी प्रकारके सुखोंका भोग करने लगे। उन पुण्यकर्मा रक्षासोंको वहाँ निवास करते हुए बहुत लम्बा काल व्यतीत हो गया।

तब उनके तेजसे दग्ध हुए इन्द्रादि देवता दुखी होकर ब्रह्माजीकी शरणमें गये और उनसे अपना दुःख प्रकट किया।

ब्रह्माजी बोले—हे देवताओ! आप लोग उन दैत्योंसे विलकुल मत डरिये। इन्द्रसहित सभी देवता

शिवजीसे प्रार्थना करें। यदि वे सर्वाधीश प्रसन्न हो जायें तो आप लोगोंका कार्य पूर्ण हो सकेगा।

तब ब्रह्माजीकी बात सुनकर इन्द्रसहित सभी देवता दुखी होकर शिवलोक गये और भगवान् शिवसे प्रार्थना की। भगवान् शंकरने कहा—वे दैत्य मेरी भक्ति और सेवा-शुश्रूषामें संलग्न हैं। इसलिये जबतक वे वेद-शास्त्रोक्त धर्मसे विमुख नहीं होंगे, तबतक मेरे द्वारा उनका कोई अनिष्ट करना सम्भव नहीं है। इसलिये आप देवतागण विष्णुसे बात करें। तब वे सभी देवागण भगवान् विष्णुके समक्ष प्रस्तुत हुए और पूर्ण दीनताके साथ विष्णुके समक्ष अपनी परिस्थितियोंको बताया तथा भगवान् शिवके विचारोंको भी व्यक्त किया।

भगवान् विष्णुने कहा—लिंगार्चनपरायण वे दैत्य इस लोकमें अनेक प्रकारकी सम्पत्तिका भोग कर रहे हैं, परलोकमें भी उन्हें मोक्ष प्राप्त होगा, फिर भी मैं अपनी मायासे उन दैत्योंके धर्ममें विष्णु डालकर देवताओंकी कार्यसिद्धिके निमित्त क्षणभरमें त्रिपुरका संहर करूँगा। जबतक वे शंकरकी अर्चना करते हैं और पवित्र कृत्य करते हैं, तबतक उनका नाश नहीं हो सकता, इसलिये अब ऐसा उपाय करना चाहिये, जिससे वहाँसे वेद-धर्म चला जाय, तब वे दैत्य लिंगार्चन त्याग देंगे—ऐसा निश्चय करके विष्णुजीने उन दैत्योंके धर्ममें विष्णु करनेके लिये श्रुतिखण्डनरूप उपाय किया।

उन देवाधिदेव विष्णुजीकी मायासे सभी पुरावासियोंकि अपने धर्मोंसे सर्वथा विमुख हो जानेपर अधर्मकी वृद्धि होने लगी। सभी देवताओंने भगवान् शंकरसे प्रार्थना की और कहा—हे भक्तवत्सल! उन दैत्योंने हमारे भाग्यसे सभी धर्मोंका परित्याग कर दिया है। हे शरणप्रद! इस समय हम आपकी शरणमें आये हैं, आप जैसा चाहें, वैसा करें।

त्रिपुरार्चनसके लिये दिव्य रथका निर्माण

भगवान् शंकरने कहा—मेरे पास योग्य सारथीसहित दिव्य रथ नहीं है और संग्राममें विजय दिलानेवाला धनुष-द्वाण आदि भी नहीं है, जिस रथपर वैठकर धनुष-द्वाण लेकर तथा अपना मन लगाकर उन प्रबल

दैत्योंका संग्राममें वध कर सकूँ।

तब सभी देवता प्रभुके वचन सुनकर प्रसन्न होकर बोले—हे महेश्वर! हम लोग आपके रथादि उपकरण बनकर युद्धके लिये तैयार हैं। भगवान् शंकरने कहा कि रथ, सारथी, दिव्य धनुष तथा उत्तम बाण शीघ्र उपस्थित कीजिये। तब उनकी आज्ञासे विश्वकर्मने संसारके कल्प्याणके लिये सर्वदेवमय दिव्य तथा अत्यन्त मुन्द्र रथका निर्माण किया। शिवजीके रथपर आरूढ़ हो जानेपर वह रथ उन बलवान् दानवोंके आकाशस्थित तीनों पुरोंको उद्देश्य करके चलने लगा। रथपर आरूढ़ भगवान् शंकरने पाशुपत-व्रतकी चर्चा की और कहा—जो इस दिव्य पाशुपत व्रतका आचरण करेगा वह पशुत्वसे मुक्त हो जायगा।

सनत्कुमार बोले—उन परमात्मा महेश्वरका यह वचन सुनकर ब्रह्मा, विष्णु आदि देवगणोंने कहा—ऐसा ही होगा। इसलिये हे वेदव्यास! देवता एवं असुर—सभी उन प्रभुके पशु हैं और पशुओंको पाशसे मुक्त करनेवाले सद्गुरु भगवान् शंकर पशुपति हैं, तभीसे उन महेश्वरका यह कल्प्याणप्रद ‘पशुपति’ नाम भी सभी लोकोंमें प्रसिद्ध हुआ।

सनत्कुमारजी कहते हैं—हे व्यासजी! इसके बाद महादेव शास्य समस्त युद्ध-सामाग्रियोंसे युक्त हो उस रथपर वैठकर त्रिपुरके दैत्योंको दग्ध करनेके लिये उद्घत हुए। पर इस कार्यमें गणेशजीके द्वारा विघ्न होनेपर एक अत्यन्त मनोहर आकाशवाणी शंकरजीने सुनी—हे भगवन्! जबतक आप इन गणेशजीका पूजन नहीं करेंगे, तबतक आप त्रिपुरका नाश नहीं कर सकेंगे—यह वचन सुनकर सदाशिवने भद्रकालीको बुलाकर गणेशजीका पूजन किया।

जब महादेवजी गणेशका पूजनकर स्थित हो गये, उसी समय वे तीनों पुर शीघ्र ही एकमें मिल गये। उसी समय जगत्पति ब्रह्मा तथा विष्णुने कहा—हे महेश्वर! अब इन दैत्य तारकपुत्रोंके वधका समय उपस्थित हो गया है; क्योंकि इनके तीनों पुर एक स्थानमें आ गये हैं। जबतक ये तीनों पुर एक-दूसरेसे अलग नहीं होते,

तबतक आप बाण छोड़िये और त्रिपुरको भस्म कर दीजिये।

शिवजीके द्वारा छोड़े गये तीव्रगामी उस विष्णुमय बाणने त्रिपुरमें रहनेवाले उन तीनों दैत्योंको दग्ध कर दिया। इसके साथ ही सैकड़ों दैत्य हाहाकार करते हुए उस बाणकी अग्निसे भस्म हो गये।

जिस प्रकार कल्पान्तरमें जगत् भस्म हो जाता है, उसी प्रकार उस अग्निने केवल विश्वकर्मा मय दानवको छोड़कर सभीको भस्म कर दिया। महेश्वरके शरणागत होनेपर नशकारक पतन नहीं होता है। इसलिये सब पुरुषोंको ध्यानपूर्वक यह यत्न करना चाहिये, जिससे भगवान् शंकरमें भक्ति बढ़े।

इसके अनन्तर ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी देवताओंने भगवान् शंकरकी स्तुति की। शिवजीने प्रसन्न होकर मनोऽभिलिप्त वर प्रदान किया।

भगवान् शिवद्वारा मयको वरदान

सनत्कुमारजी कहते हैं—उसी समय मय दानव प्रेमपूर्वक गदगद वाणीसे उनकी स्तुति करने लगा। शिवजीने प्रसन्न होकर मय दानवसे वर माँगनेको कहा। मयने कहा—हे देवदेव! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मुझे अपनी शाश्वती भक्ति प्रदान कीजिये। मुझमें कभी भी असुर भाव न रहे। हे नाथ! मैं आपके शुभ भजनमें मग्न रहूँ। भगवान् महेश्वर प्रसन्न होकर बोले—तुम मेरी आज्ञासे अपने परिवारसहित स्वर्गलोकसे भी मनोहर वितललोकको जाओ तथा निर्भय होकर वहाँ रहो।

मयने भगवान्की इस आज्ञाको स्वीकार किया और सबको प्रणामकर वह वितललोकको चला गया।

जलन्धरके वधकी कथा

व्यासजी कहते हैं—हे ब्रह्मन्! मैंने सुना है कि पूर्वकालमें प्रभु शंकरजीने महादैत्य जलन्धरका वध किया था, आप शंकरजीके उस चरित्रको सुनानेकी कृपा करें।

व्यासजीद्वारा इस प्रकार पूछनेपर महामुनि सनत्कुमारजीने पूरी कथा सुनायी—

एक बार बृहस्पति तथा इन्द्र शंकरजीका दर्शन

करनेके लिये कैलासको गये। भगवान् शंकर उनके ज्ञानकी परीक्षा लेनेके लिये एक भयंकर पुरुषका रूप धारण करके मार्गमें स्थित हो गये। इद्र उन्हें पहचान नहीं सके और उन्हें देखकर क्रोधित हुए। भगवान् शंकरने भी क्रोधित होकर उन्हें जलानेके लिये अपने नेत्रोंसे एक प्रज्वलित तेज उत्पन्न किया। ब्रह्मस्पति अपनी बुद्धिसे भगवान् शंकरको पहचानकर उनकी स्तुति करने लगे और इन्द्रको भी उनके चरणोंपर गिराया। तब प्रसन्न होकर इन्द्रकी रक्षा करते हुए उन्होंने उस अग्निको समुद्रमें फेंक दिया।

समुद्रमें फेंका हुआ वह तेज शीघ्र ही बालकरूप हो गया। वह बालक गंगासागरके संगमपर स्थित होकर ढड़े ऊँचे स्वरमें रोने लगा। उसके रुदनसे सभी लोक व्याकुल हो गये तथा समस्त देवता ब्रह्माजीकी शरणमें गये। ब्रह्माजीने उस बालकके विषयमें समुद्रसे पूछा। उसी समय उस बालकने ब्रह्माजीका कण्ठ पकड़ लिया। ब्रह्माजीने किसी प्रकार अपना गला छुड़ाया, परंतु उनकी आँखोंसे आँसू आ गये। समुद्रके कहनेपर उस बालकका जातकोरु फल ब्रह्माजीने सुनाया। ब्रह्माजीने कहा— इसने मेरे नेत्रोंसे निकले हुए जलको धारण किया, इसलिये इसका नाम जलन्धर होगा। यह बालक समस्त दैत्योंको अधिष्ठित होगा। रुदको छोड़कर यह सभी प्राणियोंसे अवध्य होगा। इसके अनन्तर सागरके अनुरोधपर असूर कालनेमिने अपनी पुत्री वृन्दाका विवाह जलन्धरसे कर दिया।

देवताओंद्वारा छलपूर्वक समुद्र-मन्थन एवं अमृत-पान आदिकी बातें सुनकर जलन्धर अत्यधिक क्रोधित हो गया और स्वर्ग पहुँचकर उसने इन्द्रसहित सभी देवताओंको जीत लिया और अमरावतीयुरीपर अपना अधिकार कर लिया। देवताओंको भागते हुए देखकर भगवान् हीकेश विष्णु गृहणपर सवार होकर जलन्धरसे भयंकर युद्ध करने लगे। उस दैत्यसे बहुत देरतक युद्ध करके विष्णु विस्तित हो गये और प्रसन्न होकर उसे वरदान देने लगे।

जलन्धर धर्मानुसार शासन करने लगा। देवतागण

संत्रस्त होकर भगवान् शंकरके पास गये और अपनी रक्षाके लिये प्रार्थना करने लगे। यह निश्चय हुआ कि जलन्धरकी पत्नी वृन्दाका पातिग्रत्य जबतक नष्ट नहीं होगा, तबतक जलन्धरकी मृत्यु सम्भव नहीं है, अतः भगवान् विष्णुने पार्वतीकी प्रेरणासे वृन्दाका पातिग्रत्य नष्ट किया। वृन्दाको जब यह बात मालूम हुई तो वह अत्यन्त क्षुब्ध हो गयी और वह भगवान् विष्णुको शाप देकर अग्निमें प्रवेश कर गयी। इधर भगवान् शंकरने देवताओंके कार्यको सिद्ध करनेके लिये नारदजीको बुलाकर भेजा। नारदजी देवताओंको आश्वस्त करके जलन्धरके पास गये और उससे बोले—तुम्हरे पास सम्पूर्ण समुद्धि रहते हुए भी स्त्रीरत्न नहीं है।

जलन्धरके पूछनेपर नारदजीने बताया कि कैलास पर्वतपर विश्वमोहिनी पार्वती हैं, जो अत्यन्त सुन्दर हैं। जलन्धरने अपना एक दूत भेजा। उसकी भगवान् शिवसे बाती हुई। उसकी बातसे भगवान् शंकर अत्यन्त कुद्द हो गये। तत्पश्चात् भगवान् शंकरका जलन्धरसे घोर युद्ध हुआ। अन्ततोगत्वा भगवान् शंकरद्वारा धराशायी होकर वह मृत्युको प्राप्त हुआ।

सन्त्कुमार कहते हैं—हे मुने! अनन्तमूर्ति सदाशिवके द्वारा उस समुद्रपुन्र जलन्धरके मारे जानेपर सभी प्रसन्न हो गये और सम्पूर्ण त्रैलोक्य शान्तिमय हो गया।

शंखचूड़की कथा

कश्यपकी पत्नियोंमें एकका नाम दनु था, उस दनुके बहुत-से महाबली पुत्र हुए, उनमें एकका नाम विप्रचिति था। उसका पुत्र दम्भ हुआ, जो जितेन्द्रिय, धार्मिक और विष्णुभक्त था। जब उसके कोई पुत्र नहीं हुआ, तब उसने पुष्कर जाकर पुत्रप्राप्तिके लिये तपस्या की। उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु उसे पुत्र होनेका वरदान दिया।

तदनन्तर समय आनेपर साध्वी दध्वपलीने एक तेजस्वी बालकको जन्म दिया, जिसका नाम शंखचूड रखा गया। वह बालक अत्यन्त तेजस्वी था, नित्य बालक्रीडा करके अपने माता-पिताका हर्ष बढ़ाने लगा।

इधर शंखचूड बड़ा हुआ, तब वह पुष्करमें जाकर

ब्रह्माजीको प्रसन्न करनेके लिये भक्तिपूर्वक तपस्या करने लगा। उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर ब्रह्माजीने उसे देवताओंसे अजेय होनेका वरदान दिया। फिर उन्होंने शंखचूडको दिव्य श्रीकृष्णकवच प्रदान किया। तदनन्तर ब्रह्माजीने उसे आज्ञा दी कि तुम बद्रीवनको जाओ, वहीं धर्मध्वजकी कन्या तुलसी सकाम भावसे तपस्या कर रही है। तुम उसके साथ विवाह कर लो।

इसके अनन्तर शंखचूड उस स्थानपर जा पहुँचा, जहाँ धर्मध्वजकी पुत्री तुलसी तप कर रही थी। तुलसीसे वहाँ शंखचूडकी वार्ता हुई और ब्रह्माजीकी आज्ञासे दोनोंने गान्धर्व विवाह कर लिया।

इसके अनन्तर शुक्राचार्यजीद्वारा शंखचूडका राज्याभिषेक हुआ। उसने सम्पूर्ण लोकोंको जीतकर देवताओंका सारा अधिकार छीन लिया। देवगण ब्रह्माजीकी शरणमें गये। ब्रह्माजी समस्त देवताओंके साथ भगवान् विष्णुकी स्तुति करने लगे। भगवान् विष्णुने कहा—
कमलयोनि! मैं शंखचूडका सारा वृत्तान्त जानता हूँ।
पूर्वजन्ममें वह गोप था। गोलोकमें मेरे ही रूप श्रीकृष्ण रहते हैं। वही गोप इस समय शम्भुकी इस लीलासे मोहित होकर शापवश अपनेको दुःख देनेवाली दानवी योनिको प्राप्त हो गया है। श्रीकृष्णने पहलेसे ही रुद्रके त्रिशूलसे इसकी मृत्यु निर्धारित कर दी है। ऐसा जानकर तुम्हें भय नहीं करना चाहिये। यों कहकर ब्रह्मासहित विष्णु शिवलोकको गये तथा भगवान् शंकरकी स्तुति करते हुए बोले—‘हे दीनबन्धु! हम दीनोंकी रक्षा कीजिये।’

श्रीशंकरने सबको आश्वस्त करते हुए कहा—हे देवगण! तुम लोग अपने-अपने स्थानको लौट जाओ, मैं निश्चय ही शंखचूडका वध कर डालूँगा। महेश्वरके इस वचनको सुनकर समस्त देवताओंको परम आनन्द प्राप्त हुआ। इधर उन महाल्लने गन्धर्वराज चिरत्रय (पुष्पदन्त) को दूत बनाकर शंखचूडके पास भेजा। परंतु शंखचूडने कहा कि महेश्वरके साथ युद्ध किये बिना न तो मैं गम्भीर वापस दौँगा और न अधिकारोंको ही लौटाऊँगा।

शिवदूत पुष्पदन्तने लौटकर अपने स्वामी महेश्वरको

शंखचूडकी सारी बात सुना दी। भगवान् रुद्रने अपनी सेनाके साथ युद्धके लिये प्रस्थान किया।

इधर शंखचूडने महलके भीतर जाकर अपनी पत्नी तुलसीसे यह सारी वार्ता सुनायी तथा युद्धमें जानेसे पूर्व उसे ढाँढ़स बैधाया। तदनन्तर दानवराजने कवच धारण करके अपनी सेनाके साथ युद्धके लिये प्रस्थान किया।

घोर युद्ध प्रारम्भ हो गया। उसी समय आकाशवाणी हुई—जबतक इस शंखचूडके हाथमें श्रीहरिका परम उग्र कवच वर्तमान रहेगा और इसकी पतित्रता पत्नी (तुलसी) का सतीत्व अखण्डित रहेगा, तबतक इसपर जरा और मृत्यु अपना प्रभाव नहीं डाल सकेंगे। अतः हे जगदीश्वर शंकर! ब्रह्माके इस वचनको सत्य कीजिये।

शिवजीने उस आकाशवाणीको सुनकर उसे स्वीकार कर लिया और विष्णुको इस कार्यके लिये प्रेरित किया। मायावियोंमें भी श्रेष्ठ मायावी भगवान् विष्णुने एक वृद्ध ब्राह्मणका वेश धारणकर शंखचूडसे भिक्षारूपमें कवच माँग लिया और फिर शंखचूडका रूप धारण करके तुलसीके पास पहुँचकर सबके आत्मा एवं तुलसीके नित्य स्वामी श्रीहरिने शंखचूडरूपसे उसके शीलका हरण कर लिया। तदनन्तर विष्णुभगवान्नने शम्भुसे अपनी सारी बातें कह सुनायीं। तब शिवजीने शंखचूडके वधके निमित्त अपना उद्दीप्त त्रिशूल शंखचूडके ऊपर छोड़ा, जिसने उसी शक्ति उसे राखकी ढेरी बना दिया।

शिवजीके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा होने लगी और ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादि सभी देवता तथा मुनिगण उनकी प्रशंसा करने लगे। शंखचूड भी शिवजीकी कृपासे शाप-मुक हो गया और उसे अपने पूर्व (श्रीकृष्णपार्वद) रूपकी प्राप्ति हो गयी।

शंखचूडकी हड्डियोंसे शंख जातिका प्रादुर्भाव हुआ, इस शंखका जल शंकरके अतिरिक्त समस्त देवताओंके लिये प्रशस्त माना जाता है। उस समय जगत्‌में चारों ओर परम शान्ति छा गयी।

तुलसी एवं शालग्रामशिलाके
माहात्म्यका वर्णन
भगवान् श्रीहरिने जब तुलसीका शीलहरण किया,

तदनन्तर तुलसीने मनमें सन्देह होनेपर यह समझ लिया कि ये साक्षात् विष्णु हैं, परंतु उसका पातिक्रत नष्ट हो चुका था, इसलिये वह कुपित होकर विष्णुसे कहने लगी—हे विष्णो! चौंकि तुम पाषाण-सदृश कठोर और दयारहित हो, इसलिये अब तुम मेरे शापसे पाषाणस्वरूप ही हो जाओ। यह कहकर वह शोकार्त होकर विलाप करने लगी। इतनेमें वहाँ भक्तवत्सल भगवान् शंकर प्रकट हो गये। उन्होंने समझाकर कहा— भद्रे! तुमने जिस मनोरथको लेकर तप किया था, यह उसी तपस्याका फल है। अब तुम इस शरीरको त्यागकर दिव्य देह धारण कर लो, श्रीहरिके साथ वैकुण्ठमें विहार करती रहो। तुम्हारा यह शरीर जिसे तुम छोड़ दोगी, नदीके रूपमें परिवर्तित हो जायगा, जो भारतवर्षमें पुण्यरूपा गण्डकीके नामसे प्रसिद्ध होगा। श्रीहरि भी तुम्हारे शापवश पथरका रूप धारण करके भारतवर्षमें गण्डकी नदीके जलमें निवास करेंगे तथा शालग्रामशिलाके रूपमें प्रकट होंगे। विष्णुरूपी शालग्रामशिला और वृक्षस्वरूपिणी तुलसीका समागम सदा अनुकूल तथा बहुत प्रकारके पुण्योंकी वृद्धि करनेवाला होगा। हे भद्रे! जो शालग्रामशिलाके ऊपरसे तुलसीपत्रको दूर करेगा, उसे जन्मान्तरमें स्त्रीवियोगकी प्राप्ति होगी। जो पुरुष शालग्रामशिला, तुलसी और शंखको एकत्र रखकर उसकी रक्षा करता है, वह श्रीहरिका प्यारा होता है।

अन्धकासुरकी उत्पत्तिकी कथा

सनकुमारजी कहते हैं—हे व्यासजी! जिस प्रकार अन्धकासुरने परमात्मा शिवके गणाध्यक्ष पदको प्राप्त किया था, उस मंगलमय चरित्रका श्रवण करो।

अन्धकासुरने पहले शिवजीके साथ बढ़ा घोर संग्राम किया था, परंतु पीछे बारम्बार सात्त्विक भावके उद्रेकसे शम्भुको प्रसन्न कर लिया और वह गणाध्यक्ष बन गया।

व्यासजीने पूछा—अन्धक कौन था? और वह किसका पुत्र था? उसने शम्भुकी गणाध्यक्षता कैसे प्राप्त की?

सनकुमारजीने कहा—मुने! किसी समय भगवान् शंकर अपने गणों तथा पार्वतीको साथ लेकर कैलाससे विहार करनेके लिये काशी आये। उन्होंने काशीको अपनी राजधानी बनाया, भैरवको उसका रक्षक नियुक्त किया।

किसी समय वे अपने गणोंके साथ मन्दराचलपर गये और वहाँपर पार्वतीके साथ विहारमें प्रवृत्त हो गये। पार्वतीने क्रीडा करते हुए सदाशिवके नेत्र अपने दोनों हाथोंसे बन्द कर दिये। नेत्रोंके बन्द हो जानेपर क्षणभरमें घोर अन्धकार ढा गया।

उनके ललाटका स्पर्श करते ही उण्ठातासे पार्वतीके दोनों हाथोंसे स्वेदबिन्दु टपकने लगे। तब उससे एक बालक उत्पन्न हुआ, जो भयंकर, विकराल मुखवाला, महाक्रोधी, अन्धा, कुरुप तथा विकृत स्वरूपवाला था। इस प्रकारके रूपवाले उस पुरुषको देखकर गौरीने महेश्वरसे पूछा कि यह कौन है?

महेश बोले—तुम्हारे ढारा मेरे नेत्रोंको बन्द कर दिये जानेपर तुम्हारे हाथोंके स्वेदसे यह अन्धक नामका असुर प्रकट हुआ है। तुम्हीं इसकी जन्मदात्री हो, अतः इसकी रक्षा करो।

तदनन्तर हिरण्याक्ष नामका एक असुर पुत्र-प्राप्तिके लिये तपस्या करने लगा। उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवान् शिवने उसे अन्धकको पुत्र-रूपमें प्रदान किया। भगवान् विष्णुने वराहरूप धारणकर हिरण्याक्षका वध किया। इसके अनन्तर नरसिंह-रूप धारणकर हिरण्याक्षके बड़े भाई हिरण्यकशिपुका वध किया।

अन्धकने घोर तपस्याकर बलशाली होनेका वर प्राप्त कर लिया। उसने भगवती पार्वतीकी सुन्दरताकी गाथा सुनकर उन्हें प्राप्त करनेके लिये भगवान् शिवके पास एक दूत भेजा। अन्तमें उसे शिवजीसे घोर युद्ध करना पड़ा। शिवजीने अपने त्रिशूलसे उसका हृदय विदीर्ण कर दिया और उसके शरीरको अपने त्रिशूलपर टाँगकर आकाशमें उठा दिया। सूर्यकी किण्णोंसे सनपात, हिमखण्डोंसे खण्डित होनेपर भी उस दैत्यराजने

प्राणत्याग नहीं किया और भगवान् शंकरकी निरन्तर स्तुति करता रहा। यह देखकर परम दयालु भगवान् शंकरने उसकी स्तुतिसे प्रसन्न होकर उसे गाणपत्य पद प्रदान कर दिया।

शुक्राचार्यद्वारा काशीमें शुक्रेश्वर लिंगकी स्थापना तथा मृतसंजीवनी विद्या प्राप्त करना

सनकुमार बोले—हे व्यासजी! मृत्युंजय भगवान् शिवसे जिस प्रकार शुक्राचार्यने मृत्युनाशिनी विद्या प्राप्त की, उसे आप सुनें।

पूर्वकालमें भृगुपुत्र शुक्राचार्य काशीपुरीमें विश्वेश्वर प्रभुका ध्यान करते हुए दीर्घकालतक तप करते रहे। उन्होंने वहाँ परमात्मा शिवका शिवलिंग स्थापित किया तथा उग्र तपस्या करते हुए मूर्त्युष्टकके आठ श्लोकोंसे शिवजीकी स्तुति करते हुए उनको घार-घार प्रणाम किया। भगवान् शंकर उनकी उग्र तपस्यासे प्रसन्न होकर कहने लगे—हे विप्रवर्य! आप इसी शरीरसे मेरी उदररूपी गुहामें प्रविष्ट हो युनः लिंगेन्द्रिय मार्गसे निकलकर पुत्रभावको प्राप्त होंगे। मृतसंजीवनी नामक जो मेरी निर्मल विद्या है, उसका निर्माण मैंने स्वयं अपने तपोबलसे किया है। उस मन्त्ररूपा महाविद्याको मैं आपको प्रदान करता हूँ। आप जिस किसीको उद्देश्य करके इस विद्याका आवर्तन करेंगे, वह अवश्य ही जीवित हो जायगा। आपके द्वारा स्थापित किये गये इस लिंगका नाम शुक्रेश्वर होगा। जो मनुष्य इसकी अर्चना करेंगे, उनकी कार्यसिद्धि होगी।

बाणासुरकी उत्पत्तिकी कथा तथा उसके ताण्डव नृत्यसे प्रसन्न होकर भगवान् शिवका उसे गाणपत्य पद प्रदान करना

बाणासुर बलिका और सुप्रथा था। दैत्यगज बाणासुर अपने बलसे तीनों लोकोंको तथा उसके स्वामियोंको जीतकर शोणित नामक पुरमें राज्य करता था। उसकी हजार भुजाएँ थीं। बाणासुरकी पुत्रीका नाम ऊपा था, उसका विवाह भगवान् श्रीकृष्णके पौत्र अनिरुद्धके

साथ हुआ। बाणासुर महान् शिवभक्त था। शिवधकिमें लीन होकर उसने भगवान् शिवको प्रसन्न करनेके लिये ताण्डव नृत्य किया। उसके सुन्दर नृत्यसे प्रसन्न होकर भगवान् रुद्रने वर माँगनेको कहा। बाणासुरने शिवजीकी निर्विकार भक्ति, अक्षय गाणपत्य (गणोंका अधिपति)-का भाव तथा प्राणियोंके प्रति दयाभाव आदि वर माँगते हुए प्रेमपूर्वक शिवजीकी स्तुति की। बाणासुरका यह वचन सुनकर भगवान् सदाशिव ‘तुम सब कुछ प्राप्त करोगे’—इस प्रकार कहकर वहीं अन्तर्धान हो गये।

गजासुर-वधकी कथा तथा कृतिवासेश्वर लिंगकी स्थापना

गजासुर महिषासुरका पुत्र था, जब उसने सुना कि देवी दुर्गाने मेरे पिताको मार दिया था, तब उसने बदला लेनेकी भावनासे घोर तप किया। उसके तपकी ज्वालासे सब जलने लगे। ब्रह्माजीसे वर पाकर वह गर्वमें भर गया और अत्याचार करने लगा, इसी क्रममें वह काशी आया और भक्तोंको सताने लगा। दुखी देवताओंने ब्रह्माजीके साथ भगवान् शंकरसे प्रार्थना की। भगवान् शंकरने घोर युद्धमें उसे हराकर त्रिशूलमें पिरो दिया। तब उसने भगवान् शंकरका स्तवन किया। गजासुरके द्वारा वर माँगनेपर भगवान् शिवने कहा—हे दानवराज! तेरा यह पावन शरीर मेरे इस मुकिंसाधक काशीक्षेत्रमें मेरे लिंगके रूपमें स्थित हो जाय, इसका नाम कृतिवासेश्वर होगा। यह सम्पूर्ण लिंगोंमें शिरोमणि और मोक्षप्रद होगा। यह सुनकर विष्णु और ब्रह्मा आदि समस्त देवताओंका मन हर्षसे परिपूर्ण हो गया।

ब्रह्माजी कहते हैं—हे मुनिसत्तम! मैंने तुमसे रुद्रसंहिताके अन्तर्गत इस युद्धखण्डका वर्णन कर दिया। यह खण्ड सम्पूर्ण मनोरथोंको प्रदान करनेवाला है तथा भुक्ति-मुकिंरूपी फल देनेवाला है।

इस प्रकार रुद्रसंहिताका यह ब्रह्मा और श्रीनारदजीका कल्याणकारक संवाद पूर्ण रूपसे सम्पन्न हुआ।

—राधेश्याम खेमका

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ ॥ श्रीसाम्बसदाशिवाय नमः ॥

श्रीशिवमहापुराण

माहात्म्य

पहला अध्याय

शौनकजीके साधनविषयक प्रश्न करनेपर सूतजीका उन्हें
शिवमहापुराणकी महिमा सुनाना

श्रीशौनकजी बोले—हे महाज्ञानी सूतजी! सम्पूर्ण
सिद्धान्तोंके ज्ञाता हे प्रभो! मुझसे पुराणोंकी कथाओंके
सारात्त्वका विशेषरूपसे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥



सदाचार, भगवद्विक्ति और विवेककी वृद्धि कैसे
होती है तथा साधुपुरुष किस प्रकार अपने काम-क्रोध
आदि मानसिक विकारोंका निवारण करते हैं? ॥ २ ॥

इस घोर कलियुगमें जीव प्रायः आसुर स्वभावके
हो गये हैं, उस जीवसमुदायको शुद्ध (दैवी सम्पत्तिसे
युक्त) बनानेके लिये सर्वश्रेष्ठ उपाय क्या है? ॥ ३ ॥

आप इस समय मुझे ऐसा कोई शाश्वत साधन
बताइये, जो कल्याणकारी वस्तुओंमें भी सबसे उत्कृष्ट
एवं परम मंगलकारी हो तथा पवित्र करनेवाले उपायोंमें

भी सर्वोत्तम पवित्रकारक उपाय हो ॥ ४ ॥

तात! वह साधन ऐसा हो, जिसके अनुष्ठानसे
शीघ्र ही अन्तःकरणकी विशेष शुद्धि हो जाय तथा
उससे निर्मल चित्तवाले पुरुषको सदाके लिये शिवकी
प्राप्ति हो जाय ॥ ५ ॥

सूतजी बोले—मुनिश्रेष्ठ शौनक! आप धन्य हैं;
आपके हृदयमें पुराण-कथा सुननेके प्रति विशेष प्रेम एवं
लालसा है, इसलिये मैं शुद्ध बुद्धिसे विचारकर परम
उत्तम शास्त्रका वर्णन करता हूँ ॥ ६ ॥

वत्स! सम्पूर्ण शास्त्रोंके सिद्धान्तसे सम्पन्न, भक्ति
आदिको बढ़ानेवाले, भगवान् शिवको सन्तुष्ट करनेवाले
तथा कानोंके लिये रसायनस्वरूप दिव्य पुराणका श्रवण
कीजिये ॥ ७ ॥

यह उत्तम शिवपुराण कालरूपी सर्पसे प्राप्त
होनेवाले महान् त्रास का विनाश करनेवाला है। हे मुने!
पूर्वकालमें शिवजीने इसे कहा था। गुरुदेव व्यासजीने
सनत्कुमार मनुकिए उपदेश पाकर कलियुगके प्राणियोंके
कल्याणके लिये बड़े आहरसे संक्षेपमें इस पुराणका
प्रतिपादन किया है ॥ ८-९ ॥

हे मुने! विशेष रूपसे कलियुगके प्राणियोंकी
चित्तशुद्धिके लिये इस शिवपुराणके अतिरिक्त कोई अन्य
साधन नहीं है ॥ १० ॥

हे मुने! जिस बुद्धिमान् मनुष्यके पूर्वजन्मके बड़े
पुण्य होते हैं, उसी महाभाग्यशाली व्यक्तिकी इस पुराणमें
प्रीति होती है ॥ ११ ॥

यह शिवपुराण परम उत्तम शास्त्र है। इसे इस भूतलपर भगवान् शिवका वाघ्मय स्वरूप समझना चाहिये और सब प्रकारसे इसका सेवन करना चाहिये॥ १२ ॥

इसके पठन और श्रवणसे शिवभक्ति पाकर श्रेष्ठतम स्थितिमें पहुँचा हुआ मनुष्य शीघ्र ही शिवपदको प्राप्त कर लेता है। इसलिये सम्पूर्ण यत्न करके मनुष्योंने इस पुराणके अध्ययनको अभीष्ट साधन माना है और इसका प्रेमपूर्वक श्रवण भी सम्पूर्ण वांछित फलोंको देनेवाला है॥ १३-१४ ॥

भगवान् शिवके इस पुराणको सुननेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है तथा बड़े-बड़े उत्कृष्ट भोगोंका उपभोग करके [अन्तमें] शिवलोकको प्राप्त कर लेता है॥ १५ ॥

राजसूयवज्ञ और सैकड़ों अग्निष्टोमयज्ञोंसे जो पुण्य प्राप्त होता है, वह भगवान् शिवकी कथाके सुननेमात्रसे प्राप्त हो जाता है॥ १६ ॥

हे मुने! जो लोग इस श्रेष्ठ शास्त्र शिवपुराणका श्रवण करते हैं, उन्हें मनुष्य नहीं समझना चाहिये; वे रुद्रस्वरूप ही हैं; इसमें सन्देह नहीं है॥ १७ ॥

इस पुराणका श्रवण और कीर्तन करनेवालोंके चरणकमलकी धूलिको मुनिगण तीर्थ ही समझते हैं॥ १८ ॥

जो प्राणी परमपदको प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें सदा भक्तिपूर्वक इस निर्मल शिवपुराणका श्रवण करना चाहिये॥ १९ ॥

हे मुनिश्रेष्ठ! यदि मनुष्य सदा इसे सुननेमें समर्थ न हो, तो उसे प्रतिदिन स्थिर चित्तसे एक मुहूर्त भी इसको सुनना चाहिये। हे मुने! यदि मनुष्य प्रतिदिन सुननेमें भी अशक्त हो, तो उसे किसी पवित्र महीनेमें इस शिवपुराणका श्रवण करना चाहिये॥ २०-२१ ॥

जो लोग एक मुहूर्त, उसका आधा, उसका भी आधा अथवा क्षणमात्र भी इस पुराणका श्रवण करते हैं, उनकी दुर्गति नहीं होती॥ २२ ॥

हे मुनीश्वर! जो पुरुष इस शिवपुराणकी कथाको सुनता है, वह सुननेवाला पुरुष कर्मरूपी महावनको जलाकर संसारके पार हो जाता है॥ २३ ॥

हे मुने! सभी दानों और सभी यज्ञोंसे जो पुण्य मिलता है, वह फल भगवान् शिवके इस पुराणको सुननेसे निश्चल हो जाता है॥ २४ ॥

हे मुने! विशेषकर इस कलिकालमें तो शिवपुराणके श्रवणके अतिरिक्त मनुष्योंके लिये मुक्तिदायक कोई अन्य श्रेष्ठ साधन नहीं है॥ २५ ॥

शिवपुराणका श्रवण और भगवान् शंकरके नामका संकीर्तन—दोनों ही मनुष्योंको कल्पवृक्षके समान सम्यक् फल देनेवाले हैं, इसमें सन्देह नहीं है॥ २६ ॥

कलियुगमें धर्माचरणसे शून्य चित्तवाले दुर्बुद्धि मनुष्योंके उद्धरके लिये भगवान् शिवने अमृतरसस्वरूप शिवपुराणकी उद्धावना की है॥ २७ ॥

अमृतपान करनेसे तो केवल अमृतपान करनेवाला ही मनुष्य अजर-अमर होता है, किंतु भगवान् शिवका यह कथामृत सम्पूर्ण कुलको ही अजर-अमर कर देता है॥ २८ ॥

इस शिवपुराणकी परम पवित्र कथाका विशेष रूपसे सदा ही सेवन करना चाहिये, करना ही चाहिये, करना ही चाहिये। इस शिवपुराणकी कथाके श्रवणका क्या फल कहूँ? इसके श्रवणमात्रसे भगवान् सदाशिव उस प्राणीके हृदयमें विराजमान हो जाते हैं॥ २९-३० ॥

यह [शिवपुराण नामक] ग्रन्थ चौबीस हजार श्लोकोंसे युक्त है। इसमें सात संहिताएँ हैं। मनुष्यको चाहिये कि वह भक्ति, ज्ञान और वैराग्यसे भली-भाँति सम्पन्न हो बड़े आदरसे इसका श्रवण करे॥ ३१ ॥

पहली विद्येश्वरसंहिता, दूसरी रुद्रसंहिता, तीसरी शतस्त्रसंहिता, चौथी कोटिरुद्रसंहिता और पाँचवीं उमासंहिता कही गयी है; छठी कैलाससंहिता और सातवीं वायवीय-संहिता—इस प्रकार इसमें सात संहिताएँ हैं॥ ३२-३३ ॥

सात संहिताओंसे युक्त यह दिव्य शिवपुराण परब्रह्म परमात्माके समान विराजमान है और सबसे उत्कृष्ट गति प्रदान करनेवाला है॥ ३४ ॥

जो मनुष्य सात संहिताओंवाले इस शिवपुराणको आदरपूर्वक पूरा पढ़ता है, वह जीवमुक्त कहा जाता है॥ ३५ ॥

हे मुने! जबतक इस उत्तम शिवपुराणको सुननेका

ॐ भगवन् भजते भद्रं भवति भवति

सुअवसर नहीं प्राप्त होता, तबतक अज्ञानवश प्राणी इस संसार-चक्रमें भटकता रहता है ॥ ३६ ॥

भ्रमित कर देनेवाले अनेक शास्त्रों और पुराणोंके श्रवणसे क्या लाभ है, जबकि एक शिवपुराण ही मुक्ति प्रदान करनेके लिये गर्जन कर रहा है ॥ ३७ ॥

जिस घरमें इस शिवपुराणकी कथा होती है, वह घर तीर्थस्वरूप ही है और उसमें निवास करनेवालोंके पाप यह नष्ट कर देता है ॥ ३८ ॥

हजारों अश्वमेधयज्ञ और सैकड़ों वाजपेययज्ञ शिवपुराणकी सोलहवर्षी कलाकी भी बराबरी नहीं कर सकते ॥ ३९ ॥

हे मुनिश्रेष्ठ! कोई अधम प्राणी जबतक भक्तिपूर्वक शिवपुराणका श्रवण नहीं करता, तभीतक उसे पापी कहा जा सकता है ॥ ४० ॥

गंगा आदि पवित्र नदियाँ, [मुक्तिदायिनी] सप्त पुरियाँ तथा गथादि तीर्थ इस शिवपुराणकी समता कभी नहीं कर सकते ॥ ४१ ॥

जिसे परमात्मिकी कामना हो, उसे नित्य शिवपुराणके एक श्लोक अथवा आधे श्लोकका ही स्वयं भक्तिपूर्वक पाठ करना चाहिये ॥ ४२ ॥

जो निरन्तर अर्थात् नुसन्धानपूर्वक इस शिवपुराणको चाँचता है अथवा नित्य प्रेमपूर्वक इसका पाठमात्र करता है, वह पुण्यात्मा है, इसमें संशय नहीं है ॥ ४३ ॥

जो उत्तम बुद्धिवाला पुरुष अन्तकालमें भक्तिपूर्वक इस पुराणको सुनता है, उसपर अत्यन्त प्रसन्न हुए

// इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके अन्तर्गत शिवपुराणमाहात्म्यमें उसकी महिमावर्णन नामक पहला अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १ ॥

भगवान् महेश्वर उसे अपना पद (धाम) प्रदान करते हैं ॥ ४४ ॥

जो प्रतिदिन आदरपूर्वक इस शिवपुराणका पूजन करता है, वह इस संसारमें सम्पूर्ण भोगोंको भोगकर अन्तमें भगवान् शिवके पदको प्राप्त कर लेता है ॥ ४५ ॥

जो प्रतिदिन आलस्यहित हो रेशमी वस्त्र आदिके वेष्टनसे इस शिवपुराणका सत्कार करता है, वह सदा सुखी होता है ॥ ४६ ॥

यह शिवपुराण निर्मल तथा शैवोंका सर्वस्व है; इहलोक और परलोकमें सुख चाहनेवालोंको आदरके साथ प्रयत्नपूर्वक इसका सेवन करना चाहिये ॥ ४७ ॥

यह निर्मल एवं उत्तम शिवपुराण धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप चारों पुरुषाथोंको देनेवाला है, अतः सदा प्रेमपूर्वक इसका श्रवण एवं विशेष रूपसे पाठ करना चाहिये ॥ ४८ ॥

वेद, इतिहास तथा अन्य शास्त्रोंमें यह शिवपुराण विशेष कल्याणकारी है—ऐसा मुमुक्षुजनोंको समझना चाहिये ॥ ४९ ॥

यह शिवपुराण आत्मतत्त्वज्ञोंके लिये सदा सेवनीय है, सत्पुरुषोंके लिये पूजनीय है, तीर्णों प्रकारके तापोंका शमन करनेवाला है, सुख प्रदान करनेवाला है तथा ब्रह्म-विष्णु-पाहेशादि देवताओंको प्राणोंके समान प्रिय है ॥ ५० ॥

ऐसे शिवपुराणको मैं प्रसन्नचित्तसे सदा वन्दन करता हूँ। भगवान् शंकर मुझपर प्रसन्न हों और अपने चरणकम्लोंकी भक्ति मुझे प्रदान करें ॥ ५१ ॥

दूसरा अध्याय

शिवपुराणके श्रवणसे देवराजको शिवलोककी प्राप्ति

शौनकजी बोले—हे महाभाग सूतजी! आप धन्य हैं, परमार्थतत्त्वके ज्ञाता हैं, आपने कृपा करके हमलोगोंको यह बड़ी अद्भुत एवं दिव्य कथा सुनायी है ॥ १ ॥

हमने यह पापनाशिनी, मनको पवित्र करनेवाली और भगवान् शिवको प्रसन्न करनेवाली अद्भुत कथा सुनी ॥ २ ॥

भूतलपर इस कथाके समान कल्याणका सर्वश्रेष्ठ साधन दूसरा कोई नहीं है, यह बात हमने आज आपकी कृपासे निश्चयपूर्वक समझ ली। हे सूतजी! कलियुगमें इस कथाके द्वारा कौन-कौन-से पापी शुद्ध होते हैं? उन्हें कृपापूर्वक बताइये और इस जगत्को कृतार्थ कीजिये ॥ ३-४ ॥

सूतजी बोले—हे मुने! जो मनुष्य पापी, दुराचारी, खल तथा काम-क्रोध आदिमें निरन्तर ढूबे रहनेवाले हैं, वे भी इस पुराणसे अवश्य शुद्ध हो जाते हैं ॥ ५ ॥

यह कथा वास्तवमें उत्तम ज्ञानयज्ञ है, जो सदा सांसारिक भोग और मोक्षको देनेवाला है, सभी पापोंको नष्ट करनेवाला है और भगवान् शिवको प्रसन्न करनेवाला है। जो अत्यन्त लालची, सत्त्वविहीन, अपने माता-पितासे द्वेष करनेवाले, पाखण्डी तथा हिंसक वृत्तिके हैं; वे भी इस ज्ञानयज्ञसे शुद्ध हो जाते हैं। अपने वर्णाश्रमधर्मका पालन न करनेवाले और ईर्ष्याग्रस्त लोग भी कलिकालमें इस ज्ञानयज्ञके द्वारा पवित्र हो जाते हैं ॥ ६—८ ॥

जो लोग छल-कपट करनेवाले, कूर स्वभाववाले और अत्यन्त निर्दयी हैं, कलियुगमें वे भी इस ज्ञानयज्ञसे शुद्ध हो जाते हैं। ब्राह्मणके धनसे पलनेवाले तथा निरन्तर व्याभिचारपरायण जो लोग हैं, वे भी इस ज्ञानयज्ञसे इस कलिकालमें भी पवित्र हो जाते हैं। जो मनुष्य सदा पापकर्मोंमें लिप्त रहते हैं, शठ हैं और अत्यन्त दूषित विचारवाले हैं, वे कलियुगमें भी इस ज्ञानयज्ञसे निर्मल हो जाते हैं। दुश्चरित्र, दुर्युद्धि, उद्दिन चित्तवाले और देवताओंके द्रव्यका उपभोग करनेवाले पापीजन भी कलिकालमें भी इस ज्ञानयज्ञसे पवित्र हो जाते हैं ॥ ९—१२ ॥

इस पुराणके श्रवणका पुण्य बड़े-बड़े पापोंको नष्ट करता है, सांसारिक भोग तथा मोक्ष प्रदान करता है और भगवान् शंकरको प्रसन्न करता है ॥ १३ ॥

इस सम्बन्धमें मुनिगण इस प्राचीन इतिहासका उदाहरण दिया करते हैं, जिसके श्रवणमात्रसे पापोंका पूर्णतया नाश हो जाता है ॥ १४ ॥

पहलेकी बात है—किरातनगरमें एक ब्राह्मण रहता था, जो अज्ञानी, दर्दित, रस वेचनेवाला तथा वैदिक धर्मसे विमुख था। वह स्नान-सन्ध्या आदि कर्मोंसे भ्रष्ट हो गया था और वैश्यवृत्तिमें तत्पर रहता था। उसका नाम था देवराज। वह अपने ऊपर विश्वास करनेवाले लोगोंको ठगा करता था। उसने ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों,

शूद्रों तथा दूसरोंको भी अनेक बहानोंसे मारकर उनका धन हड्डप लिया था। बादमें उसने अधर्मसे बहुत सारा धन अर्जित कर लिया, परंतु उस पापीका थोड़ा-सा भी धन कभी धर्मके काममें नहीं लगा ॥ १५—१६ ॥

एक दिन वह ब्राह्मण एक तालाबपर नहाने गया। वहाँ शोभावती नामकी एक वेश्याको देखकर वह अत्यन्त मोहित हो गया। वह सुन्दरी भी उस धनी ब्राह्मणको अपने वशीभूत हुआ जानकर प्रसन्न हुई। आपसमें वार्तालापसे उनमें प्रीति उत्पन्न हो गयी। उस ब्राह्मणने उस वेश्याको पली बनाना तथा उस वेश्याने उसे पति बनाना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार कामवश होकर वे दोनों बहुत समयतक विहार करते रहे ॥ १९—२१ ॥

बैठने, सोने, खाने-पीने तथा क्रीड़ामें वे दोनों निरन्तर पति-पत्नीकी तरह व्यवहार करने लगे। अपने माता-पिता तथा पत्नीके बार-बार रोकनेपर भी पापकृत्यमें संलग्न वह ब्राह्मण उनकी बात नहीं मानता था ॥ २२—२३ ॥

एक दिन रात्रिमें उस दुष्टने ईर्ष्यावश अपने सोये हुए माता-पिता और पत्नीको मार डाला और उनका सारा धन हर लिया। वेश्यामें आसक्त चित्तवाले उस कामीने अपना और पिता आदिका सारा धन उस वेश्याको दे दिया। वह पापी अभक्ष्य-भक्षण तथा मद्यपान करने लगा और वह नीच ब्राह्मण उस वेश्याके साथ एक ही पात्रमें सदा जूठा भोजन करने लगा ॥ २४—२६ ॥

एक दिन धूमता-घामता वह दैवयोगसे प्रतिष्ठानपुर (झूंसी-प्रयाग) —में जा पहुँचा। वहाँ उसने एक शिवालय देखा, जहाँ बहुतसे साधु-महात्मा एकत्र हुए थे ॥ २७ ॥

देवराज उस शिवालयमें उठर हर गया और वहाँ उस ब्राह्मणको ज्वर आ गया। उस ज्वरसे उसको बड़ी पीड़ा होने लगी। वहाँ एक ब्राह्मणदेवता शिवपुराणकी कथा सुना रहे थे। ज्वरमें पड़ा हुआ देवराज ब्राह्मणके मुखारविन्दसे निकली हुई उस शिवकथाको निरन्तर सुनता रहा ॥ २८ ॥

एक मासके बाद वह ज्वरसे अत्यन्त पीड़ित होकर चल बसा। यमराजके दूत आये और उसे पाशोंसे बाँधकर बलपूर्वक यमपुरीमें ले गये ॥ २९ ॥

इतनेमें ही शिवलोकसे भगवान् शिवके पार्षदगण आ गये। उनके गौर अंग कर्पूरके समान उज्ज्वल थे, हाथ



त्रिशूलसे सुशोभित हो रहे थे, उनके सम्पूर्ण अंग भस्मसे उद्धासित थे और रुद्राक्षकी मालाएँ उनके शरीरकी शोभा बढ़ा रही थीं। वे सब-के-सब क्रोध करते हुए यमपुरीमें गये और यमराजके दूतोंको मार-पीटकर, बारम्बार धमकाकर उन्होंने देवराजको उनके चंगुलसे हूँड़ा लिया और अत्यन्त अद्भुत विमानपर बिठाकर जब वे शिवदूत

// इस प्रकार ग्रीस्कन्दमहापुराणके अन्तर्गत शिवपुराणमहात्म्यमें देवराजमुक्तिवर्णन नामक दूसरा अध्याय पूर्ण हुआ // २ //

कैलास जानेको उद्यत हुए, उस समय यमपुरीमें बड़ा भारी कोलाहल मच गया ॥ ३०—३२ ॥

उस कोलाहलको सुनकर धर्मराज अपने भवनसे बाहर आये। साक्षात् दूसरे रुद्रोंके समान प्रतीत होनेवाले उन चारों दूतोंको देखकर धर्मज्ञ धर्मराजने उनका विधिपूर्वक पूजन किया ॥ ३३—३४ ॥

यमने ज्ञानदृष्टिसे देखकर सारा वृत्तान्त जान लिया, उन्होंने भयके कारण भगवान् शिवके उन महात्मा दूतोंसे कोई बात नहीं पूछी ॥ ३५ ॥

यमराजसे पूजित तथा प्रार्थित होकर वे शिवदूत कैलासको चले गये और उन्होंने उस ब्राह्मणको दयासागर सम्ब शिवको दे दिया ॥ ३६ ॥

शिवपुराणकी यह परम पवित्र कथा धन्य है, जिसके सुननेसे पापीजन भी मुक्तिके योग्य बन जाते हैं। भगवान् सदाशिवके परमधामको वेदज्ञ सभी लोकोंमें सर्वश्रेष्ठ बताते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अन्य प्राणी; यहाँतक कि जिस पापीने धनके लोभसे अनेक लोगोंकी हत्या की तथा अपने माता-पिता और पलीको भी मार डाला; वह वैश्यागामी, शराबी ब्राह्मण देवराज भी इस कथाके प्रभावसे भगवान् शिवके परमधामको प्राप्तकर तत्क्षण मुक्त हो गया ॥ ३७—४० ॥

तीसरा अध्याय

चंचुलाका पापसे भय एवं संसारसे वैराग्य

शौनकजी बोले—हे महाभाग सूतजी! आप सर्वज्ञ हैं। हे महामते! आपके कृपाप्रसादसे मैं बारम्बार कृतार्थ हुआ। इस इतिहासको सुनकर मेरा मन अत्यन्त आनन्दमें निमग्न हो रहा है। अतः अब भगवान् शिवमें प्रेम बढ़ानेवाली शिवसम्बन्धिनी दूसरी कथाको भी कहिये ॥ १-२ ॥

अमृत पीनेवालोंको लोकमें कहीं मुक्ति नहीं प्राप्त होती है, किंतु भगवान् शंकरके कथामृतका पान तो प्रत्यक्ष ही मुक्ति देनेवाला है। सदाशिवकी जिस कथाके

सुननेमात्रसे मनुष्य शिवलोक प्राप्त कर लेता है, वह कथा धन्य है, धन्य है और कथाका श्रवण करानेवाले आप भी धन्य हैं, धन्य हैं ॥ ३-४ ॥

सूतजी बोले—हे शौनक! सुनिये, मैं आपके सामने गोपनीय कथावस्तुका भी वर्णन करूँगा; क्योंकि आप शिवभक्तोंमें अग्रगण्य तथा वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ हैं। समुद्रके निकटवर्ती प्रदेशमें एक बाघल नामक ग्राम है, जहाँ वैदिक धर्मसे विमुख महापापी द्विज निवास करते हैं। वे सब-के-सब बड़े दुष्ट हैं, उनका मन दूषित

विषयभोगोंमें ही लगा रहता है। वे न देवताओंपर विश्वास करते हैं न भाग्यपर; वे सभी कुटिल वृत्तिवाले हैं। किसानी करते और भौति-भौतिके घातक अस्त्र-शस्त्र रखते हैं। वे परस्त्रीगमन करनेवाले और खल हैं। ज्ञान, वैराग्य तथा सद्धर्मको वे बिलकुल नहीं जानते हैं। वे सभी पशुबुद्धिवाले हैं और सदा दूषित बातोंको सुननेमें संलग्न रहते हैं ॥ ५—८ ॥

(जहाँके द्विज ऐसे हों, वहाँके अन्य वर्णोंके विषयमें क्या कहा जाय!) अन्य वर्णोंके लोग भी उन्होंकी भौति कुत्सित विचार रखनेवाले, स्वधर्मविमुख एवं खल हैं; वे सदा कुकर्ममें लगे रहते हैं और नित्य विषयभोगोंमें ही ढूबे रहते हैं ॥ ९ ॥

वहाँकी सब स्त्रियाँ भी कुटिल स्वभावकी, स्वेच्छाचारिणी, पापासक, कुत्सित विचारवाली और व्यभिचारिणी हैं। वे सद्व्यवहार तथा सदाचारसे सर्वथा शून्य हैं ॥ १० ॥

कुजनोंके निवासस्थान उस बाज्कल नामक ग्राममें किसी समय एक बिन्दुगा नामधारी ब्राह्मण रहता था, वह बड़ा अथम था ॥ ११ ॥

वह दुरात्मा और महापापी था। यद्यपि उसकी स्त्री बड़ी सुन्दर थी, तो भी वह कुर्मागर्पर ही चलता था। कामवासनासे कलुषितचित् वह वेश्यागामी था ॥ १२ ॥

उसकी पत्नीका नाम चंचुला था, वह सदा उत्तम धर्मके पालनमें लगी रहती थी, तो भी उसे छोड़कर वह दुष्ट ब्राह्मण कामासक होकर वेश्यागामी हो गया था ॥ १३ ॥

इस तरह कुकर्ममें लगे हुए उस बिन्दुगके बहुत वर्ष व्यतीत हो गये। उसकी स्त्री चंचुला कामसे पीड़ित होनेपर भी स्वधर्मनाशके धयसे बलेश सहकर भी दीर्घकालतक धर्मसे भ्रष्ट नहीं हुई। परंतु दुराचारी पतिके आचरणसे प्रभावित होनेके कारण कामपीड़ित हो आगे चलकर वह स्त्री भी दुराचारिणी हो गयी ॥ १४—१५ ॥

भ्रष्ट चरित्रवाली वह कुमार्गामिनी अपने पतिकी दृष्टि बचाकर रात्रिमें चोरी-छिपे अन्य पापी जार पुरुषके साथ रमण करने लगी ॥ १६ ॥

हे मुने! एक बार उस ब्राह्मणने अपनी उस

दुराचारिणी पत्नी चंचुलाको कामासक हो परपुरुषके साथ रात्रिमें संसर्गरत देख लिया ॥ १७ ॥

उस दुष्ट तथा दुराचारमें आसक मनवाली पत्नीको रातमें परपुरुषके साथ व्यभिचाररत देखकर वह झोधपूर्वक वेगसे दौड़ा ॥ १८ ॥

उस दुष्ट बिन्दुगको घरमें आया जानकर वह कपटी व्यभिचारी तेजीसे भाग गया ॥ १९ ॥

तब वह दुष्टात्मा बिन्दुग अपनी पत्नीको पकड़कर उसे डाँटा हुआ मुक्कोंसे बार-बार पीटने लगा ॥ २० ॥

वह व्यभिचारिणी दुष्टा नारी चंचुला पीटी जानेपर कुपित होकर निर्भयतापूर्वक अपने दुष्ट पति बिन्दुगसे कहने लगी ॥ २१ ॥

चंचुला बोली—मुझ पतिपरायणा युवती पत्नीको छोड़कर आप कुबुद्धिवश प्रतिदिन वेश्याके साथ इच्छानुसार रमण करते हैं। आप ही बतायें कि रूपवती तथा कामासक चित्तवाली मुझ युवतीकी पतिसंसर्गके बिना क्या गति होती होगी? मैं अत्यन्त सुन्दर हूँ तथा नवयौवनसे उन्मत्त हूँ। आपके संसर्गके बिना व्यथितचित्तवाली मैं कामजन्य दुःखको कैसे सह सकती हूँ? ॥ २२—२४ ॥

सूतजी बोले—उस स्त्रीके इस प्रकार कहनेपर वह मूढ़बुद्धि मुर्ख ब्राह्मणाधम स्वधर्मविमुख दुष्ट पापी बिन्दुग कहने लगा— ॥ २५ ॥

बिन्दुग बोला—कामसे व्याकुलचित् होकर तुमने यह सत्य ही कहा है। हे प्रिये! तुम भय त्याग दो और मैं जो तुमसे हितकी बात कहता हूँ, उसे सुनो। तुम निर्भय होकर नित्य परपुरुषोंके साथ संसार करो। उन्हें सन्तुष्ट करके उनसे धन खींचो। वह सारा धन वेश्याके प्रति आसक मनवाले मुझको दे दिया करो। इससे तुम्हारा और मेरा दोनोंका ही स्वार्थ सिद्ध हो जायगा ॥ २६—२८ ॥

सूतजी बोले—पतिका यह वचन सुनकर उसकी पत्नी चंचुलाने प्रसन्न होकर उसकी कही बात मान ली। उन दोनों दुराचारी पति-पत्नीने इस प्रकार समझौता कर लिया तथा वे दोनों निर्भय चित्तसे कुकर्ममें लीन हो गये ॥ २९—३० ॥

इस तरह दुराचारमें ढूबे हुए उन मूढ़ चित्तवाले

पति-पत्नीका बहुत-सा समय व्यथ बोत गया ॥ ३१ ॥

तदनन्तर शूद्रजातीय वेश्याका पति बना हुआ वह दूषित बुद्धिवाला दुष्ट ब्राह्मण बिन्दुग समयानुसार मृत्युको प्राप्त हो नरकमें जा पड़ा। बहुत दिनोंतक नरकके दुःख भोगकर वह मूढ़बुद्धि पापी विन्ध्यपर्वतपर भयंकर पिशाच हुआ ॥ ३२-३३ ॥

इधर, उस दुराचारी पति बिन्दुगके मर जानेपर वह मूढ़हृदया चंचुला बहुत समयतक पुत्रोंके साथ अपने घरमें ही रही ॥ ३४ ॥

इस प्रकार प्रेमपूर्वक कामासक्त होकर जारोंके साथ विहार करती हुई उस चंचुला नामक स्त्रीका कुछ-कुछ यौवन समयके साथ ढलने लगा ॥ ३५ ॥

एक दिन दैवयोगसे किसी पुण्य पर्वके आनेपर वह स्त्री भाई-बन्धुओंके साथ गोकर्ण-क्षेत्रमें गयी। तीर्थयात्रियोंके संगसे उसने भी उस समय जाकर किसी तीर्थके जलमें स्नान किया। फिर वह साधारणतया (मेला देखनेकी दृष्टिसे) बन्धुजनोंके साथ यत्र-तत्र धूमने लगी। [धूमती-धामती] किसी देवमन्दिरमें उसने एक दैवज्ञ ब्राह्मणके मुखसे भगवान् शिवकी परम पवित्र एवं मंगलकारिणी उत्तम पौराणिक कथा सुनी ॥ ३६—३८ ॥



[कथावाचक ब्राह्मण कह रहे थे कि] 'जो स्त्रियाँ परपुरुषोंके साथ व्यभिचार करती हैं, वे मरनेके बाद जब

यमलोकमें जाती हैं, तब यमराजके दूत उनकी योनिमें तपे हुए लोहेका परिष डालते हैं।' पौराणिक ब्राह्मणके मुखसे यह वैराग्य बढ़ानेवाली कथा सुनकर चंचुला भयसे व्याकुल हो वहाँ कौपने लगी ॥ ३९-४० ॥

जब कथा समाप्त हुई और लोग वहाँसे बाहर चले गये, तब वह भयभीत नारी एकान्तमें शिवपुराणकी कथा बाँचनेवाले उन ब्राह्मणसे कहने लगी ॥ ४१ ॥

चंचुलाने कहा—ब्रह्मन्। मैं अपने धर्मको नहीं जानती थी। इसलिये मेरे द्वारा बड़ा दुराचार हुआ है। स्वामिन्! इसे सुनकर मेरे ऊपर अनुपम कृपा करके आप मेरा उद्धार कीजिये ॥ ४२ ॥

हे प्रभो! मैंने मूढ़बुद्धिके कारण घोर पाप किया है। मैंने कामान्ध होकर अपनी सम्पूर्ण युवावस्था व्यभिचारमें बितायी है ॥ ४३ ॥

आज वैराग्य-रससे ओतप्रोत आपके इस प्रवचनको सुनकर मुझे बड़ा भय लग रहा है। मैं कौप उठी हूँ और मुझे इस संसारसे वैराग्य हो गया है। मुझ मूढ़ चित्तवाली पापिनीको धिक्कार है। मैं सर्वथा निन्दके योग्य हूँ। मैं कृतिस्त विषयोंमें फैसी हुई हूँ और अपने धर्मसे विमुख हो गयी हूँ ॥ ४४-४५ ॥

थोड़ेसे सुखके लिये अपने हितका नाश करनेवाले तथा भयंकर कष्ट देनेवाले घोर पाप मैंने अनजानमें ही कर डाले ॥ ४६ ॥

हाय! न जाने किस-किस घोर कष्टदायक दुर्गतिमें मुझे पड़ना पड़ेगा और वहाँ कौन बुद्धिमान् पुरुष कुमारगमें मन लगानेवाली मुझ पापिनीका साथ देगा? मृत्युकालमें उन भयंकर यमदूतोंको मैं कैसे देखूँगी? जब वे बलपूर्वक मेरे गलेमें फेंदे डालकर मुझे बाँधेंगे, तब मैं कैसे धीरज धारण कर सकूँगी? नरकमें जब मेरे शरीरके दुकड़े-दुकड़े किये जायेंगे, उस समय विशेष दुःख देनेवाली उस महायातनाको मैं वहाँ कैसे सहूँगी? ॥ ४७—४९ ॥

दुःख और शोकसे ग्रस्त होकर मैं दिनमें सहज इन्द्रियव्यापार और रात्रिमें नींद कैसे प्राप्त कर सकूँगी? हाय! मैं मारी गयी! मैं जल गयी! मेरा हृदय विदीर्ण

हो गया और मैं सब प्रकारसे नष्ट हो गयी; क्योंकि मैं हर तरहसे पापमें ही दूबी रही हूँ ॥ ५०-५१ ॥

हाय विधाता ! मुझ पापिनीको आपने हठात ऐसी दुर्बुद्धि क्यों दे दी, जो सभी प्रकारका सुख देनेवाले स्वधर्मसे दूर कर देती है ! हे द्विज ! शूलसे बिंधा हुआ व्यक्ति कौन्चे पर्वत-शिखरसे गिरनेपर जैसा घोर कष्ट पाता है, उससे भी करोड़ गुना कष्ट युज्ञे है। सैकड़ों अश्वमेधघञ्ज करके अथवा सैकड़ों वर्षोंतक गंगास्नान करनेपर भी मेरे घोर पापोंकी शुद्धि सम्भव नहीं दीखती। मैं क्या करूँ, कहाँ

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके अन्तर्गत शिवपुराणमाहात्म्यमें चंचुलावैतर्यवर्णन नामक तीसरा अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ३ ॥

जाँऊ और किसका आश्रय लूँ ? मुझ नरकगामिनीकी इस संसारमें कौन रक्षा करेगा ? ॥ ५२-५५ ॥

हे ब्रह्मन् ! आप ही मेरे गुरु हैं, आप ही माता और आप ही पिता हैं। आपकी शरणमें आयी हुई मुझ दीन अबलाका उद्धार कीजिये, उद्धार कीजिये ॥ ५६ ॥

सूतजी बोले—हे शौनक ! इस प्रकार खेद और वैराग्यसे युक्त हुई चंचुला उस ब्राह्मणके चरणोंमें गिर पड़ी। तब उन बुद्धिमान् ब्राह्मणने कृपापूर्वक उसे उठाकर इस प्रकार कहा ॥ ५७ ॥

चौथा अध्याय

चंचुलाकी प्रार्थनासे ब्राह्मणका उसे पूरा शिवपुराण सुनाना और समयानुसार शरीर छोड़कर शिवलोकमें जा चंचुलाका पार्वतीजीकी सखी होना

ब्राह्मण बोले—सौभाग्यकी बात है कि भगवान् शंकरकी कृपासे शिवपुराणकी इस वैराग्ययुक्त तथा श्रेष्ठ कथाको सुनकर तुम्हें समयपर चेत हो गया है। हे ब्राह्मणपत्नी ! तुम डरो मत, भगवान् शिवकी शरणमें जाओ। शिवकी कृपासे सारा पाप तत्काल नष्ट हो जाता है। मैं तुमसे भगवान् शिवकी कीर्तिकथासे युक्त उस परम वत्सुका वर्णन करूँगा, जिससे तुम्हें सदा सुख देनेवाली उत्तम गति प्राप्त होगी ॥ १-३ ॥

शिवकी उत्तम कथा सुननेसे ही तुम्हारी बुद्धि इस तरह पश्चात्तापसे युक्त एवं शुद्ध हो गयी है; साथ ही तुम्हरे मनमें विषयोंके प्रति वैराग्य हो गया है। पश्चात्ताप ही पाप करनेवाले पापियोंके लिये सबसे बड़ा प्रायशिच्छत है। सत्युरुद्धोने सबके लिये पश्चात्तापको ही समस्त पापोंका शोधक बताया है। पश्चात्तापसे ही पापोंकी शुद्धि होती है। जो पश्चात्ताप करता है, वही वास्तवमें पापोंका प्रायशिच्छत करता है; क्योंकि सत्युरुद्धोने समस्त पापोंकी शुद्धिके लिये जैसे प्रायशिच्छतका उपदेश किया है, वह सब पश्चात्तापसे सम्पन्न हो जाता है ॥ ४-६ ॥

जो पुरुष विधिपूर्वक प्रायशिच्छत करके निर्भय हो जाता है, पर अपने कुकर्मके लिये पश्चात्ताप नहीं

करता, उसे प्रायः उत्तम गति नहीं प्राप्त होती। परंतु जिसे अपने कुकृत्यपर हार्दिक पश्चात्ताप होता है, वह अवश्य उत्तम गतिका भागी होता है, इसमें संशय नहीं है। इस शिवपुराणकी कथा सुननेसे जैसी चित्तशुद्धि होती है, वैसी दूसरे उपायोंसे नहीं होती ॥ ७-८ ॥

जैसे दर्पण साफ करनेपर निर्मल हो जाता है, उसी प्रकार इस शिवपुराणकी कथासे चित्त अत्यन्त शुद्ध हो जाता है—इसमें संशय नहीं है। मनुष्योंके शुद्ध चित्तमें जगदम्बा पार्वतीसहित भगवान् शिव विराजमान रहते हैं। इससे वह विशुद्धात्मा पुरुष श्रीसाम्बसदाशिवके परम पदको प्राप्त होता है ॥ ९-१० ॥

इस प्रकार यह कथारूपी साधन सभी प्रणियोंके लिये उपकारी है और इसी कारण महादेवजीने इसको आप्रहपूर्वक प्रकट किया है। इस कथासे भगवान् उमापतिका ध्यान सिद्ध हो जाता है। उस ध्यानसे परम ज्ञान और उससे मोक्षकी प्राप्ति निश्चय ही होती है। भगवान् शंकरके ध्यानमें मान हुए बिना भी यदि कोई इस कथाको मात्र सुनता है, वह दूसरे जन्ममें भगवान्के ध्यानको सिद्धकर परमपदको पा लेता है। इस कथाके ब्रवणसे भगवान् शंकरके ध्यानको प्राप्तकर पश्चात्ताप करनेवाले पापी

पुरुष सिद्धिको प्राप्त हो गये हैं ॥ ११—१४ ॥

इस उत्तम कथाका श्रवण समस्त मनुष्योंके लिये कल्याणका बीज है। अतः यथोचित (शास्त्रोक) मार्गसे इसकी आराधना अथवा सेवा करनी चाहिये। यह कथा-श्रवण भव-बन्धनरूपी रोगका नाश करनेवाला है। भगवान् शिवकी कथाको सुनकर फिर अपने हृदयमें उत्सका मनन एवं निदिध्यासन करनेसे पूर्णतया चित्तशुद्धि हो जाती है। चित्तशुद्धि होनेसे महेश्वरकी भक्ति अपने दोनों पुत्रों (ज्ञान और वैराग्य)-के साथ निश्चय ही प्रकट होती है। तत्पश्चात् महेश्वरके अनुग्रहसे दिव्य मुक्ति प्राप्त होती है, इसमें संशय नहीं है। जो शिवभक्तिसे बंधित है, उसे पशु समझना चाहिये; योंकि उसका चित्त मायाके बन्धनमें आसक्त है। वह निश्चय ही संसारबन्धनसे मुक्त नहीं हो पाता ॥ १५—१८ ॥

हे ब्राह्मणपत्नी! इसलिये तुम विषयोंसे मनको हटा लो और भक्तिभावसे भगवान् शंकरकी इस परम पावन कथाको सुनो। परमात्मा शंकरकी इस कथाको सुननेसे तुम्हारे चित्तकी शुद्धि होगी और उससे तुम्हें मोक्षकी प्राप्ति हो जायगी। निर्मल चिन्तसे भगवान् शिवके चरणारविन्दोंका चिन्तन करनेवालेकी एक ही जन्ममें मुक्ति हो जाती है— यह मैं तुमसे सत्य-सत्य कहता हूँ ॥ १९—२१ ॥

सूतजी बोले—शौनक! इतना कहकर वे श्रेष्ठ शिवभक्त ब्राह्मण मौन हो गये। उनका हृदय करुणासे आर्द्ध हो गया था। वे शुद्धचित्त महात्मा भगवान् शिवके ध्यानमें मन हो गये ॥ २२ ॥

तदनन्तर बिन्दुगकी पत्नी चंचुला मन-ही-मन प्रसन्न हो उठी। ब्राह्मणका उक्त उपदेश सुनकर उसके नेत्रोंमें आनन्दके आँसू छलक आये थे। वह ब्राह्मणपत्नी चंचुला हर्षित हृदयसे उन श्रेष्ठ ब्राह्मणके चरणोंमें गिर पड़ी और हाथ जोड़कर बोली—‘मैं कृतार्थ हो गयी’ ॥ २३—२४ ॥

तत्पश्चात् उठकर वैराग्ययुक्त तथा उत्तम बुद्धिवाली वह स्त्री, जो अपने पापोंके कारण आतंकित थी, उन महान् शिवभक्त ब्राह्मणसे हाथ जोड़कर गद्गद वाणीमें कहने लगी ॥ २५ ॥

चंचुला बोली—हे ब्रह्मन्! हे शिवभक्तोंमें श्रेष्ठ!

हे स्वामिन्! आप धन्य हैं, परमार्थदर्शी हैं और सदा परोपकारमें लगे रहते हैं, इसलिये आप श्रेष्ठ साधु पुरुषोंमें प्रशंसाके योग्य हैं। हे साधो! मैं नरकके समुद्रमें गिर रही हूँ। आप मेरा उद्धार कीजिये, उद्धार कीजिये। पौराणिक अर्थतत्त्वसे सम्पन्न जिस सुन्दर शिवपुराणकी कथाको सुनकर मेरे मनमें सम्पूर्ण विषयोंसे वैराग्य उत्पन्न हो गया, उसी इस शिवपुराणको सुननेके लिये इस समय मेरे मनमें बड़ी श्रद्धा हो रही है ॥ २६—२८ ॥

सूतजी बोले—ऐसा कहकर हाथ जोड़ उनका अनुग्रह पाकर चंचुला उस शिवपुराणकी कथाको सुननेकी इच्छा मनमें लिये उन ब्राह्मणदेवताकी सेवामें तत्पर हो वहाँ रहने लगी ॥ २९ ॥

तदनन्तर शिवभक्तोंमें श्रेष्ठ और शुद्ध बुद्धिवाले उन ब्राह्मणदेवताने उसी स्थानपर उस स्त्रीको शिवपुराणकी उत्तम कथा सुनायी ॥ ३० ॥

इस प्रकार उस [गोकर्ण नामक] महाक्षेत्रमें उन्हीं श्रेष्ठ ब्राह्मणसे उसने शिवपुराणकी वह परम उत्तम कथा सुनी, जो भक्ति, ज्ञान और वैराग्यको बढ़ावेलाली तथा मुक्ति देनेवाली है। उस परम उत्तम कथाको सुनकर वह ब्राह्मणपत्नी अत्यन्त कृतार्थ हो गयी ॥ ३१—३२ ॥

उन सदगुरुकी कृपासे उसका चित्त शीघ्र ही शुद्ध हो गया, भगवान् शिवके अनुग्रहसे उसके हृदयमें शिवके सगुणरूपका चिन्तन होने लगा ॥ ३३ ॥

इस प्रकार सदगुरुक्त आश्रय लेकर उसने भगवान् शिवमें लगी रहनेवाली उत्तम बुद्धि पाकर शिवके सच्चिदानन्दमय स्वरूपका बारंबार चिन्तन आरम्भ किया ॥ ३४ ॥

वह प्रतिदिन तीर्थके जलमें स्नान करके जटा और बल्कल धारण करने लगी तथा समूची देहमें भस्म लगाकर रुद्राक्षके आभूषण धारण करने लगी। वह भगवान् शिवके नामजपमें लगी रहती थी, संयमित वाणी और अल्पाहार करते हुए गुरुके बताये मार्गसे वह शिवजीको प्रसन्न करने लगी। हे शौनक! इस प्रकार शम्भुका उत्तम ध्यान करते हुए उस चंचुलाका बहुत-सा समय योत गया ॥ ३५—३७ ॥

तत्पश्चात् समयके पूर्ण होनेपर भक्ति, ज्ञान और वैराग्यसे युक्त हुई चंचुलाने अपने शरीरको बिना किसी

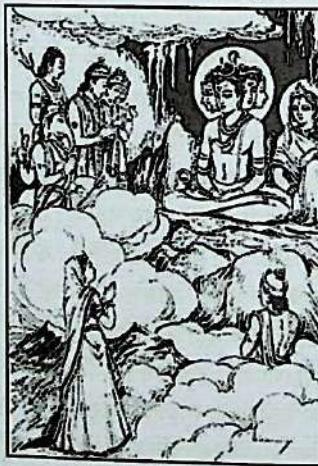
कष्टके त्याग दिया ॥ ३८ ॥

इतनेमें ही त्रिपुरशत्रु भगवान् शिवका भेजा हुआ एक दिव्य विमान द्रुत गतिसे वहाँ पहुँचा, जो उनके अपने गणोंसे संयुक्त और भौति-भौतिके शोभा-साधनोंसे सम्पन्न था। चंचुला उस विमानपर आरूढ़ हुई और भगवान् शिवके ब्रेष्ट पार्श्वदोनों उसे तत्काल शिवपुरीमें पहुँचा दिया। उसके सारे मल धूल गये थे। वह दिव्यरूपधारिणी दिव्यांगना हो गयी थी। उसके दिव्य अवयव उसकी शोभा बढ़ाते थे। मस्तकपर अर्धचन्द्रका मुकुट धारण किये वह गौरांगी देवी शोभाशाली दिव्य आभूषणोंसे विभूषित थी ॥ ३९—४१ ॥

वहाँ पहुँचकर उसने त्रिनेत्रधारी महादेवजीको देखा। ब्रह्मा, विष्णु आदि देवता उन सनातन शिवकी सेवा कर रहे थे। गणेश, भृंगी, नन्दीश, वीरभद्रेश्वर आदि गण उत्तम भक्तिके साथ उनकी उपासना कर रहे थे। उनकी अंगकान्ति करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशित हो रही थी। कण्ठमें नील चिह्न शोभा पाता था। उनके पाँच मुख थे और प्रत्येक मुखमें तीन-तीन नेत्र थे। मस्तकपर अर्धचन्द्रकार मुकुट शोभा देता था। उन्होंने अपने वामांगमें गौरी देवीको बिठा रखा था, जो विद्युत्-पुंजके समान प्रकाशित थीं। गौरीपति महादेवजीकी कान्ति कपूरके समान गौर थी। उन्होंने सभी अलंकार धारण कर रखे थे, उनका सारा शरीर श्वेत भस्मसे भासित था। शरीरपर श्वेत वस्त्र शोभा पा रहे थे। वे अत्यन्त उज्ज्वल वर्णके थे ॥ ४२—४५ ॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके अन्तर्गत शिवपुराणमाहात्म्यमें चंचुलासदगतिवर्णन नामक चौथा अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ४४ ॥

इस प्रकार परम उज्ज्वल भगवान् शंकरका दर्शन करके वह ब्राह्मणपत्नी चंचुला बहुत प्रसन्न हुई। अत्यन्त प्रीतियुक्त होकर उसने बड़ी उतावलीके साथ भगवान् को बारंबार प्रणाम किया। फिर हाथ जोड़कर वह बड़े प्रेम, आनन्द और सन्तोषसे युक्त हो विनीतभावसे खड़ी हो गयी। उसके



नेत्रोंसे आनन्दाश्रुओंकी अविरल धारा बहने लगी तथा सम्पूर्ण शरीरमें रोमांच हो गया। उस समय भगवती पार्वती और भगवान् शंकरने उसे बड़ी करुणाके साथ अपने पास बुलाया और सौम्य दृष्टिसे उसकी ओर देखा। पार्वतीजीने तो दिव्यरूपधारिणी विद्युत्प्रिया चंचुलाको प्रेमपूर्वक अपनी सखी बना लिया। वह उस परमानन्दघन ज्योतिःस्वरूप सनातनधारमें अविरल निवास पाकर दिव्य सौख्यसे सम्पन्न हो अक्षय सुखका अनुभव करने लगी ॥ ४६—५० ॥

पाँचवाँ अध्याय

चंचुलाके प्रथलसे पार्वतीजीकी आज्ञा पाकर तुम्बुरका विन्द्यपर्वतपर शिवपुराणकी कथा सुनाकर विद्युत्प्रियानिसे उद्धार करना तथा उन दोनों दम्पतीका शिवधारमें सुखी होना

शीनकजी बोले—हे महाभाग सूतजी! आप धन्य हैं, आपकी बुद्धि भगवान् शिवमें लगी हुई है। आपने कृपापूर्वक यह शिवभक्तिको बढ़ानेवाली अनुदृढ़ कथा हमें सुनायी। हे महामते! सद्गति प्राप्त करनेके बाद वहाँ

जाकर चंचुलाने क्या किया और उसके पतिका क्या हुआ; यह सब वृत्तान्त विस्तारसे हमें बताइये ॥ १-२ ॥

सूतजी बोले—हे शीनक! एक दिन परमानन्दमें निमग्न हुई चंचुलाने उमादेवीके पास जाकर प्रणाम किया

और दोनों हाथ जोड़कर वह उनकी स्तुति करने लगी ॥ ३ ॥

चंचुला बोली—हे गिरिराजनन्दिनी! हे स्कन्दमाता! मनुष्योंने सदा आपकी सेवा की है। समस्त सुखोंको देनेवाली है शम्भुप्रिये! हे ब्रह्मस्वरूपिणि! आप विष्णु और ब्रह्मा आदि देवताओंद्वारा सेव्य हैं। आप ही सगुणा और निर्गुणा भी हैं तथा आप ही सूक्ष्मा सच्चिदानन्दस्वरूपिणी आद्या प्रकृति हैं। आप ही संसारकी सुष्ठि, पालन और संहार करनेवाली हैं। तीनों गुणोंका आश्रय भी आप ही हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर—इन तीनों देवताओंका आवास-स्थान तथा उनकी उत्तम प्रतिष्ठा करनेवाली पराशक्ति आप ही हैं ॥ ४—६ ॥

सूतजी बोले—हे शौनक! जिसे सद्गति प्राप्त हो चुकी थी, वह चंचुला इस प्रकार महेश्वरपत्नी उमाकी स्तुति करके सिर झुकाये चुप हो गयी। उसके नेत्रोंमें प्रेमके आँसू उमड़ आये थे ॥ ७ ॥

तब करुणासे भरी हुई शंकरप्रिया भक्तवत्सला पार्वतीदेवी चंचुलाको सम्बोधित करके बड़े प्रेमसे इस प्रकार कहने लगी— ॥ ८ ॥

पार्वती बोली—हे सखी चंचुले! हे सुन्दरि! मैं तुम्हारी की हुई इस स्तुतिसे बहुत प्रसन्न हूँ। बोलो, क्या वर माँगती हो? तुम्हारे लिये मुझे कुछ भी अदेय नहीं है ॥ ९ ॥

सूतजी बोले—पार्वतीके इस प्रकार कहनेपर चंचुला उन्हें प्रणाम करके दोनों हाथ जोड़कर नतमस्तक हो प्रेमपूर्वक पूछने लगी— ॥ १० ॥

चंचुला बोली—हे निष्पाप गिरिराजकुमारी! मेरे पति बिन्दुग इस समय कहाँ हैं, उनकी कैसी गति हुई है— यह मैं नहीं जानती! कल्याणमयी दीनवत्सले। मैं अपने उन पतिदेवसे जिस प्रकार संयुक्त हो सकूँ, कृपा करके वैसा ही उपाय कीजिये। हे महेश्वरि! हे महादेवि! मेरे पति एक शूद्रजातीय वेश्याके प्रति आसक्त थे और पापमें ही ढूबे रहते थे। उनकी मृत्यु मुझसे पहले ही हो गयी थी। वे न जाने किस गतिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११—१२ ॥

सूतजी बोले—चंचुलाका यह वचन सुनकर नीतिवत्सला हिमालयपुत्री देवी पार्वतीने अत्यन्त प्रेमपूर्वक यह उत्तर दिया— ॥ १३ ॥

गिरिजा बोली—हे सुते! तुम्हारा बिन्दुग नामवाला पति बड़ा पापी था। उसका अन्तःकरण बड़ा ही दूषित था। वेश्याका उपभोग करनेवाला वह महामूळ मरनेके बाद नरकमें पड़ा; अगणित वर्षोंतक नरकमें नाना प्रकारके दुःख भोगकर वह पापात्मा अपने शेष पापको भोगनेके लिये विन्ध्यपर्वतपर पिशाच हुआ है। इस समय वह पिशाचकी अवस्थामें ही है और नाना प्रकारके क्लेश उठा रहा है। वह दुष्ट वर्हीं वायु पीकर रहता है और सदा सब प्रकारके कष्ट सहता है ॥ १४—१६ ॥

सूतजी बोले—हे शौनक! गौरीदेवीकी यह वात सुनकर उत्तम ब्रतका पालन करनेवाली वह चंचुला उस समय पतिके महान् दुःखसे दुखी हो गयी। फिर मनको स्थिर करके उस ब्राह्मणपत्नीने व्यथित हृदयसे महेश्वरीको प्रणाम करके पुनः पूछा— ॥ १७—१८ ॥

चंचुला बोली—हे महेश्वरि! हे महादेवि! मुझपर कृपा कीजिये और दूषित कर्म करनेवाले मेरे उस दुष्ट पतिका अब उद्धार कर दीजिये। हे देवि! कुत्सित बुद्धिवाले मेरे उस पापात्मा पतिको किस उपायसे उत्तम गति प्राप्त हो सकती है, यह शीघ्र बताइये। आपको नमस्कार है ॥ १९—२० ॥

सूतजी बोले—उसकी यह वात सुनकर भक्तवत्सला पार्वतीजी अपनी सखी चंचुलासे प्रसन्न होकर ऐसा कहने लगी— ॥ २१ ॥

पार्वतीजी बोली—तुम्हारा पति यदि शिवपुराणकी पुण्यमयी उत्तम कथा सुने तो सारी दुर्गातिको पार करके वह उत्तम गतिका भागी हो सकता है ॥ २२ ॥

अमृतके समान मधुर अक्षरोंसे युक्त गौरीदेवीका यह वचन आदरपूर्वक सुनकर चंचुलाने हाथ जोड़कर मस्तक झुकाकर उन्हें बारंबार प्रणाम किया और अपने पतिके समस्त पापोंकी शुद्धि तथा उत्तम गतिकी प्राप्तिके लिये पार्वतीदेवीसे यह प्रार्थना की कि मेरे पतिको शिवपुराण सुनानेकी व्यवस्था होनी चाहिये ॥ २३—२४ ॥

सूतजी बोले—उस ब्राह्मणपत्नीके बारंबार प्रार्थना करनेपर शिवप्रिया गौरीदेवीको बड़ी दया आयी। उन भक्तवत्सला महेश्वरी गिरिराजकुमारीने भगवान् शिवकी

उत्तम कीर्तिका गान करनेवाले गन्धर्वराज तुम्बुरुको बुलाकर उनसे प्रसन्नतापूर्वक इस प्रकार कहा— ॥ २५-२६ ॥



गिरिजा बोलीं—मेरे मनकी बातोंको जानकर मेरे अभीष्ट कार्योंको सिद्ध करनेवाले तथा शिवमें ग्रीति रखनेवाले हे तुम्बुरो ! [मैं तुमसे एक बात कहती हूँ ।] तुम्हारा कल्पणा हो । तुम मेरी इस सखीके साथ शीघ्र ही विन्ध्यपर्वतपर जाओ । वहाँ एक महावोर और भयंकर पिशाच रहता है । उसका बृत्तान्त तुम आरम्भसे ही सुनो । मैं तुमसे प्रसन्नतापूर्वक सब कुछ बताती हूँ ॥ २७-२८ ॥

पूर्वजन्ममें वह पिशाच बिन्दुग नामक ब्राह्मण था । वह मेरी इस सखी चंचुलाको पति था । परंतु वह दुष्ट वेश्यागामी हो गया । स्नान-सन्ध्या आदि नित्यकर्म छोड़कर वह अपवित्र रहने लगा । क्रोधके कारण उसकी तुम्हिंपर मूढ़ता छा गयी थी । वह कर्तव्याकर्तव्यका विवेक नहीं कर पाता था । अधक्षयभक्षण, सज्जनोंसे द्वेष और दूषित वस्तुओंका दान लेना—यही उसका स्वाभाविक कर्म बन गया था । वह अस्त्र-शस्त्र लेकर हिंसा करता, बायें हाथसे खाता, दीनोंको सताता और क्लूरापूर्वक पराये घरोंमें आग लगा देता था । वह चाण्डालोंसे प्रेम करता और प्रतिदिन वेश्याके सम्पर्कमें रहता था । वह बड़ा दुष्ट था । उस पापीने अपनी पत्नीका परित्याग कर दिया था और वह दुष्टोंके संगमें निरत रहता था ॥ २९-३२ ॥

उसने वेश्याके कुसंगसे अपने सारे पुण्य नष्ट कर लिये और धनके लोभसे अपनी पत्नीको निर्भय करके व्यभिचारिणी बना डाला ॥ ३३ ॥

वह मृत्युपर्यन्त दुराचारमें ही फँसा रहा । फिर समय आनेपर उसकी मृत्यु हो गयी । वह पापियोंके भोगस्थान घोर यमपुरमें गया और वहाँ बहुत-से नरकोंको भोगकर वह दुष्टात्मा इस समय विन्ध्यपर्वतपर पिशाच बना हुआ है । वहाँपर वह दुष्ट पिशाच अपने पापोंका फल भोग रहा है ॥ ३४-३५ ॥

तुम उसके आगे यत्नपूर्वक शिवपुराणकी उस दिव्य कथाका प्रवचन करो, जो परम पुण्यमयी तथा समस्त पापोंका नाश करनेवाली है । उत्तम शिवपुराणकी कथाके श्रवणसे उसका हृदय शीघ्र ही समस्त पापोंसे शुद्ध हो जायगा और वह प्रेतयोनिका परित्याग कर देगा । दुर्गतिसे मुक्त होनेपर उस बिन्दुग नामक पिशाचको मेरी आज्ञासे विमानपर बिठाकर तुम भगवान् शिवके समीप ले आओ ॥ ३६-३८ ॥

सूतीजी बोले—[हे शौनक !] महेश्वरी उमाके इस प्रकार आदेश देनेपर गन्धर्वराज तुम्बुरु मन-ही-मन बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने भायकी सराहना की । तत्पश्चात् उस पिशाचकी सती-साध्वी पत्नी चंचुलाके साथ विमानपर बैठकर नारदके प्रिय मित्र तुम्बुरु वेगपूर्वक विन्ध्याचल पर्वतपर गये, जहाँ वह पिशाच रहता था ॥ ३९-४० ॥

वहाँ उन्होंने उस पिशाचको देखा । उसका शरीर विशाल था और उसकी ठोड़ी बहुत बड़ी थी । वह कभी हँसता, कभी रोता और कभी उछलता था । उसकी आकृति बड़ी विकराल थी । भगवान् शिवकी उत्तम कीर्तिका गान करनेवाले महाबली तुम्बुरु उस अत्यन्त भयंकर पिशाचको बलपूर्वक पाशोंद्वारा बाँध लिया ॥ ४१-४२ ॥

तदनन्तर तुम्बुरु शिवपुराणकी कथा बाँचनेका निश्चय करके महोत्सवयुक्त स्थान और मण्डप आदिकी रचना की । इतनेमें ही सम्पूर्ण लोकोंमें बड़े वेगसे यह प्रचार हो गया कि देवी पार्वतीकी आज्ञासे एक पिशाचका उद्धार करनेके उद्देश्यसे शिवपुराणकी उत्तम कथा सुनानेके लिये तुम्बुरु विन्ध्यपर्वतपर गये हैं । तब तो उस कथाको सुननेके लोभसे बहुत-से देवता और

ऋषि भी शीघ्र ही वहाँ जा पहुँचे। आदर्पूर्वक शिवपुराण सुननेके लिये आये हुए लोगोंको उस पर्वतपर बड़ा अद्भुत और कल्याणकारी समाज जुट गया ॥ ४३—४४ ॥



तत्पश्चात् तुम्बुरुने उस पिशाचको पाशोंसे वाँधकर आसनपर बिठाया और हाथमें दीणा लेकर गौरीपतिकी कथाका गान आरम्भ किया। माहात्म्यसहित पहली अर्थात् प्रथम संहितासे लेकर सातवाँ संहितातक शिवपुराणकी कथाका उन्होंने स्पष्ट वर्णन किया ॥ ४७—४८ ॥

सात संहितावाले शिवपुराणका आदर्पूर्वक श्रवण करके वे सभी श्रोता पूर्णतः कृतार्थ हो गये। उस परम पुण्यमय शिवपुराणको सुनकर उस पिशाचने अपने सारे पायोंको धोकर उस पैशाचिक शरीरको त्याग दिया। शीघ्र ही उसका रूप दिव्य हो गया। अंगकान्ति गौरवर्णकी हो गयी। शरीरपर इबत वस्त्र तथा सब प्रकारके पुरुषोचित

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके अन्तर्गत शिवपुराणमाहात्म्यमें विन्दुगसदगतिवर्णन नामक याँचवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥

आभूषण उसके अंगोंको उद्दासित करने लगे। वह त्रिनेत्रधारी चन्द्रशेखररूप हो गया ॥ ४९—५१ ॥

इस प्रकार दिव्य देहधारी होकर श्रीमान् विन्दुग अपनी भार्या चंचुलाके साथ स्वयं भी पार्वतीपति भगवान् शिवके दिव्य चरित्रका गुणगान करने लगा। उसकी स्त्रीको इस प्रकार दिव्य रूपसे सुशोभित देखकर वे सभी देवता और ऋषि बड़े विस्मित हुए; उनका चित्त परमानन्दसे परिपूर्ण हो गया। भगवान् महेश्वरका वह अद्भुत चरित्र सुनकर वे सभी श्रोता परम कृतार्थ हो प्रेमपूर्वक श्रीशिवका यशोगान करते हुए अपने—अपने धामको चले गये ॥ ५२—५४ ॥

दिव्यरूपधारी श्रीमान् विन्दुग भी सुन्दर विमानपर अपनी प्रियतमाके पास बैठकर सुखपूर्वक आकाशमें स्थित हो परम शोभा पाने लगा ॥ ५५ ॥

तदनन्तर महेश्वरके सुन्दर एवं मनोहर गुणोंका गान करता हुआ वह अपनी प्रियतमा तथा तुम्बुरुके साथ शीघ्र ही शिवधाममें जा पहुँचा। वहाँ भगवान् महेश्वर तथा पार्वती देवीने प्रसन्नतापूर्वक विन्दुगका बड़ा सत्कार किया और उसे अपना गण बना लिया। उसकी पत्नी चंचुला पार्वतीजीकी सखी हो गयी। उस घनीभूतज्योतिःस्वरूप परमानन्दमय सनातनधाममें अविचल निवास पाकर वे दोनों दम्पती परम सुखी हो गये ॥ ५६—५८ ॥

यह उत्तम इतिहास मैंने आपको सुनाया, जो पायोंका नाश करनेवाला, उमा-महेश्वरको आनन्द देनेवाला, अत्यन्त पवित्र तथा उनमें भक्ति बढ़ानेवाला है। जो इसे भक्तिपूर्वक सुनता है अथवा एकाग्रचित होकर इसका पाठ करता है, वह अनेक सांसारिक सुखोंको भोगकर अन्तमें मुक्ति प्राप्त करता है ॥ ५९—६० ॥

छठा अध्याय

शिवपुराणके श्रवणकी विधि

शीनकजी बोले—हे महाप्राज्ञ! हे व्यासशिष्य! हे सूतजी! आपको नमस्कार है। आप धन्य हैं और शिवभक्तोंमें श्रेष्ठ हैं। आपके महान् गुण वर्णन करनेयोग्य हैं। अब आप कल्याणमय शिवपुराणके श्रवणकी विधि

बतलाइये, जिससे सभी श्रोताओंको सम्पूर्ण उत्तम फलकी प्राप्ति हो सके ॥ १-२ ॥

सूतजी बोले—हे शीनक! हे मुने! अब मैं आपको सम्पूर्ण फलकी प्राप्तिके लिये शिवपुराणके

त्रवणकी विधि बता रहा हूँ ॥ ३ ॥

[सर्वप्रथम] किसी ज्योतिषीको बुलाकर दान-मानसे सन्तुष्ट करके अपने सहयोगी लोगोंके साथ बैठकर बिना किसी विघ्न-बाधाके कथाकी समाप्ति होनेके उद्देश्यसे शुद्ध मूरहत्का अनुसन्धान कराये। तदनन्तर प्रयत्नपूर्वक देश-देशमें—स्थान-स्थानपर यह शुभ सन्देश भेजे कि हमारे यहाँ शिवपुराणकी कथा होनेवाली है। अपने कल्याणकी इच्छा रखनेवाले लोगोंको [उसे सुननेके लिये] अवश्य पधारना चाहिये ॥ ४-५ ॥

कुछ लोग भगवान् श्रीहरिकी कथासे बहुत दूर पड़ गये हैं। कितने ही स्त्री, शूद्र आदि भगवान् शंकरके कथा-कीर्तनसे चंचित रहते हैं—उन सबको भी सूचना हो जाय, ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये। देश-देशमें जो भगवान् शिवके भक्त हों तथा शिव-कथाके कीर्तन और त्रवणके लिये उत्सुक हों, उन सबको आदरपूर्वक बुलावाना चाहिये ॥ ६-७ ॥

[उन्हें कहलाना चाहिये कि] यहाँ सत्पुरुषोंको आनन्द देनेवाला समाज तथा अति अद्भुत उत्सव होगा, जिसमें शिवपुराणका पारायण होगा। श्रीशिवपुराणकी रसमयी कथाका त्रवण करनेहेतु आपलोग प्रेमपूर्वक शीघ्र पथरनेकी कृपा करें। यदि समयका अभाव हो तो प्रेमपूर्वक एक दिनके लिये भी आइये। आपको निश्चय ही आना चाहिये; क्योंकि इस कथामें क्षणभक्तके लिये बैठनेका सौभाग्य भी दुर्लभ है। इस प्रकार विनय और प्रसन्नतापूर्वक श्रोताओंको निमन्त्रण देना चाहिये और आये हुए लोगोंका सब प्रकारसे आदर-सत्कार करना चाहिये ॥ ८-११ ॥

शिवपन्दितरमें, तीर्थमें, वनप्रान्तमें अथवा घरमें शिवपुराणकी कथा सुननेके लिये उत्तम स्थानका निर्माण करना चाहिये ॥ १२ ॥

कथाभूमिको लीपकर शोधन करना चाहिये तथा धातु आदिसे उस स्थानको सुशोभित करना चाहिये। महोत्सवके साथ-साथ वहाँ अद्भुत तथा सुन्दर व्यवस्था कर लेनी चाहिये। कथाके लिये अनुपयोगी घरके साज-सामानको हटाकर घरके किसी एकान्त कोनेमें सुरक्षित

रख देना चाहिये ॥ १३-१४ ॥

केलेके खम्भोंसे सुशोभित एक ऊँचा कथामण्डप तैयार कराये। उसे सब और फल-पूज्य आदिसे तथा सुन्दर चैंदनेवेसे अलंकृत करे और चारों ओर ध्वजा-पताका लगाकर तरह-तरहके सामानोंसे सजाकर सुन्दर शोभासम्पन्न बना दे। भगवान् शिवके प्रति सब प्रकारसे उत्तम भक्ति करनी चाहिये; क्योंकि वही सब तरहसे आनन्दका विधान करनेवाली है ॥ १५-१६ ॥

परमात्मा भगवान् शंकरके लिये दिव्य आसनका निर्माण करना चाहिये तथा कथा-वाचकके लिये भी एक ऐसा दिव्य आसन बनाना चाहिये, जो उनके लिये सुखद हो सके ॥ १७ ॥

हे मुने! [नियमपूर्वक] कथा सुननेवाले श्रोताओंके लिये भी यथायोग्य सुन्दर स्थानोंकी व्यवस्था करनी चाहिये। अन्य लोगोंके लिये भी सामान्यरूपसे स्थान बनाने चाहिये ॥ १८ ॥

हे शैनकजी! विवाहोत्सवमें जैसी उल्लासपूर्ण मनःस्थिति होती है, वैसी ही इस कथोत्सवमें रखनी चाहिये। सब प्रकारकी दूसरी लौकिक चिन्ताओंको भूल जाना चाहिये ॥ १९ ॥

वक्ता उत्तर दिशाकी ओर मुख करे तथा श्रोतागण पूर्व दिशाकी ओर मुख करके पालथी लगाकर बैठें। इस विषयमें भी कोई विरोध नहीं है कि पूज्य-पूजकके बीच पूर्व दिशा रहे अथवा वक्ताके सम्मुख श्रोताओंका मुख रहे—ऐसा कहा गया है ॥ २०-२१ ॥

पौराणिक वक्ता व्यासासनपर जबतक विराजमान रहें, तबतक प्रसंग-समाप्तिके पूर्व किसीको नमस्कार नहीं करना चाहिये। पुराणका विद्वान् वक्ता चाहे बालक, युवा, वृद्ध, दरिद्र अथवा दुर्वल—जैसा भी हो, पुण्य चाहनेवालोंके लिये सदा वन्दनीय और पूज्य होता है ॥ २२-२३ ॥

जिसके मुखसे निकली हुई वाणी देहधारियोंके लिये कामधेनुके समान अभीष्ट फल देनेवाली होती है, उस पुराणवेत्ता वक्ताके प्रति तुच्छबुद्धि कभी नहीं करनी चाहिये। संसारमें जन्म तथा गुणोंके कारण बहुत-से गुरु

होते हैं, परंतु उन सबमें पुराणोंका ज्ञाता विद्वान् ही परम गुरु माना गया है ॥ २४-२५ ॥

करोड़ों योनियोंमें जन्म ले-लेकर दुःख भोगते हुए प्राणियोंको जो मुक्ति प्रदान करता है, उस [पुराणवक्ता]-से बड़ा दूसरा कौन गुरु हो सकता है ? ॥ २६ ॥

पुराणवेत्ता पवित्र, दक्ष, शान्त, ईर्ष्यापर विजय पानेवाला, साधु और दयालु होना चाहिये। ऐसा प्रवचनकुशल विद्वान् इस पुण्यमयी कथाको कहे। सूर्योदयसे आरम्भ करके साढ़े तीन पहरतक उत्तम बुद्धिवाले विद्वान् पुरुषको शिवपुराणकी कथा सम्यक् रीतिसे बीचनी चाहिये ॥ २७-२८ ॥

जो धूर्त, दुराचारी तथा दूसरेसे विवाद करनेवाले और प्रपंची लोग हैं, उन कुटिलवृत्तिवाले लोगोंके सामने यह कथा नहीं कहनी चाहिये। दुष्टोंसे भरे तथा डाकुओंसे घिरे प्रदेशमें और धूर्त व्यक्तिके घरमें इस पवित्र कथाको नहीं कहना चाहिये ॥ २९-३० ॥

मध्याह्नकालमें दो घड़ीतक कथा बन्द रखनी चाहिये, जिससे कथा-कीर्तनसे अवकाश पाकर लोग शौच आदिसे निवृत्त हो सकें ॥ ३१ ॥

कथा-प्रारम्भके दिनसे एक दिन पहले ब्रत ग्रहण करनेके लिये वक्ताको शौर करा लेना चाहिये। जिन दिनों कथा हो रही हो, उन दिनों प्रयत्नपूर्वक प्रातःकालका सारा नित्यकर्म संक्षेपसे ही कर लेना चाहिये। वक्ताके पास उसकी सहायताके लिये एक दूसरा वैसा ही विद्वान् स्थापित करना चाहिये, जो सब प्रकारके संशयोंको निवृत्त करनेमें समर्थ और लोगोंको समझानेमें कुशल हो ॥ ३२-३३ ॥

कथामें आनेवाले विज्ञानीकी निवृत्तिके लिये गणेशजीका पूजन करे। कथाके स्वामी भगवान् शिवकी तथा विशेषतः शिवपुराण ग्रन्थकी भक्तिभावसे पूजा करे। तत्प्रश्नचार्ता उत्तम बुद्धिवाला श्रोता विधिपूर्वक तन-मनसे शुद्ध एवं प्रसन्नचित्त हो आदरपूर्वक शिवपुराणकी कथा सुने ॥ ३४-३५ ॥

जो वक्ता और श्रोता अनेक प्रकारके कर्मोंमें भटक रहे हों, काम आदि छः विकारोंसे युक्त हों, स्त्रीमें

आसक्ति रखते हों और पाखण्डपूर्ण बातें कहते हों, वे पुण्यके भागी नहीं होते। जो लौकिक चिन्ता तथा धन, गृह एवं पुत्र आदिकी चिन्ताको छोड़कर कथामें मन लगाये रहता है, उस शुद्धबुद्धि पुरुषको उत्तम फलकी प्राप्ति होती है। श्रद्धा और भक्तिसे युक्त, दूसरे कर्मोंमें मन नहीं लगानेवाले, मौन धारण करनेवाले, पवित्र एवं उद्देश्यन्य श्रोता ही पुण्यके भागी होते हैं ॥ ३६-३८ ॥

जो नाराधम भक्तिरहित होकर इस पुण्यमयी कथाको सुनते हैं, उन्हें श्रवणका कोई फल नहीं होता और वे जन्म-जन्मान्तरमें क्लेश भोगते ही रहते हैं। यथाशक्ति उपचारोंसे इस पुराणकी पूजा किये बिना जो मूढ़जन इस कथाको सुनते हैं, वे अपवित्र और दरिद्र होते हैं ॥ ३९-४० ॥

कथा कहे जाते समय बीचमें ही जो लोग उठकर अन्यत्र चले जाते हैं, जन्मान्तरमें उनकी स्त्री आदि सम्पत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। जो पुरुष सिरपर पगड़ी आदि धारण करके इस कथाका श्रवण करते हैं, उनके पापी और कुलकलंकी पुत्र उत्पन्न होते हैं ॥ ४१-४२ ॥

जो पुरुष पान चबाते हुए इस कथाको सुनते हैं, उन्हें नरकमें यमदूत उनकी ही विष्णा खिलाते हैं। जो लोग ऊँचे आसनपर बैठकर इस कथाका श्रवण करते हैं, वे समस्त नरकोंको भोगकर काक्षयोनिमें जन्म लेते हैं ॥ ४३-४४ ॥

जो लोग वीरासन आदिसे बैठकर इस शुभ कथाको सुनते हैं, वे अनेकों नरकोंको भोगकर विषवृक्षका जन्म पाते हैं। कथा सुनानेवाले पौराणिकों अच्छी प्रकार प्रणाम किये बिना जो लोग कथा सुनते हैं, वे सभी नरकोंको भोगकर अर्जुनवृक्ष बनते हैं। रोगयुक्त न होनेपर भी जो लोग लेटकर यह कथा सुनते हैं, वे सभी नरकोंको भोगकर अन्तमें अजगर आदि योनियोंमें जन्म लेते हैं। वक्ताके समान ऊँचाईवाले आसनपर बैठकर जो इस कथाका श्रवण करते हैं, उन नारकीय लोगोंको गुरुशब्द्यापर शयन करने-जैसा पाप लगता है ॥ ४५-४६ ॥

जो इस पवित्र कथा तथा वक्ताकी निन्दा करते हैं, वे सौ जन्मोंतक दुःख भोगकर कुत्तेका जन्म पाते हैं। कथा

होते समय बीचमें जो गन्दी बातें बोलते हैं, वे घोर नरक भोगनेके बाद गधेका जन्म पाते हैं। जो कभी भी इस परम पवित्र कथाका श्रवण नहीं करते, वे घोर नरक भोगनेके पश्चात् जंगली सूअरका जन्म लेते हैं। जो दुष्ट कथाके बीचमें विष्णु डालते हैं, वे करोड़ों वर्षोंतक नरकयातनाओंके भोगकर गाँवके सूअरका जन्म पाते हैं॥ ४९—५२॥

इसका विचार करके शुद्ध और प्रेमपूर्ण चित्तसे बुद्धिमान् श्रोताओंके वक्ताके प्रति भक्तिभाव रखकर कथाश्रवणका प्रयत्न करना चाहिये॥ ५३॥

सबसे पहले कथाके विष्णोंका नाश करनेहेतु गणेशजीकी पूजा करनी चाहिये। अपने नित्यकर्मको संक्षेपमें सम्पन्न करके प्रायश्चित्त करना चाहिये। नवग्रह और सर्वतोभद्र देवताओंका पूजन करके शिवपूजाकी बतायी गयी विधिसे शिवपुराणकी पुस्तकका अर्चन करना चाहिये॥ ५४—५५॥

पूजनके अन्तमें विनम्र होकर बड़ी भक्तिके साथ दोनों हाथ जोड़कर साक्षात् शिवस्वरूपिणी पुस्तककी इस प्रकार स्तुति करनी चाहिये—श्रीशिवपुराणके रूपमें आप प्रत्यक्ष सदाशिव हैं; हमने कथा सुननेके लिये आपको अंगीकार किया है। आप हमपर प्रसन्न हों। मेरा जो

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणके अन्तर्गत शिवपुराणमहात्म्यमें श्रवणविधिवर्णन नामक छठा अध्याय पूर्ण हुआ॥ ६॥

मनोवाञ्छित हो, उसे आप कृपापूर्वक सम्पन्न करें। मेरा यह कथाश्रवण निर्विघ्नरूपसे सुसम्पन्न हो। कर्मरूपी ग्राहसे ग्रस्त शरीरवाले मुझ दीनका आप संसारसागरसे उद्धार कीजिये। हे शंकर! मैं आपका दास हूँ॥ ५६—५९॥

इस प्रकार साक्षात् शिवस्वरूप इस शिवपुराणकी दीनतापूर्वक स्तुति करके वक्ताकी पूजा आरम्भ करनी चाहिये। शिवपूजाकी बतायी गयी विधिसे पृष्ठ, वस्त्र, अलंकार, धूप-दीपादिसे वक्ताकी पूजा करे। तदनन्तर शुद्धचित्तसे उनके सामने नियम ग्रहण करे और कथासमाप्तिपर्यन्त यथाशक्ति उसका प्रयत्नपूर्वक पालन करे॥ ६०—६२॥

[तत्पश्चात् कथावाचक व्यासकी प्रार्थना करे—] हे व्यासजीके समान ज्ञानीश्रेष्ठ, शिवशास्त्रके मर्मज्ञ ब्राह्मणदेवता! आप इस कथाके प्रकाशसे मेरे अज्ञानान्धकारको दूर करें। भक्तिपूर्वक पाँच अथवा एक ब्राह्मणका वरण करे और उनके द्वारा शिवपंचाश्वर मन्त्र (नमः शिवाय)–का जप कराये॥ ६३—६४॥

हे मुने! इस प्रकार मैंने भक्त श्रोताओंद्वारा भक्तिपूर्वक कथाश्रवणकी उत्तम विधि आपको बता दी; अब आप और क्या सुनना चाहते हैं?॥ ६५॥

सातवाँ अध्याय

श्रोताओंके पालन करनेयोग्य नियमोंका वर्णन

शौनकजी बोले—हे शिवभक्तों श्रेष्ठ महाबुद्धिमान् सूतजी! आप धन्य हैं, जो कि आपने यह अद्भुत एवं कल्याणकारिणी कथा हमें सुनायी। हे मुने! शिवपुराणकी कथा सुननेके लिये ब्रत धारण करनेवाले लोगोंको किन नियमोंका पालन करना चाहिये—यह भी कृपापूर्वक सबके कल्याणकी दृष्टिसे बताइये॥ १—२॥

सूतजी बोले—हे शौनक! अब शिवपुराण सुननेका ब्रत लेनेवाले पुरुषोंके लिये जो नियम हैं, उन्हें भक्तिपूर्वक सुनिये। नियमपूर्वक इस श्रेष्ठ कथाको सुननेसे बिना किसी विष्णु-बाधाके उत्तम फलकी प्राप्ति होती है॥ ३॥

दीक्षासे रहित लोगोंका कथाश्रवणमें अधिकार नहीं है। अतः मुने! कथा सुननेकी इच्छावाले सब लोगोंको पहले वक्तासे दीक्षा ग्रहण करनी चाहिये। कथाप्रतीको ब्रह्मचर्यसे रहना, भूमिपर सोना, पत्तलमें खाना और प्रतिदिन कथा समाप्त होनेपर ही अन्न ग्रहण करना चाहिये॥ ४—५॥

जिसमें शक्ति हो, वह पुराणकी समाप्तितक उपवास करके शुद्धतापूर्वक भक्तिभावसे उत्तम शिवपुराणको सुने। घृत अथवा दुध पीकर सुखपूर्वक कथाश्रवण करे अथवा फलाहार करके अथवा एक ही समय भोजन करके इसे सुनना चाहिये। इस कथाका ब्रत लेनेवाले

पुरुषको प्रतिदिन एक ही बार हविष्यान भोजन करना चाहिये। जिस प्रकारसे कथाश्रवणका नियम सुखपूर्वक पालित हो सके, वैसे ही करना चाहिये ॥ ६—८ ॥

कथाश्रवणमें विज्ञ उत्पन्न करनेवाले उपवासकी तुलनामें तो मैं कथाश्रवणमें शक्ति प्रदान करनेवाले भोजनको ही अच्छा समझता हूँ ॥ ९ ॥

गरिष्ठ अन्, दाल, जला अन्, सेम, मसूर, भावदूषित तथा बासी अनको खाकर कथा-ब्रती पुरुष कभी कथाको न सुने ॥ १० ॥

कथाद्रतीको बैंगन, तरबूज, चिरचिंडा, मूली, कोहड़ा, प्याज, नारियलका मूल तथा अन्य कन्द-मूलका त्याग करना चाहिये ॥ ११ ॥

जिसने कथाका ब्रत ले रखा हो, वह पुरुष प्याज, लहसुन, हींग, गाजर, मादक वस्तु तथा आमिष कही जानेवाली वस्तुओंको त्याग दे। कथाका ब्रत लेनेवाला जो पुरुष हो, उसे काम, क्रोध आदि छः विकारों, ब्राह्मणोंकी निन्दा तथा पतिव्रता और साधु-संतोंकी निन्दाका त्याग कर देना चाहिये ॥ १२—१३ ॥

कथाश्रवणका ब्रत धारण करनेवाला व्यक्ति रजस्वला स्त्रीको न देखे, परित मनुष्योंको कथाकी बात न सुनाये, ब्राह्मणोंसे द्वेष रखनेवालों और वेदवहिष्कृत मनुष्योंके साथ सम्भाषण न करे ॥ १४ ॥

कथाक्रती पुरुष प्रतिदिन सत्य, शौच, दया, मौन, सरलता, विनय तथा मनकी उदारता—इन सद्गुणोंको सदा अपनाये रहे। श्रोता निष्काम हो या सकाम, वह नियमपूर्वक कथा सुने। सकाम पुरुष अपनी अभीष्ट कामनाको प्राप्त करता है और निष्काम पुरुष मोक्ष पा लेता है। दरिद्र, क्षयका रोगी, पापी, भाग्यहीन तथा सन्तानरहित पुरुष भी इस उत्तम कथाको सुने ॥ १५—१७ ॥

काकवन्स्या आदि जो सात प्रकारकी दुष्टा स्त्रियाँ हैं तथा जिस स्त्रीका गर्भ गिर जाता हो—इन सभीको शिवपुराणकी उत्तम कथा सुननी चाहिये। हे मुने! स्त्री हो या पुरुष—सबको यत्पूर्वक विधि-विधानसे शिवपुराणकी उत्तम कथा सुननी चाहिये ॥ १८—१९ ॥

इस शिवपुराणके कथापारायणके दिनोंको अत्यन्त

उत्तम और करोड़ों यज्ञोंके समान पवित्र मानना चाहिये। इन श्रेष्ठ दिनोंमें विधिपूर्वक जो थोड़ी-सी भी वस्तु दान की जाती है, उसका अक्षय फल मिलता है ॥ २०—२१ ॥

इस प्रकार ब्रतधारण करके इस परम श्रेष्ठ कथाका श्रवण करके आनन्दपूर्वक श्रीमान् पुरुषोंको इसका उद्यापन करना चाहिये। इसके उद्यापनकी विधि शिवचतुर्दशीके उद्यापनके समान है। अतः यहाँ बताये गये फलकी आकांक्षावाले धनाद्य लोगोंको उसी प्रकारसे उद्यापन करना चाहिये। अल्पवित्तवाले भक्तोंके लिये प्रायः उद्यापनकी आवश्यकता नहीं है; वे तो कथाश्रवणमात्रसे पवित्र हो जाते हैं। शिवजीके निष्काम भक्त तो शिवस्वरूप ही होते हैं ॥ २०—२४ ॥

हे महर्षे! इस प्रकार शिवपुराणकी कथाके पाठ एवं श्रवण-सम्बन्धी यज्ञोत्सवकी समाप्ति होनेपर श्रोताओंको भक्ति एवं प्रयत्नपूर्वक भगवान् शिवकी पूजाकी भाँति पुराण-पुस्तककी भी पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर विधिपूर्वक वक्ताका भी पूजन करना चाहिये। पुस्तकको आच्छादित करनेके लिये नवीन एवं सुन्दर बस्ता बनाये और उसे बांधनेके लिये ढूढ़ एवं दिव्य सूत्र लगाये; फिर उसका विधिवत् पूजन करे ॥ २५—२७ ॥

पुराणके लिये जो लोग नया वस्त्र और सूत्र देते हैं, वे जन्म-जन्मान्तरमें भोग और ज्ञानसे सम्पन्न होते हैं। कथावाचकको अनेक प्रकारके बहुमूल्य पदार्थ देने चाहिये और उत्तम वस्त्र, आभूषण और सुन्दर पात्र आदि विशेष रूपसे देने चाहिये। पुराणके आसनरूपमें जो लोग कम्बल, मृगचर्म, वस्त्र, चौकी, तख्ता आदि प्रदान करते हैं, वे स्वर्ग प्राप्त करके यथेच्छ सुखोंका उपभोगकर पुनः कल्पर्घन्न ब्रह्मलोकमें रहकर अनन्तमें शिवलोक प्राप्त करते हैं ॥ २८—३१ ॥

मुनिश्रेष्ठ! इस प्रकार महान् उत्सवके साथ पुस्तक और वक्ताकी विधिवत् पूजा करके वक्ताकी सहायताके लिये स्थापित किये गये पण्डितका भी उसीके अनुसार उससे कुछ ही कम धन आदिके द्वारा सत्कार करे। वहाँ आये हुए ब्राह्मणोंको अन्-धन आदिका दान करे। साथ ही गीत, वाय और नृत्य आदिके द्वारा महान् उत्सव करे ॥ ३२—३४ ॥

हे मुने ! यदि श्रोता विरक्त हो तो उसके लिये कथा-समाप्तिके दिन विशेषरूपसे उस गीतार्का पाठ करना चाहिये, जिसे श्रीगमचन्द्रजीके प्रति भगवान् शिवने कहा था ॥ ३५ ॥

यदि श्रोता गृहस्थ हो तो उस बुद्धिमान्को उस श्रवण-कर्मकी शान्तिके लिये शुद्ध हविष्यके द्वारा होम करना चाहिये। हे मुने ! रुद्रसंहिताके प्रत्येक श्लोकद्वारा होम करे अथवा गायत्री-मन्त्रसे होम करना चाहिये; क्योंकि वास्तवमें यह पुराण गायत्रीमय ही है। अथवा शिवपंचाक्षर मूलमन्त्रसे हवन करना उचित है। होम करनेकी शक्ति न हो तो विद्वान् पुरुष यथाशक्ति हवनीय हविष्यका ब्राह्मणको दान करे ॥ ३६-३८ ॥

न्यूनतिरक्ततारूप दोषोंकी शान्तिके लिये भक्तिपूर्वक शिवसहस्रनामका पाठ अथवा श्रवण करे। इससे सब कुछ सफल होता है, इसमें संशय नहीं है; क्योंकि तीनों लोकोंमें उससे बढ़कर कोई वस्तु नहीं है ॥ ३९-४० ॥

कथाश्रवणसम्बन्धी ब्रतकी पूर्णताकी सिद्धिके लिये ग्राहणको मधुमिश्रित खीर भोजन कराये और उन्हें दक्षिणा दे ॥ ४१ ॥

मुने ! यदि शक्ति हो तो तीन पल (बारह तोला) सोनेका एक सुन्दर सिंहासन बनवाये और उसपर उत्तम अक्षरोंमें लिखी अथवा लिखायी हुई शिवपुराणकी मुस्तक विधिपूर्वक स्थापित करे। तत्पश्चात् पुरुष आवाहन आदि विधि उपचारोंसे उसकी पूजा करके दक्षिणा चढ़ाये। तदनन्तर जितेन्द्रिय आचार्यका वस्त्र, आभूषण

॥ इस प्रकार श्रीस्कन्दमहापुराणमें सन्तुष्टमार्गसंहिताके अन्तर्गत श्रीशिवपुराणके श्रवणत्रियोंके विधि-नियेत्र और ग्रन्थ तथा वकाके पूजनका वर्णन नामक सातवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ७ ॥

॥ श्रीशिवमहापुराणमाहात्म्य पूर्ण हुआ ॥

१. पश्चपुराणोक्त शिवगीता ।

२. ते जन्मभाजः खलु जीवलोके ये वै सदा ध्यायन्ति विश्वनाथम् । वाणी गुणान् स्वौति कथां शृणौति श्रोत्रद्वयं ते भवमुत्तरन्ति ॥

३. सकलगुणभिर्देवित्यप्यस्तरूपं जगति च बहिरन्तर्भासमानं महिना ।

(शिवपुराणमाहात्म्य ७।४९)

मनसि च बहिरन्तर्वास्यन्तर्वृतिरूपं परमशिवमनन्तानन्दसान्द्रं प्रपञ्चे ॥ (शिवपुराणमाहात्म्य ७।५०)

एवं गन्ध आदिसे पूजन करके उत्तम बुद्धिवाला श्रोता भगवान् शिवके सन्तोषके लिये दक्षिणासहित वह पुस्तक उन्हें समर्पित कर दे ॥ ४२-४४ ॥

हे शैनक ! इस पुराणके उस दानके प्रभावसे भगवान् शिवका अनुग्रह पाकर पुरुष भवबन्धनसे मुक्त हो जाता है। इस तरह विधि-विधानका पालन करनेपर श्रीसम्पन्न शिवपुराण सम्पूर्ण फलको देनेवाला तथा भोग और मोक्षका दाता होता है ॥ ४५-४६ ॥

हे मुने ! मैंने आपको शिवपुराणका यह सारा माहात्म्य, जो सम्पूर्ण अभिष्टको देनेवाला है, बता दिया। अब और क्या सुनना चाहते हैं ? श्रीसम्पन्न शिवपुराण समस्त पुराणोंका तिलकस्वरूप माना गया है। यह भगवान् शिवको अत्यन्त प्रिय, रमणीय तथा भवरोगका निवारण करनेवाला है ॥ ४७-४८ ॥

जो सदा भगवान् विश्वनाथका ध्यान करते हैं, जिनकी वाणी शिवके गुणोंकी स्तुति करती है और जिनके दोनों कान उनकी कथा सुनते हैं, इस जीव-जगत्‌में उन्होंका जन्म लेना सफल है, वे निश्चय ही संसारसागरसे पार हो जाते हैं ॥ ४९ ॥

भिन्न-भिन्न प्रकारके समस्त गुण जिनके सच्चिदानन्दमय स्वरूपका कभी स्पर्श नहीं करते, जो अपनी महिमासे जगत्के बाहर और भीतर वाणी एवं मनोवृत्तिरूपमें प्रकाशित होते हैं, उन अनन्त आनन्दघनरूप परम शिवकी मैं शरण लेता हूँ ॥ ५० ॥

श्रीशिवमहापुराण

प्रथम विद्येश्वरसंहिता

पहला अध्याय

प्रयागमें सूतजीसे मुनियोंका शीघ्र पापनाश करनेवाले साधनके विषयमें प्रश्न

आद्यन्तमङ्गलमजातसमानभाव-

मार्यं तमीशमजरामरमात्मदेवम् ।

पञ्चाननं प्रबलपञ्चविनोदशीलं

सम्भावये मनसि शङ्करमन्विकेशम् ॥

जो आदि और अन्तमें [तथा मध्यमें भी] नित्य मङ्गलमय हैं, जिनकी समानता अथवा तुलना कर्ही भी नहीं है, जो आत्माके स्वरूपको प्रकाशित करनेवाले देवता (परमात्मा) हैं, जिनके पाँच मुख हैं और जो खेल-ही-खेलमें—अनायास जगत्की रचना, पालन, संहार, अनुग्रह एवं तिरोभावरूप—पाँच प्रबल कर्म करते रहते हैं, उन सर्वश्रेष्ठ अजर-अमर ईश्वर अन्विकापति भगवान् शंकरका मैं मन-ही-मन चिन्तन करता हूँ।

व्यासजी बोले—जो धर्मका महान् क्षेत्र है, जहाँ गंगा-यमुनाका संगम हुआ है, जो ब्रह्मलोकका मार्ग है, उस परम पुण्यमय प्रयागमें सत्यव्रतमें तत्पर रहनेवाले महातेजस्वी महाभाग महात्मा मुनियोंने एक विशाल ज्ञानयज्ञका आयोजन किया ॥ १-२ ॥

उस ज्ञानयज्ञका समाचार सुनकर पौराणिकशिरोमणि व्यासशिष्य महामुनि सूतजी वहाँ मुनियोंका दर्शन करनेके लिये आये ॥ ३ ॥

सूतजीको आते देखकर वे सब मुनि उस समय हर्षसे खिल रठे और अत्यन्त प्रसन्नचित्तसे उन्होंने उनका विधिवत् स्वागत-सत्कार किया ॥ ४ ॥

तत्पश्चात् उन प्रसन्न महात्माओंने उनकी विधिवत् सुति करके विनयपूर्वक हाथ जोड़कर उनसे इस प्रकार

कहा— ॥ ५ ॥

हे सर्वज्ञ विद्वान् रोमहर्षणजी! आपका भावय बड़ा भारी है, इसीसे आपने व्यासजीसे यथार्थरूपमें सम्पूर्ण पुराण-विद्या प्राप्त की, इसलिये आप आश्चर्यस्वरूप कथाओंके घण्डाल हैं—ठीक उसी तरह, जैसे रत्नाकर समुद्र बड़े-बड़े सारभूत रत्नोंका आगार है ॥ ६-७ ॥

तीनों लोकोंमें भूत, वर्तमान और भविष्यकी जो बात है तथा अन्य भी जो कोई वस्तु है, वह आपसे अज्ञात नहीं है ॥ ८ ॥

आप हमारे सौभाग्यसे इस यज्ञका दर्शन करनेके लिये यहाँ आ गये हैं और इसी व्याजसे हमारा कुछ कल्याण करनेवाले हैं; क्योंकि आपका आगमन निरर्थक नहीं हो सकता ॥ ९ ॥

हमने पहले भी आपसे शुभाशुभ-तत्त्वका पूरा-पूरा वर्णन सुना है, किंतु उससे तुप्ति नहीं होती, हमें उसे सुननेकी बार-बार इच्छा होती है ॥ १० ॥

उत्तम बुद्धिवाले हैं सूतजी! इस समय हमें एक ही बात सुननी है; यदि आपका अनुग्रह हो तो गोपनीय होनेपर भी आप उस विषयका वर्णन करें ॥ ११ ॥

घोर कलियुग आनेपर मनुष्य पुण्यकर्मसे दूर रहेंगे, दुरचारमें फैस जायेंगे, सब-के-सब सत्यभाषणसे विमुख हो जायेंगे, दूसरोंकी निन्दामें तत्पर होंगे। पराये धनको हड्डप लेनेकी इच्छा करेंगे, उनका मन परायी स्थियोंमें आसक होगा तथा वे दूसरे प्राणियोंकी हिंसा किया करेंगे। वे अपने शरीरको ही आत्मा समझेंगे। वे मूढ़, नास्तिक तथा

पशु-बुद्धि रखनेवाले होंगे, माता-पितासे द्वेष रखेंगे तथा वे कामवश स्त्रियोंकी सेवामें लगे रहेंगे ॥ १२—१४ ॥

ब्राह्मण लोभरूपी ग्रहके ग्रास बन जायेंगे, वेद वेचकर जीविका चलायेंगे, धनका उपार्जन करनेके लिये ही विद्याका अभ्यास करेंगे, मदसे मोहित रहेंगे, अपनी जातिके कर्म छोड़ देंगे, प्रायः दूसरोंको ठगेंगे, तीनों कालकी सन्ध्योपासनासे दूर रहेंगे और ब्रह्मज्ञानसे शून्य होंगे । दयाहीन, अपनेको परिणत माननेवाले, अपने सदाचार-ब्रतसे रहित, कृपिकार्यमें तत्पर, क्रूर स्वभाववाले एवं दूषित विचारवाले होंगे ॥ १५—१७ ॥

समस्त क्षत्रिय भी अपने धर्मका त्याग करनेवाले, कुसंगी, पापी और व्यभिचारी होंगे ॥ १८ ॥

उनमें शौर्यका अभाव होगा, वे युद्धसे विरत अर्थात् रणमें प्रीति न होनेसे भागनेवाले होंगे । वे कुत्सित चौर्य-कर्मसे जीविका चलायेंगे, शूद्रोंके समान बरताव करेंगे और उनका चित्र कामका किंकर बना रहेगा ॥ १९ ॥

वे शस्त्रास्त्रविद्याको नहीं जाननेवाले, गौ और ब्राह्मणकी रक्षा न करनेवाले, शरणागतकी रक्षा न करनेवाले तथा सदा कामिनीको खोजनेमें तत्पर रहेंगे ॥ २० ॥

प्रजापालनरूपी सदाचारसे रहित, भोगमें तत्पर, प्रजाका संहार करनेवाले, दुष्ट और प्रसन्नतापूर्वक जीवहिंसा करनेवाले होंगे ॥ २१ ॥

वैश्य संस्कार-ध्रष्टु, स्वधर्मत्यागी, कुमारी, धनोपार्जनपरायण तथा नाप-तौलमें अपनी कुत्सित वृत्तिका परिचय देनेवाले होंगे ॥ २२ ॥

वे गुरु, देवता और द्विजातियोंके प्रति भक्तिशून्य, कुत्सित बुद्धिवाले, द्विजोंको भोजन न करनेवाले, प्रायः कृपणताके कारण मुट्ठी बाँधकर रखनेवाले, परायी स्त्रियोंके साथ कामरत, मलिन विचारवाले, लोभ और मोहसे भ्रमित चित्रवाले और वापी-कूप-तड़ग आदिके निर्माण तथा यज्ञादि सत्कर्मोंमें धर्मका त्याग करनेवाले होंगे ॥ २३—२४ ॥

इसी तरह कुछ शूद्र ब्राह्मणोंके आचारमें तत्पर होंगे, उनकी आकृति उज्ज्वल होगी अर्थात् वे अपना कर्म-धर्म छोड़कर उज्ज्वल वेश-भूषासे विभूषित हो

व्यर्थ घूमेंगे, वे मूढ़ होंगे और स्वभावतः ही अपने धर्मका त्याग करनेवाले होंगे ॥ २५ ॥

वे भौति-भौतिके तप करनेवाले होंगे, द्विजोंको अपमानित करेंगे, छोटे बच्चोंकी अल्पमृत्यु होनेके लिये आभिचारिक कर्म करेंगे, मन्त्रोंके उच्चारण करनेमें तत्पर रहेंगे, शालग्रामकी मूर्ति आदि पूजेंगे, होम करेंगे, किसी-न-किसीके प्रतिकूल विचार सदा करते रहेंगे, कुटिल स्वभाववाले होंगे और द्विजोंसे द्वेष-भाव रखने वाले होंगे ॥ २६—२७ ॥

वे यदि धनी हुए तो कुकर्ममें लग जायेंगे, यदि विद्वान् हुए तो विवाद करनेवाले होंगे, कथा और उपासना-धर्मोंके वक्ता होंगे और धर्मका लोप करनेवाले होंगे ॥ २८ ॥

वे सुन्दर गजाओंके समान वेष-भूषा धारण करनेवाले, दम्भी, दानमानी, अतिशय अभिमानी, विप्र आदिको अपना सेवक मानकर अपनेको स्वामी माननेवाले होंगे, वे अपने धर्मसे शून्य, मूढ़, वर्णसंकर, क्रूरबुद्धिवाले, महाभिमानी और सदा चारों वर्णोंके धर्मका लोप करनेवाले होंगे ॥ २९—३० ॥

वे अपनेको श्रेष्ठ कुलवाला मानकर चारों वर्णोंसे विपरीत व्यवहार करनेवाले, सभी वर्णोंको भ्रष्ट करनेवाले, मूढ़ और [अनुचित रूपसे] सत्कर्म करनेमें तत्पर होंगे ॥ ३१ ॥

कलियुगकी स्त्रियाँ प्रायः सदाचारसे भ्रष्ट होंगी, पतिका अपमान करनेवाली होंगी, सास-ससुरसे द्रोह करेंगी । किसीसे भय नहीं मानेंगी और मलिन भोजन करेंगी ॥ ३२ ॥

वे कुत्सित हाव-भावमें तत्पर होंगी, उनका शील-स्वभाव बहुत बुरा होगा । वे काम-विह्वल, परपतिसे रति करनेवाली और अपने पतिकी सेवासे सदा विमुख रहेंगी ॥ ३३ ॥

सन्तानें माता-पिताके प्रति श्रद्धारहित, दुष्ट स्वभाववाली, असत् विद्या पढ़नेवाली और सदा रोगप्रस्त शरीरवाली होंगी ॥ ३४ ॥

हे सूतजी ! इस तरह जिनकी बुद्धि नष्ट हो गयी है और जिन्होंने अपने धर्मका त्याग कर दिया है, ऐसे

लोगोंको इहलोक और परलोकमें उत्तम गति कैसे प्राप्त होगी ? ॥ ३५ ॥

इसी चिन्तासे हमारा मन सदा व्याकुल रहता है; परोपकारके समान दूसरा कोई धर्म नहीं है, अतः जिस छोटे उपायसे इन सबके पापोंका तत्काल नाश हो जाय,

उसे इस समय कृपापूर्वक बताइये; क्योंकि आप समस्त सिद्धान्तोंके ज्ञाता हैं ॥ ३६-३७ ॥

व्यासजी बोले—उन भावितात्मा मुनियोंकी यह बात सुनकर सूतजी मन-ही-मन भगवान् शंकरका स्मरण करके उन मुनियोंसे इस प्रकार कहने लगे— ॥ ३८ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें मुनियोंके प्रश्नका वर्णन नामक पहला अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १ ॥

दूसरा अध्याय

शिवपुराणका माहात्म्य एवं परिचय

सूतजी बोले—हे साधु-महात्माओ ! आप सबने तीनों लोकोंका हित करनेवाली अच्छी बात पूछी है। मैं गुरुदेव व्यासजीका स्मरण करके आपलोगोंके स्नेहबश इस विषयका वर्णन करूँगा, आपलोग आदरपूर्वक सुनें ॥ १ ॥

सबसे उत्तम जो शिवपुराण है, वह वेदान्तका सार-सर्वस्व है तथा वक्ता और श्रेत्राक्षर समस्त पापगतियोंसे उद्धार करनेवाला है; [इतना ही नहीं] वह परलोकमें परमार्थ वस्तुको देनेवाला है। कलिकी कल्मषराशिका वह विनाशक है। उसमें भगवान् शिवके उत्तम यशका वर्णन है। हे ब्रह्मणो ! धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंको देनेवाला वह पुराण सदा ही अपने प्रभावसे विस्तारको प्राप्त हो रहा है ॥ २-३ ॥

हे विप्रवरो ! उस सर्वोत्तम शिवपुराणके अध्ययनमात्रसे वे कलियुगके पापासक जीव श्रेष्ठतम गतिको प्राप्त हो जायेंगे ॥ ४ ॥

अहो ! ब्रह्महत्या आदि महान् पाप तभीतक रहेंगे अर्थात् अपने फलको देनेमें समर्थ होंगे, जबतक जगत्में शिवपुराणका उदय नहीं होगा। [आशय यह है कि शिवपुराण सुननेके बाद अन्तःकरण शिवभक्तिपरायण होकर अतिशय स्वच्छ हो जायगा। अतः किसी भी पापकर्ममें मानवकी प्रवृत्ति ही नहीं होगी, तब ब्रह्महत्या आदि भयंकर पाप न होनेके कारण उस पापके फल-भोगकी सम्भावना ही नहीं है] ॥ ५ ॥

कलियुगके महान् उत्पात तभीतक निर्भय होकर

विचरेंगे, जबतक यहाँ जगत्में शिवपुराणका उदय नहीं होगा ॥ ६ ॥

सभी शास्त्र परस्पर तभीतक विवाद करेंगे, जबतक जगत्में शिवपुराणका उदय नहीं होगा [अर्थात् शिवपुराणके आ जानेपर किसी प्रकारका विवाद ही नहीं रह जायगा। सभी प्रकारसे भुक्ति-मुक्तिप्रदाता यही रहेगा] ॥ ७ ॥

अहो ! महान् व्यक्तियोंके लिये भी तभीतक शिवका स्वरूप दुर्बोध्य रहेगा, जबतक इस जगत्में शिवपुराणका उदय नहीं होगा ॥ ८ ॥

अहो ! क्रूर यमदूत तभीतक निर्भय होकर पृथ्वीपर घूमेंगे, जबतक जगत्में शिवपुराणका उदय नहीं होगा ॥ ९ ॥

सभी पुराण पृथ्वीपर गर्जन तभीतक करेंगे, जबतक शिवपुराणका जगत्में उदय नहीं होगा ॥ १० ॥

इस पृथ्वीपर तीर्थोंका विवाद तभीतक रहेगा, जबतक इस जगत्में शिवपुराणका उदय नहीं होगा। [आशय यह है कि मुक्ति-प्राप्त्यर्थ एवं पापके नाशके लिये मानव विभिन्न तीर्थोंका सेवन करेंगे, किन्तु शिवपुराणके आनेके बाद सभी लोग सभी पापोंके नाशके लिये शिवपुराणका ही सेवन करेंगे]। सभी मन्त्र पृथ्वीपर तभीतक आनन्दपूर्वक विवाद करेंगे, जबतक पृथ्वीपर शिवपुराणका उदय नहीं होगा ॥ ११-१२ ॥

सभी क्षेत्र तभीतक पृथ्वीपर विवाद करेंगे, जबतक पृथ्वीपर शिवपुराणका उदय नहीं होगा ॥ १३ ॥

सभी पीठ तभीतक पृथ्वीपर विवाद करेंगे, जबतक

पृथ्वीपर शिवपुराणका उदय नहीं होगा ॥ १४ ॥

सभी दान पृथ्वीपर तभीतक विवाद करेंगे, जबतक शिवपुराणका पृथ्वीपर उदय नहीं होगा ॥ १५ ॥

सभी देवगण तभीतक पृथ्वीपर विवाद करेंगे, जबतक शिवपुराणका पृथ्वीपर उदय नहीं होगा ॥ १६ ॥

सभी सिद्धान्त तभीतक पृथ्वीपर विवाद करेंगे, जबतक शिवपुराणका पृथ्वीपर उदय नहीं होगा ॥ १७ ॥

हे विप्रो ! हे श्रेष्ठ मुनिगण ! इस शिवपुराणके कीर्तन करने और सुनेसे जो-जो फल होते हैं, उन फलोंको मैं सम्पूर्ण रूपसे नहीं कह सकता हूँ, [अर्थात् शब्दोंके द्वारा इसके सभी फलोंको नहीं कहा जा सकता है] ॥ १८ ॥

हे निष्पाप मुनिगण ! तथापि शिवपुराणका कुछ माहात्म्य आप लोगोंसे कहता हूँ जो व्यासजीने पहले मुझसे कहा था, आपलोग चित्त लगाकर ध्यानपूर्वक सुनें ॥ १९ ॥

जो भक्तिपूर्वक इस शिवपुराणका एक श्लोक या आधा श्लोक भी पढ़ता है, वह उसी क्षण पापसे छुटकारा पा जाता है ॥ २० ॥

जो आलस्यरहित होकर प्रतिदिन भक्तिपूर्वक इस शिवपुराणका यथाशक्ति पाठ करता है, वह जीवन्मुक्त कहा जाता है ॥ २१ ॥

जो इस शिवपुराणकी सदा पूजा करता है, वह निःसन्देह प्रतिदिन अश्वमेधयज्ञका फल प्राप्त करता है ॥ २२ ॥

जो व्यक्ति साधारण पदकी प्राप्तिकी इच्छासे इस शिवपुराणको मुझसे अथवा अन्य किसीसे सुनता है, वह भी पातकोंसे मुक्त हो जाता है ॥ २३ ॥

जो इस शिवपुराणको समीपसे प्रणाम करता है, वह सभी देवोंको पूजाका फल प्राप्त करता है; इसमें संशय नहीं है ॥ २४ ॥

जो इस शिवपुराणको स्वयं लिखकर शिवभक्तोंको दान करता है, उसके पुण्यफलको सुनें ॥ २५ ॥

शास्त्रोंका अध्ययन करने और वेदोंका पाठ करनेसे जो दुर्लभ फल प्राप्त होता है, वह फल उसको प्राप्त होता है ॥ २६ ॥

जो चतुर्दशी तिथिके दिन उपवास करके इस शिवपुराणका शिवभक्तोंके समाजमें पाठ करता है—वह

श्रेष्ठ पुरुष है। वह व्यक्ति शिवपुराणके प्रत्येक अक्षरकी संख्याके अनुरूप गायत्रीके पुरश्चरणका फल प्राप्त करता है और इस लोकमें सभी अभीष्ट सुखोंको भोगकर अन्तमें मोक्ष प्राप्त करता है ॥ २७-२८ ॥

जो चतुर्दशीकी रातमें उपवासपूर्वक जागरण करके शिवपुराणका पाठ करता है या इसे सुनता है, उसका पुण्य-फल मैं कहता हूँ ॥ २९ ॥

कुरुक्षेत्र आदि सभी तीर्थोंमें, पूर्ण सूर्यग्रहणमें अपनी शक्तिके अनुसार विप्रोंको और मुख्य कथावाचकोंको धन देनेसे जो फल प्राप्त होता है, वही फल उस व्यक्तिको प्राप्त होता है, यह सत्य है, सत्य है; इसमें कोई संदेह नहीं है ॥ ३०-३१ ॥

जो व्यक्ति इस शिवपुराणका दिन-रात गान करता है, इन्द्र आदि देवगण उसकी आज्ञाकी प्रतीक्षा करते रहते हैं ॥ ३२ ॥

इस शिवपुराणका पाठ करनेवाला और सुननेवाला व्यक्ति जो-जो श्रेष्ठ कर्म करता है, वह कोटियुना हो जाता है [अर्थात् कोटियुना फल देता है] ॥ ३३ ॥

जो भलीभांति ध्यानपूर्वक उसमें भी श्रीरुद्रसंहिताका पाठ करता है, वह यदि ब्रह्मघाती भी हो तो तीन दिनोंमें पवित्रता हो जाता है ॥ ३४ ॥

जो भैरवकी मूर्तिके पास मैन धारणकर श्रीरुद्रसंहिताका प्रतिदिन तीन बार पाठ करता है, वह सभी कामनाओंको प्राप्त कर लेता है ॥ ३५ ॥

जो व्यक्ति वट और बिल्वबृक्षकी प्रदक्षिणा करते हुए उस रुद्रसंहिताका पाठ करता है, वह ब्रह्महत्याके दोषसे भी छुटकारा पा जाता है ॥ ३६ ॥

प्रणवके अर्थको प्रकाशित करनेवाली ब्रह्मरूपिणी साक्षात् कैलाससंहिता रुद्रसंहितासे भी श्रेष्ठ कही गयी है ॥ ३७ ॥

हे द्विजो ! कैलाससंहिताका सम्पूर्ण माहात्म्य तो शंकरजी ही जानते हैं, उससे आधा माहात्म्य व्यासजी जानते हैं और उसका भी आधा मैं जानता हूँ ॥ ३८ ॥

उसके सम्पूर्ण माहात्म्यका वर्णन तो मैं नहीं कर सकता, कुछ ही अंश कहूँगा, जिसको जानकर उसी

क्षण चित्तकी शुद्धि प्राप्त हो जायगी ॥ ३९ ॥

हे द्विजो ! लोकमें ढूँढ़नेपर भी मैंने ऐसे किसी पापको नहीं देखा, जिसे वह रुद्रसंहिता नष्ट न कर सके ॥ ४० ॥

उपनिषद्‌रूपी सागरका मन्थन करके शिवने आनन्दपूर्वक इस रुद्रसंहितारूपी अमृतको उत्पन्न किया और कुमार कार्तिकेयको समर्पित किया; जिसे पीकर मानव अमर हो जाता है ॥ ४१ ॥

ब्रह्महत्या आदि पापोंकी निष्कृति करनेके लिये तत्पर मनुष्य महीने रुद्रसंहिताका पाठ करके उन पापोंसे मुक्त हो जाता है ॥ ४२ ॥

दुष्टतिग्रह, दुर्भोज्य, दुरालापसे जो पाप होता है; वह इस रौद्रीसंहिताका एक बार कीर्तन करनेसे नष्ट हो जाता है ॥ ४३ ॥

जो व्यक्ति शिवालयमें अथवा बेलके बनमें इस संहिताका पाठ करता है, वह उससे जो फल प्राप्त करता है, उसका वर्णन वाणीसे नहीं किया जा सकता ॥ ४४ ॥

जो व्यक्ति श्रद्धापूर्वक इस संहिताका पाठ करते हुए श्राद्धके समय ब्राह्मणोंको भोजन करता है, उसके सभी पितर शम्भुके परम पदको प्राप्त करते हैं ॥ ४५ ॥

चतुर्दशीके दिन निराहार रहकर जो बेलके वृक्षके नीचे इस संहिताका पाठ करता है, वह साक्षात् शिव होकर सभी देवोंसे पूजित होता है ॥ ४६ ॥

उसमें अन्य संहिताएँ सभी कामनाओंके फलको पूर्ण करनेवाली हैं, किंतु लोला और विज्ञानसे परिपूर्ण इन दोनों संहिताओंको विशिष्ट समझना चाहिये ॥ ४७ ॥

इस शिवपुराणको वेदके तुल्य माना गया है। इस वेदकल्प पुराणका सबसे पहले भगवान् शिवने ही प्रणयन किया था ॥ ४८ ॥

विद्येश्वरसंहिता, रुद्रसंहिता, विनायकसंहिता, उमासंहिता, मातृसंहिता, एकादशरुद्रसंहिता, कैलाससंहिता, शतरुद्रसंहिता, कोटिरुद्रसंहिता, सहस्रकोटिरुद्रसंहिता, वायवीयसंहिता तथा धर्मसंहिता—इस प्रकार इस पुराणके बारह भेद हैं ॥ ४९-५० ॥

ये बारहों संहिताएँ अत्यन्त पृथ्यमयी मानी गयी हैं। ब्राह्मणो ! अब मैं उनके श्लोकोंकी संख्या बता रहा हूँ।

आपलोग वह सब आदरपूर्वक सुनें। विद्येश्वरसंहितामें दस हजार श्लोक हैं। रुद्रसंहिता, विनायकसंहिता, उमासंहिता और मातृसंहिता—इनमेंसे प्रत्येकमें आठ-आठ हजार श्लोक हैं ॥ ५१-५२ ॥

हे ब्राह्मणो ! एकादशरुद्रसंहितामें तेरह हजार, कैलाससंहितामें छः हजार, शतरुद्रसंहितामें तीन हजार, कोटिरुद्रसंहितामें नौ हजार, सहस्रकोटिरुद्रसंहितामें ग्यारह हजार, वायवीयसंहितामें चार हजार तथा धर्मसंहितामें बारह हजार श्लोक हैं। इस प्रकार संख्याके अनुसार मूल शिवपुराणकी श्लोकसंख्या एक लाख है ॥ ५३-५५ ॥

परंतु व्यासजीने उसे चौबीस हजार श्लोकोंमें संक्षिप्त कर दिया है। पुराणोंकी क्रमसंख्याके विचारसे इस शिवपुराणका स्थान चौथा है; इसमें सात संहिताएँ हैं ॥ ५६ ॥

पूर्वकालमें भगवान् शिवने श्लोकसंख्याकी दृष्टिसे सौ करोड़ श्लोकोंका एक ही पुराणग्रन्थ बनाया था। सृष्टिके आदिमें निर्मित हुआ वह पुराणसाहित्य अत्यन्त विस्तृत था ॥ ५७ ॥

तत्पश्चात् द्वापर आदि युगोंमें हौपायन व्यास आदि महर्षियोंने जब पुराणका अठारह भागोंमें विभाजन कर दिया, उस समय सम्पूर्ण पुराणोंका संक्षिप्त स्वरूप केवल चार लाख श्लोकोंका रह गया ॥ ५८ ॥

श्लोकसंख्याके अनुसार यह शिवपुराण चौबीस हजार श्लोकोंवाला कहा गया है। यह वेदतुल्य पुराण सात संहिताओंमें विभाजित है ॥ ५९ ॥

इसकी पहली संहिताका नाम विद्येश्वरसंहिता है, दूसरी रुद्रसंहिता समझनी चाहिये, तीसरीका नाम शतरुद्रसंहिता, चौथीका कैलाससंहिता और पाँचवींका नाम उमासंहिता, छठीका कैलाससंहिता और सातवींका नाम वायवीयसंहिता है। इस प्रकार ये सात संहिताएँ मानी गयी हैं ॥ ६०-६१ ॥

इन सात संहिताओंसे युक्त दिव्य शिवपुराण वेदके तुल्य प्रामाणिक तथा सबसे उत्कृष्ट गति प्रदान करनेवाला है ॥ ६२ ॥

सात संहिताओंसे समन्वित इस सम्पूर्ण शिवपुराणको

जो आद्योपान्त आदरपूर्वक पढ़ता है, वह जीवन्मुक्त कहा जाता है ॥ ६३ ॥

वेद, स्मृति, पुराण, इतिहास तथा सैकड़ों आगम इस शिवपुराणकी अल्प कलाके समान भी नहीं हैं ॥ ६४ ॥

यह निर्मल शिवपुराण भगवान् शिवके द्वारा ही प्रतिपादित है। शैवशिरोमणि भगवान् व्यासने इसे संक्षेपकर संकलित किया है। यह समस्त जीवसमुदायके लिये उपकारक, त्रिविध तापोंका नाशक, तुलनारहित एवं सत्पुरुषोंको कल्याण प्रदान करनेवाला है ॥ ६५ ॥

इसमें वेदान्त-विज्ञानमय, प्रधान तथा निष्कपट। गति प्राप्त कर लेता है ॥ ६६ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्योश्वरसंहितामें मुनिप्रश्नोत्तर-वर्णन
नामक दूसरा अध्याय पूर्ण हुआ ॥ २ ॥

धर्मका प्रतिपादन किया गया है। यह पुराण ईर्ष्यारहित अन्तःकरणवाले विद्वानोंके लिये जाननेकी वस्तु है, इसमें श्रेष्ठ मन्त्रसमूहोंका संकलन है और यह धर्म, अर्थ तथा कामसे समन्वित है अर्थात्—इस त्रिवर्गकी प्राप्तिके साधनका भी इसमें वर्णन है ॥ ६७ ॥

यह उत्तम शिवपुराण समस्त पुराणोंमें श्रेष्ठ है। वेद-वेदान्तमें वेदारूपसे विलसित परम वस्तु—परमात्माका इसमें गान किया गया है। जो बड़े आदरसे इसे पढ़ता और सुनता है, वह भगवान् शिवका प्रिय होकर परम गति प्राप्त कर लेता है ॥ ६८ ॥

तीसरा अध्याय

साध्य-साधन आदिका विचार

व्यासजी बोले—सूतजीका यह वचन सुनकर वे सब महर्षि बोले—अब आप हमें वेदान्तके सार-सर्वस्वरूप अद्भुत शिवपुराणको सुनाइये ॥ १ ॥

मुनियोंका यह वचन सुनकर अतिशय प्रसन्न हो वे सूतजी शंकरजीका स्मरण करते हुए उन श्रेष्ठ मुनियोंसे कहने लगे ॥ २ ॥

सूतजी बोले—आप सब महर्षिगण रोग-शोकसे रहित कल्याणमय भगवान् शिवका स्मरण करके वेदके सारात्मकसे प्रकट पुराणप्रवर शिवपुराणको सुनिये। जिसमें भक्ति, ज्ञान और वैराग्य—इन तीनोंका प्रीतिपूर्वक गान किया गया है और वेदान्तवेद्य सद्गुरुका विशेषरूपसे वर्णन किया गया है ॥ ३—५ ॥

हे ऋषिगण! अब आपलोग वेदके सारभूत पुराणको सुनें। बहुत कालमें पुनः-पुनः पूर्वकल्प व्यतीत होनेपर इस वर्तमान कल्पमें जब सुष्टिकर्म आरम्भ हुआ था, उन दिनों छः कुलोंके महर्षि परस्पर वाद-विवाद करते हुए कहने लगे—‘अमुक वस्तु सबसे उत्कृष्ट है और अमुक नहीं है।’ उनके इस विवादने अत्यन्त महान् रूप धारण कर लिया। तब वे सब-के-सब अपनी शंकाके समाधानके

लिये सुष्टिकर्ता अविनाशी ब्रह्माजीके पास गये और हाथ जोड़कर विनयभरी वाणीमें बोले—[हे प्रभो!] आप सम्पूर्ण जगत्का धारण-पोषण करनेवाले हैं तथा समस्त कारणोंके भी कारण हैं; हम यह जानना चाहते हैं कि सम्पूर्ण तत्त्वोंसे परे परात्पर पुराणपूरुष कौन है? ॥ ६—९ १/२ ॥

ब्रह्माजी बोले—जहाँसे मनसहित वाणी उन्हें न पाकर लौट आती है तथा जिनसे ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और इन्द्र आदिसे युक्त यह सम्पूर्ण जगत् समस्त भूतों एवं इन्द्रियोंके साथ पहले प्रकट हुआ है, वे ही ये देव, महादेव सर्वज्ञ एवं सम्पूर्ण जगत्के स्वामी हैं। ये ही सबसे उत्कृष्ट हैं। उत्तम भक्तिसे ही इनका साक्षात्कार होता है, दूसरे किसी उपायसे कहीं इनका दर्शन नहीं होता। रुद्र, हरि, हर तथा अन्य देवेश्वर सदा उत्तम भक्तिभावसे उनका नित्य दर्शन करना चाहते हैं ॥ १०—१३ ॥

अधिक कहनेकी बया आवश्यकता, भगवान् शिवमें भक्ति होनेसे मनुष्य संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाता है। देवताओंके कृपाप्रसादसे ही उनमें भक्ति होती है और भक्तिसे देवताका कृपाप्रसाद प्राप्त होता है—ठीक उसी तरह, जैसे यहाँ अंकुरसे बीज और बीजसे अंकुर उत्पन्न

होता है। इसलिये हे द्विजो! आप लोग भगवान् शंकरका कृपाप्रसाद प्राप्त करनेके लिये भूतलपर जाकर वहाँ सहस्र वर्षोंतक चलनेवाले एक विशाल यज्ञका आयोजन करें॥ १४-१५ ॥

इन यज्ञपति भगवान् शिवकी ही कृपासे वेदोक्त विद्याके सारभूत साध्य-साधनका ज्ञान होता है॥ १६ ॥

मुनिगण बोले—हे भगवन्! परम साध्य क्या है और उसका परम साधन क्या है? उसका साधक कैसा होता है? ये सभी बातें यथार्थ रूपसे कहें॥ १७ ॥

ब्रह्माजी बोले—शिवपदकी प्राप्ति ही साध्य है, उनकी सेवा ही साधन है तथा उनके प्रसादसे जो नित्य-नैमित्तिक आदि फलोंकी ओरसे निःस्मृह होता है, वही साधक है॥ १८ ॥

वेदोक्त कर्मका अनुष्ठान करके उसके महान् फलको भगवान् शिवके चरणोंमें समर्पित कर देना ही परमेश्वरपदकी प्राप्ति है। वही सालोक्य आदिके क्रमसे प्राप्त होनेवाली मुक्ति है॥ १९ ॥

उन-उन पुरुषोंकी भक्तिके अनुसार उन सबको उत्कृष्ट फलकी प्राप्ति होती है। उस भक्तिके साधन अनेक प्रकारके हैं, जिनका प्रतिपादन साक्षात् महेश्वरने ही किया है॥ २० ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें साध्यसाधनविचार
नामक तीसरा अध्याय पूर्ण हुआ॥ ३ ॥

चौथा अध्याय

श्रवण, कीर्तन और मनन—इन तीन साधनोंकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन

मुनिगण बोले—हे ब्रह्म! मनन कैसा होता है, श्रवणका स्वरूप कैसा है और उनका कीर्तन कैसे किया जाता है, यथार्थ रूपमें आप वर्णन करें॥ १ ॥

ब्रह्माजी बोले—[हे मुनियो!] भगवान् शंकरकी पूजा, उनके नामोंका जप तथा उनके गुण, रूप, विलास और नामोंका युक्तिप्रायण चित्के द्वारा जो निरन्तर परिशोधन या चिन्नन होता है, उसीको मनन कहा गया है, वह महेश्वरकी कृपादृष्टिसे उपलब्ध होता है। वह

उसे संक्षिप्त करके मैं सारभूत साधनको बता रहा हूँ। कानसे भगवान्के नाम-गुण और लीलाओंका श्रवण, वाणीद्वारा उनका कीर्तन तथा मनके द्वारा उनका मनन—इन तीनोंको महान् साधन कहा गया है। [तात्पर्य यह कि] महेश्वरका श्रवण, कीर्तन और मनन करना चाहिये—यह श्रुतिका वाक्य हम सबके लिये प्रमाणभूत है। सम्पूर्ण मनोरथोंकी सिद्धिमें लगे हुए आपलोग इसी साधनसे परम साध्यको प्राप्त हों। लोग प्रत्यक्ष वस्तुको नेत्रसे देखकर उसमें प्रवृत्त होते हैं; परंतु जिस वस्तुका कहाँ भी प्रत्यक्ष दर्शन नहीं होता, उसे श्रवणेन्द्रियद्वारा जान-सुनकर मनुष्य उसकी प्राप्तिके लिये चेष्टा करता है॥ २१-२४॥

अतः पहला साधन श्रवण ही है। उसके द्वारा गुरुके मुखसे तत्त्वको सुनकर बुद्धिशाली विद्वान् पुरुष अन्य साधन—कीर्तन एवं मननकी सिद्धि करे॥ २५ ॥

क्रमशः मननपर्यन्त इस साधनकी अच्छी तरह साधना कर लेनेपर उसके द्वारा सालोक्य आदिके क्रमसे धीरे-धीरे भगवान् शिवका संयोग प्राप्त होता है॥ २६ ॥

पहले सारे अंगोंके रोग नष्ट हो जाते हैं। तत्पश्चात् सब प्रकारका लौकिक आनन्द भी विलीन हो जाता है। अभ्यासके ही समय यह साधन कष्टप्रद है, किंतु बादमें निरन्तर मंगल देनेवाला है॥ २७ ॥

समस्त श्रेष्ठ साधनोंमें प्रमुखतम है॥ २ ॥

शम्भुके प्रताप, गुण, रूप, विलास और नामको प्रकट करनेवाले संगीत, वेदवाक्य या भाषाके द्वारा अनुरागपूर्वक उनकी स्तुति ही मध्यम साधन है, जिसको कीर्तन शब्दसे कहा जाता है॥ ३ ॥

हे ज्ञानियो! स्त्रीक्रीडामें जैसे मनकी आसक्ति होती है, वैसे ही किसी कारणसे किसी स्थानमें शिवविषयक वाणियोंमें श्रवणेन्द्रियकी दृढ़तर आसक्ति ही जगत्में

श्रवणके नामसे प्रसिद्ध है ॥ ४ ॥

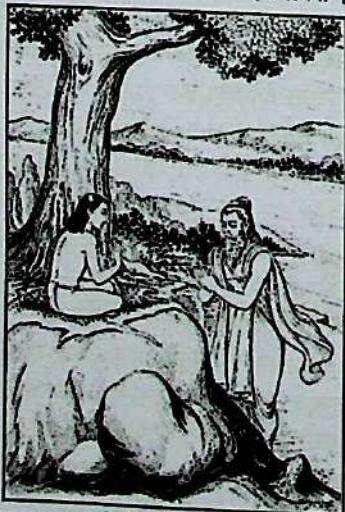
सर्वप्रथम सज्जनोंकी संगतिसे श्रवण सिद्ध होता है, बादमें शिवजीका कीर्तन दृढ़ होता है और अन्तमें सभी साधनोंसे श्रेष्ठ शंकरविषयक मनन उत्पन्न होता है, किंतु यह सब उनकी कृपादृष्टिसे ही सम्भव होता है ॥ ५ ॥

सूतजी बोले—मुनीश्वरो! इस साधनका माहात्म्य बतानेके प्रसंगमें मैं आपलोंगोंके लिये एक प्राचीन वृत्तान्तका वर्णन करूँगा, उसे ध्यान देकर आपलोग सुनें ॥ ६ ॥

पूर्व कालमें पराशर मुनिके पुत्र मेरे गुरु व्यासदेवजी सरस्वती नदीके सुन्दर तटपर तपस्या कर रहे थे ॥ ७ ॥

एक दिन सूर्यतुल्य तेजस्वी विमानसे यात्रा करते हुए भगवान् सनत्कुमार अकस्मात् वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने मेरे गुरुदेवको वहाँ देखा ॥ ८ ॥

वे ध्यानमें मग्न थे। उससे जगनेपर उन्होंने ब्रह्माके पुत्र सनत्कुमारजीको अपने सामने उपस्थित देखा। वे बड़े वेगसे उठे और उनके चरणोंमें प्रणाम करके मुनिने उन्हें अर्थ प्रदान करके देवताओंके बैठनेयोग्य आसन भी अपित किया। तब प्रसन्न हुए भगवान् सनत्कुमार विनीत भावसे खड़े हुए व्यासजीसे गम्भीर वाणीमें कहने लगे ॥ ९-१० ॥



सनत्कुमार बोले—हे मुने! आप सत्य सनातन भगवान् शंकरका हृदयसे ध्यान कीजिये, तब वे शिव

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहिताके साध्यसाधनखण्डमें चौथा अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ४ ॥

प्रत्यक्ष होकर आपकी सहायता करेंगे; आप यहाँ तप किसलिये कर रहे हैं? ॥ ११ ॥

इस प्रकार सनत्कुमारके कहनेपर मुनि व्यासने अपना आशय कहा—मैंने आपकी कृपासे वेदसम्मत धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी कथाको मानवसामाजिमें अनेक प्रकारसे प्रदर्शित किया है ॥ १२ ॥

इस प्रकार सर्वथा गुरुस्वरूप होनेपर भी मुझमें मुक्तिके साधन ज्ञानका उदय नहीं हुआ है—यह आश्चर्य ही है। मुक्तिका साधन न जाननेके कारण उसके लिये मैं तपस्या कर रहा हूँ ॥ १३-१४ ॥

हे विप्रेन्द्रो! इस प्रकार जब व्यासमुनिने भगवान् सनत्कुमारसे प्रार्थना की, तब वे समर्थ सनत्कुमारजी मुक्तिका निश्चित कारण बताने लगे ॥ १५ ॥

भगवान् शंकरका श्रवण, कीर्तन, मनन—ये तीनों महत्तर साधन कहे गये हैं। ये तीनों ही वेदसम्मत हैं ॥ १६ ॥

पूर्वकालमें मैं दूसरे-दूसरे साधनोंके सम्बन्धमें पड़कर घूमता-घामता मन्दराचलपर जा पहुँचा और वहाँ तपस्या करने लगा ॥ १७ ॥

तदनन्तर महेश्वर शिवकी आज्ञासे भगवान् नन्दिकेश्वर वहाँ आये। उनकी मुझपर बड़ी दया थी। वे सबके साक्षी तथा शिवगणोंके स्वामी भगवान् नन्दिकेश्वर मुझे न्योपूर्वक मुक्तिका उत्तम साधन बताते हुए बोले—‘भगवान् शंकरका श्रवण, कीर्तन और मनन—ये तीनों साधन वेदसम्मत हैं और मुक्तिके साक्षात् कारण हैं; यह बात स्वयं भगवान् शिवने मुझसे कही है। अतः हे ब्रह्मन्! आप श्रवणादि तीनों साधनोंका बार-बार अनुष्ठान करें ॥ १८-२० ॥

व्यासजीसे बार-बार ऐसा कहकर अनुगामियोंसहित ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार अपने विमानसे परम सुन्दर ब्रह्मधामको चले गये। इस प्रकार पूर्वकालके इस उत्तम वृत्तान्तका मैंने संक्षेपसे वर्णन किया है ॥ २१ ॥

ऋषिगण बोले—हे सूतजी! आपने श्रवण आदि तीनों साधनोंको मुक्तिका उपाय बताया है। जो मनुष्य श्रवण आदि तीनों साधनोंमें असमर्थ हो, वह किस उपायका अवलम्बन करके मुक्त हो सकता है और किस साधनभूत कर्मके द्वारा बिना यत्केही मोक्ष मिल सकता है? ॥ २२-२३ ॥

पाँचवाँ अध्याय

भगवान् शिवके लिंग एवं साकार विग्रहकी पूजाके रहस्य तथा महत्त्वका वर्णन

सूतजी बोले— हे शैनक! जो श्रवण, कीर्तन और मनन—इन तीनों साधनोंके अनुष्ठानमें समर्थ न हो, वह भगवान् शंकरके लिंग एवं मूर्तिकी स्थापनाकर नित्य उसकी पूजा करके संसारसागरसे पार हो सकता है ॥ १ ॥

छल न करते हुए अपनी शक्तिके अनुसार धनराशि ले जाय और उसे शिवलिंग अथवा शिवमूर्तिकी सेवाके लिये अर्पित कर दे, साथ ही निरन्तर उस लिंग एवं मूर्तिकी पूजा भी करे ॥ २ ॥

उसके लिये भक्तिभावसे मण्डप, गोपुर, तीर्थ, मठ एवं क्षेत्रकी स्थापना करे तथा उत्सव करे और वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप तथा मालापुआ आदि व्यंजनोंसे युक्त भौति-भौतिके धक्षय-भोज्य अन्न नैवेद्यके रूपमें समर्पित करे। छत्र, ध्वजा, व्यजन, चामर तथा अन्य अंगोंसहित राजोपचारकी भौति सब वस्तुएँ भगवान् शिवके लिंग एवं मूर्तिपर चढ़ाये। प्रदक्षिणा, नमस्कार तथा यथाशक्ति जप करे ॥ ३-५ ॥

आवाहनसे लेकर विसर्जनतक सारा कार्य प्रतिदिन भक्तिभावसे सम्पन्न करे। इस प्रकार शिवलिंग अथवा शिवमूर्तिमें भगवान् शंकरकी पूजा करनेवाला पुरुष श्रवण आदि साधनोंका अनुष्ठान न करे तो भी भगवान् शिवकी प्रसन्नतासे सिद्धि प्राप्त कर लेता है। पहलेके बहुतसे महात्मा पुरुष लिंग तथा शिवमूर्तिकी पूजा करनेमात्रसे भवत्वन्यनसे मुक्त हो चुके हैं ॥ ६-७ ॥

ऋषिगण बोले— मूर्तिमें ही सर्वत्र देवताओंकी पूजा होती है, परंतु भगवान् शिवकी पूजा सब जगह मूर्तिमें और लिंगमें भी क्यों की जाती है? ॥ ८ ॥

सूतजी बोले— हे मुनीश्वरो! आप लोगोंका यह प्रश्न तो बड़ा ही पवित्र और अत्यन्त अद्भुत है। इस विषयमें कहीं भी इसका यथार्थ प्रतिपादन नहीं कर सकता ॥ ९ ॥

इस विषयमें भगवान् शिवने जो कुछ कहा है और उसे मैंने गुरुजीके मुखसे जिस प्रकार सुना है, उसी तरह क्रमशः वर्णन करूँगा। एकमात्र भगवान् शिव ही ब्रह्मलूप

होनेके कारण निष्कल (निराकार) कहे गये हैं ॥ १० ॥

रूपवान् होनेके कारण उन्हें 'सकल' भी कहा गया है। इसलिये वे सकल और निष्कल दोनों हैं। शिवके निष्कल—निराकार होनेके कारण ही उनकी पूजाका आधारभूत लिंग भी निराकार ही प्राप्त हुआ है अर्थात् शिवलिंग शिवके निराकार स्वरूपका प्रतीक है ॥ ११ ॥

इसी तरह शिवके सकल या साकार होनेके कारण उनकी पूजाका आधारभूत विग्रह साकार प्राप्त होता है अर्थात् शिवका साकार विग्रह उनके साकार स्वरूपका प्रतीक होता है। सकल और अकल (समस्त अंग-आकारसंहित साकार और अंग-आकारसे सर्वथा रहित निराकार) -रूप होनेसे ही वे 'ब्रह्म' शब्दसे कहे जानेवाले परमात्मा हैं ॥ १२ ॥

यही कारण है कि सब लोग लिंग (निराकार) और मूर्ति (साकार)—दोनोंमें ही सदा भगवान् शिवकी पूजा करते हैं। शिवसे भिन्न जो देवता हैं, वे साक्षात् ब्रह्म नहीं हैं, इसलिये कहाँ भी उनके लिये निराकार लिंग नहीं उपलब्ध होता ॥ १३ ॥

अतः सुरेश्वर (इन्द्र, ब्रह्म) आदि देवगण भी निष्कल लिंगमें पूजित नहीं होते हैं, सभी देवगण ब्रह्म न होनेसे, अपितु सगुण जीव होनेके कारण केवल मूर्तिमें ही पूजे जाते हैं। शंकरके अतिरिक्त अन्य देवोंका जीवत्व और सदाशिवका ब्रह्मत्व वेदोंके सारभूत उपनिषदोंसे सिद्ध होता है। वहाँ प्रणव (ॐकार)-के तत्त्वरूपसे भगवान् शिवका ही प्रतिपादन किया गया है ॥ १४-१५ ॥

इसी प्रकार पूर्वमें मन्दराचल पर्वतपर ज्ञानवान् ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार मुनिने नन्दिकेश्वरसे प्रश्न किया था ॥ १६ ॥

सनत्कुमार बोले— [हे भगवान्!] शिवके अतिरिक्त उनके वशमें रहनेवाले जो अन्य देवता हैं, उन सबकी पूजाके लिये सर्वत्र प्रायः वेर (मूर्ति)-मात्र ही अधिक संख्यामें देखा और सुना जाता है। केवल भगवान् शिवकी ही पूजामें लिंग और वेर दोनोंका उपयोग

देखनेमें आता है। अतः हे कल्याणमय नन्दिकेश्वर! इस विषयमें जो तत्त्वकी बात हो, उसे मुझे इस प्रकार बताइये, जिससे अच्छी तरह समझमें आ जाय ॥ १७-१८ ३/२ ॥

नन्दिकेश्वर बोले—हे निष्पाप ब्रह्मकुमार! हम—जैसे लोगोंके द्वारा आपके इस प्रश्नका कोई उत्तर नहीं दिया जा सकता; ब्यांकि यह गोपनीय विषय है और लिंग साक्षात् ब्रह्मका प्रतीक है। इस विषयमें भगवान् शिवने जो कुछ बताया है, उसे मैं आप शिवभक्तके समक्ष कहता हूँ। भगवान् शिव ब्रह्मस्वरूप और निष्कल (निराकार) हैं; इसलिये उन्हींकी पूजामें निष्कल लिंगका उपयोग होता है। सम्पूर्ण वेदोंका यही मत है। वे ही सकल हैं। इस प्रकार वे निराकार तथा साकार दोनों हैं। भगवान् शंकर निष्कल-निराकार होते हुए भी कलाओंसे युक्त हैं, इसलिये उनकी साकार रूपमें प्रतिमापूजा भी लोकसम्मत है ॥ १९-२१ ३/२ ॥

शंकरके अतिरिक्त अन्य देवताओंमें जीवत्व तथा सगुणत्व होनेके कारण वेदके मतमें उनकी मूर्तिमात्रमें ही पूजा मान्य है। इसी प्रकार उन देवताओंके आविर्भावके समय उनका समग्र साकार रूप प्रकट होता है, जबकि भगवान् सदाशिवके दर्शनमें साकार और निराकार (ज्योतिरूप) दोनोंकी ही प्राप्ति होती है ॥ २२-२३ ३/२ ॥

सन्तकुमार बोले—हे महाभाग! आपने भगवान्

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें शिवलिंगकी महिमाका वर्णन
नामक पाँचवां अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ५ ॥

छठा अध्याय

ब्रह्मा और विष्णुके भयंकर युद्धको देखकर देवताओंका कैलास-शिखरपर गमन

नन्दिकेश्वर बोले—हे योगीन्द्र! प्राचीनकालमें किसी समय शेषशायी भगवान् विष्णु अपनी परासक्ति लक्ष्मीजी तथा अन्य पार्वदोसे विरे हुए शयन कर रहे थे ॥ १ ॥

उसी समय ब्रह्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजीने अपनी इच्छासे वहाँ आकर उन परम सुन्दर कमलनेत्र विष्णुसे पूछा—तुम कौन हो, जो मुझे आया देखकर भी उद्धत पुरुषके समान सो रहे हो? हे वत्स! उठो और यहाँ

शिव तथा दूसरे देवताओंके पूजनमें लिंग और वेरेके प्रचारका जो रहस्य विभागपूर्वक बताया है, वह यथार्थ है। इसलिये लिंग और वेरकी आदि उत्पत्तिका जो उत्तम वृत्तान्त है, उसीको मैं इस समय सुनना चाहता हूँ। हे योगीन्द्र! लिंगके प्राकट्यका रहस्य सूचित करनेवाला प्रसंग मुझे सुनाइये ॥ २४-२५ ३/२ ॥

नन्दिकेश्वर बोले—हे वत्स! आपके प्रति प्रीतिके कारण मैं यथार्थ रूपमें वर्णन करता हूँ, सुनिये। लोकविष्ण्यात् पूर्वकल्पके बहुत दिन व्यतीत हो जानेपर एक समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णु परस्पर लड़ने लगे ॥ २६-२७ ॥

उन दोनोंके अभिमानको मिटानेके लिये [त्रिगुणातीत] परमेश्वरने उनके मध्यमें निष्कल स्तम्भके रूपमें अपना स्वरूप प्रकट किया ॥ २८ ॥

जगत्का कल्याण करनेकी इच्छासे उस स्तम्भसे निराकार परमेश्वर शिवने अपने लिंग—चिह्नके कारण लिंगका आविर्भाव किया ॥ २९ ॥

उसी समयसे लोकमें परमेश्वर शंकरके निरुण लिंग और सगुण मूर्तिकी पूजा प्रचलित हुई ॥ ३० ॥

शिवके अतिरिक्त अन्य देवोंकी मूर्तिमात्रकी ही प्रकल्पना हुई। वे देव-प्रतिमाएँ पूजित हो नियत शुभ कल्याणको देनेवाली हुई और शिवका लिंग तथा उनकी प्रतिमा दोनों ही भोग और मोक्षको देनेवाली हुई ॥ ३१ ॥

अपने प्रभु—मुझे देखो। जो पुरुष अपने श्रेष्ठ गुरुजनको आया हुआ देखकर उद्धाके समान आचरण करता है, उस मूर्ख गुरुदोहीके लिये प्रायशिच्चतका विधान किया गया है ॥ २-४ ॥

[ब्रह्माके] इस वचनको सुनकर ओंधित होनेपर भी बाहरसे शान्त व्यवहार करते हुए भगवान् विष्णु बोले—हे वत्स! तुम्हारा कल्याण हो, तुम्हारा स्वागत है।

आओ, इस आसनपर बैठो। तुम्हारे मुखमण्डलसे व्यग्रता प्रदर्शित हो रही है और तुम्हारे नेत्र विपरीत भाव सूचित कर रहे हैं ॥ ५३/२ ॥

ब्रह्माजी बोले—हे वत्स! हे विष्णो! कालके प्रभावसे तुम्हें बहुत अधिमान हो गया है। हे वत्स! मैं जगत्का पितामह और तुम्हारा रक्षक हूँ ॥ ६३/२ ॥

विष्णु बोले—हे वत्स! यह जगत् मुझमें ही स्थित है, तुम केवल चौरके समान दूसरेकी सम्पत्तिको व्यर्थ अपनी मानते हो। तुम मेरे नाभिकमलसे उत्पन्न हो, अतः तुम मेरे पुत्र हो, तुम तो व्यर्थ बातें कह रहे हो ? ॥ ७३/२ ॥

नन्दिकेश्वर बोले—[हे मुने!] उस समय वे अजन्मा ब्रह्मा और विष्णु मोहवश 'मैं श्रेष्ठ हूँ, मैं स्वामी हूँ, तुम नहीं'—इस प्रकार बोलते-बोलते परस्पर एक-दूसरेको माननेकी इच्छासे युद्ध करनेके लिये उद्घत हो गये ॥ ८-९ ॥

हंस और गरुडपर आरूढ़ होकर वे दोनों बीर ब्रह्मा और विष्णु युद्ध करने लगे, तब ब्रह्मा और विष्णुके गण भी परस्पर युद्ध करने लगे ॥ १० ॥

उस समय सभी देवगण उस परम अद्भुत युद्धको देखनेकी इच्छासे विमानपर चढ़कर वहाँ पहुँच गये। [वहाँ आकर] आकाशमें अवस्थित हो पुष्टकी वृष्टि करते हुए वे युद्ध देखने लगे। गरुडवाहन भगवान् विष्णुने कृद्ध होकर ब्रह्माके वक्षःस्थलपर अनेक प्रकारके असंख्य दुःसह बाणों और अस्त्रोंसे प्रहर किया ॥ ११-१२१/२ ॥

तब विधाता भी कृद्ध होकर विष्णुके हृदयपर अनिनके समान बाण और अनेक प्रकारके अस्त्रोंको छोड़ने लगे। उस समय देवगण उन दोनोंका वह अद्भुत युद्ध देखकर अतिशय व्याकुल हो गये और ब्रह्मा तथा विष्णुकी प्रशंसा करने लगे ॥ १३-१४१/२ ॥

तत्पश्चात् युद्धमें तत्पर महाज्ञानी विष्णुने अतिशय क्रोधके साथ श्रान्त हो दीर्घ निःश्वास लेते हुए ब्रह्माको लक्ष्यकर भयंकर माहेश्वर अस्त्रका संधान किया। ब्रह्माने

भी अतिशय क्रोधमें आकर विष्णुके हृदयको लक्ष्यकर ब्रह्माण्डको कम्पित करते हुए भयंकर पाशुपत अस्त्रका प्रयोग किया। ब्रह्मा और विष्णुके सूर्यके समान हजारों मुखवाले, अत्यन्त उत्तर तथा प्रचण्ड आँधीके समान भयंकर दोनों अस्त्र आकाशमें प्रकट हो गये ॥ १५—१८ ॥

इस प्रकार ब्रह्मा और विष्णुका आपसमें भयंकर युद्ध होने लगा। हे तात ! उस युद्धको देखकर सभी देवगण राजविष्णवके समय ब्राह्मणोंके समान अतिशय दुखी और व्याकुल होकर परस्पर कहने लगे—जिसके द्वारा सृष्टि, स्थिति, प्रलय, तिरोभाव तथा अनुग्रह होता है और जिसकी कृपाके बिना इस भूमण्डलपर अपनी इच्छासे एक तृष्णका भी विनाश करनेमें कोई भी समर्थ नहीं है, उन त्रिशूलधारी ब्रह्मस्वरूप महेश्वरको नमस्कार है ॥ १९—२१ ॥

भयभीत देवतागण इस प्रकार सोचते हुए चन्द्रशेखर महेश्वर जहाँ विराजमान थे, उस शिवस्थान कैलास शिखरपर गये ॥ २२ ॥

शिवके उस प्रणवाकार स्थानको देखकर वे देवता प्रसन्न हुए और प्रणाम करके भवनमें प्रविष्ट हुए ॥ २३ ॥

उन्होंने वहाँ सभाके मध्यमें स्थित मण्डपमें देवी पार्वतीके साथ रत्नमय आसनपर विराजमान देवश्रेष्ठ शंकरका दर्शन किया। वे वाम चरणके कुपर दक्षिण चरण और उसके कुपर वाम करकमल रखे हुए थे, समस्त शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न थे और चारों ओर शिवगण उनकी सेवामें तत्पर थे, शिवके प्रति उत्तम भक्तिभाववाली कुशल रमणियाँ उनपर चँचर डुला रही थीं, वेद निरन्तर उनकी स्तुति कर रहे थे और वे अनुग्रहकी दृष्टिसे सबको देख रहे थे। हे वत्स! उन महेश्वर शिवको देखकर आनन्दाभ्युत्ते परिपूर्ण नैत्रोंवाले देवताओंने दूसे ही उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया ॥ २४—२७ ॥

भगवान् शंकरने उन देवोंको देखकर अपने गणोंसे उन्हें समीप बुलवाया और देवशिरोमणि महादेव उन देवताओंको आनन्दित करते हुए अर्थगम्भीर, मंगलमय तथा सुमधुर वचन कहने लगे ॥ २८ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहायुगणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें देवताओंकी कैलासवात्राका वर्णन
नामक छठा अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ६ ॥

सातवाँ अध्याय

भगवान् शंकरका ब्रह्मा और विष्णुके युद्धमें अग्निस्तम्भरूपमें प्राकट्य, स्तम्भके आदि और
अन्तकी जानकारीके लिये दोनोंका प्रस्थान

शिवजी बोले—हे पुत्रो ! आपकी कुशल तो है ?
मेरे अनुसासनमें जगत् तथा देवत्रेष्ठ अपने—अपने कार्योंमें
लगे तो हैं ? हे देवताओ ! ब्रह्मा और विष्णुके बीच
होनेवाले युद्धका वृत्तान्त तो मुझे पहलेसे ही जात था;
आपलोगोंने [यहाँ आनेका] परिश्रम करके उसे पुनः
बताया है। हे सनत्कुमार ! उमापति शंकरने इस प्रकार
मुसकराते हुए मधुर वाणीमें उन देवगणोंको सन्तुष्ट
किया ॥ १—३ ॥

इसके बाद महादेवजीने ब्रह्मा और विष्णुकी
युद्धस्थलीमें जानेके लिये अपने सैकड़ों गणोंको वहाँ
सभामें आज्ञा दी। तब महादेवजीके प्रयाणके लिये अनेक
प्रकारके बाजे बजने लगे और उनके गणाध्यक्ष भी अनेक
प्रकार से सज-धजकर वाहनोंपर सवार होकर जानेके
लिये तैयार हो गये ॥ ४—५ ॥

भगवान् उमापति पाँच मण्डलोंसे सुशोभित आगेसे
पीछेतक प्रणव (ॐ)-की आकृतिवाले सुन्दर रथपर
आरूढ़ हो गये। इस प्रकार पुत्रों और गणोंसहित प्रस्थान
किये हुए शिवजीके पीछे—पीछे इन्द्र आदि सभी देवगण
भी चल पड़े। विचित्र ध्वजाएँ, पंखे, चौबर, पुष्पवृष्टि,
संगीत, नृत्य और वाद्योंसे सम्मानित पशुपति भगवान्
शिव भगवतो उमाके साथ सेनासहित उन दोनों (ब्रह्मा
और विष्णु)-की युद्धभूमिमें आ पहुँचे ॥ ६—७ ॥

उन दोनोंका युद्ध देखकर शिवजीने गणोंका कोलाहल
तथा वाद्योंकी ध्वनि बन्द करा दी तथा वे छिपकर
आकाशमें स्थित हो गये। उधर शूरबीर ब्रह्मा और विष्णु
एक-दूसरेको मारनेकी इच्छासे माहेश्वरास्त्र और
पाशुपतास्त्रका परस्पर सन्धान कर रहे थे। ब्रह्मा और
विष्णुके अस्त्रोंकी ज्वालासे तीनों लोक जलने लगे।
निराकार भगवान् शंकर इस अकाल प्रलयको आया
देखकर एक भयंकर विशाल अग्निस्तम्भके रूपमें उन
दोनोंके बीच प्रकट हो गये ॥ ८—११ ॥



संसारको नष्ट करनेमें सक्षम वे दोनों दिव्यास्त्र
अपने तेजसहित उस महान् अग्निस्तम्भके प्रकट होते ही
तत्क्षण शान्त हो गये। दिव्यास्त्रोंको शान्त करनेवाले इस
आश्चर्यकारी तथा शुभ (अग्निस्तम्भ)-को देखकर
सभी लोग परस्पर कहने लगे कि यह अद्भुत आकारवाला
(स्तम्भ) क्या है ? ॥ १२—१३ ॥

यह दिव्य अग्निस्तम्भ कैसे प्रकट हो गया ? इसकी
कैंचाईकी और इसकी जड़की हम दोनों जाँच करें—
ऐसा एक साथ निश्चय करके वे दोनों अभिमानी वीर
उसकी परीक्षा करनेको तत्पर हो गये और शीघ्रतापूर्वक
चल पड़े। हम दोनोंके साथ रहनेसे यह कार्य सम्पन्न
नहीं होगा—ऐसा कहकर विष्णुने सूकरका रूप धारण
किया और उसकी जड़की खोजमें चले। उसी प्रकार
ब्रह्मा भी हंसका रूप धारण करके उसका अन्त
खोजनेके लिये चल पड़े। पाताललोकको खोदकर बहुत
दूरतक जानेपर भी विष्णुको उस अग्निके समान तेजस्वी
स्तम्भका आधार नहीं दीखा। तब थक-हारकर सूकरकृति
विष्णु रणभूमिमें बापस आ गये ॥ १४—१८ ॥

हे तात! आकाशमार्गसे जाते हुए आपके पिता ब्रह्माजीने मार्गमें अद्भुत केतकी (केवड़े)-के पुष्पको गिरते देखा। अनेक वर्षोंसे गिरते रहनेपर भी वह ताजा और अति सुगन्ध्युक्त था। ब्रह्मा और विष्णुके इस विग्रहपूर्ण कृत्यको देखकर भगवान् परमेश्वर हँस पड़े, जिससे कम्पनके कारण उनका मस्तक हिला और वह ब्रेष्ट केतकी पुष्प उन दोनोंके ऊपर कृपा करनेके लिये गिरा ॥१९—२१॥

[ब्रह्माजीने उससे पूछा—] हे पुष्पराज! तुम्हें किसने धारण कर रखा था और तुम क्यों गिर रहे हो? [केतकीने उत्तर दिया—] इस पुरातन और अप्रमेय स्तम्भके बीचसे मैं बहुत समयसे गिर रहा हूँ। फिर भी इसके आदिको नहीं देख सका। अतः आप भी इस स्तम्भका अन्त देखनेकी आशा छोड़ दें ॥ २२ ॥

[ब्रह्माजीने कहा—] मैं तो हंसका रूप लेकर इसका अन्त देखनेके लिये यहाँ आया हूँ। अब हे मित्र! मेरा एक अभिलिखित काम तुम्हें करना पड़ेगा। विष्णुके पास मेरे साथ चलकर तुम्हें इतना कहना है कि 'ब्रह्माने इस स्तम्भका अन्त देख लिया है। हे अच्युत! मैं इस बातका साक्षी हूँ'। केतकीसे ऐसा कहकर ब्रह्माने उसे बार-बार प्रणाम किया और कहा कि आपत्कालमें तो मिथ्या भाषण भी प्रशस्त माना गया है—यह शास्त्रकी आज्ञा है ॥ २३—२५॥

बहाँ अति परिश्रमसे थके और [स्तम्भका अन्त न मिलनेसे] उदास विष्णुको देखकर ब्रह्मा प्रसन्नतासे नाच उठे और घण्ड (नपुंसक)-के समान पूर्ण बातें बनाकर

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें अग्निस्तम्भके प्राकट्यका वर्णन
नामक सातवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ७ ॥

अच्युत विष्णुसे इस प्रकार कहने लगे—हे हरे! मैंने इस स्तम्भका अग्रभाग देख लिया है; इसका साक्षी यह केतकी पुष्प है। तब उस केतकीने भी झूट ही विष्णुके समक्ष कह दिया कि ब्रह्माकी बात यथार्थ है ॥ २६—२७ ॥

विष्णुने उस बातको सत्य मानकर ब्रह्माको स्वयं प्रणाम किया और उनका योङ्शोपचार पूजन किया ॥ २८ ॥

उसी समय कपटी ब्रह्माको दण्डित करनेके लिये उस प्रज्वलित स्तम्भ लिंगसे महेश्वर प्रकट हो गये। तब परमेश्वरको प्रकट हुआ देखकर विष्णु उठ खड़े हुए और काँपते हाथोंसे उनका चरण पकड़कर कहने लगे। हे करुणाकर! आदि और अन्तसे रहित शरीरवाले आप परमेश्वरके विषयमें मैंने मोहबुद्धिसे बहुत विचार किया; किंतु कामनाओंसे उत्पन्न वह विचार सफल नहीं हुआ। अतः आप हमपर प्रसन्न हों, हमारे पापको नष्ट करें और हमें क्षमा करें; यह सब आपकी लीलासे ही हुआ है ॥ २९—३० ॥

ईश्वर बोले—हे वत्स! मैं तुमपर प्रसन्न हूँ; क्योंकि श्रेष्ठताकी कामना होनेपर भी तुमने सत्य वचनका पालन किया, इसलिये लोगोंमें तुम मेरे समान ही प्रतिष्ठा और सत्कार प्राप्त करोगे। हे हरे अबसे आपकी पृथक् मूर्ति बनाकर पुण्य क्षेत्रोंमें प्रतिष्ठित की जायगी और उसका उत्सवपूर्वक पूजन होगा ॥ ३१—३२ ॥

इस प्रकार परमेश्वरने विष्णुकी सत्यनिष्ठासे प्रसन्न होकर देवताओंके सामने उन्हें अपनी समानता प्रदान की थी ॥ ३३ ॥

आठवाँ अध्याय

भगवान् शंकरद्वारा ब्रह्मा और केतकी पुष्पको शाप देना और पुनः अनुग्रह प्रदान करना

नन्दिकेश्वर बोले—तदुपरात महादेव शिवजीने ब्रह्माके गर्वकी मिटानेकी इच्छासे अपनी भूकृतीके मध्यसे भैरव नामक एक अद्भुत पुरुषको उत्पन्न किया। उस सृष्टिके आदि देवता हैं, वे इस

इनकी पूजा करो अर्थात् इनका वध कर दो ॥ ३ ॥

तब भैरव एक हाथसे [ब्रह्माके] केश पकड़कर असत्य भाषण करनेवाले उनके उड़त पाँचवें सिरको काटकर हाथोंमें तलवार भाँजते हुए उन्हें मार डालनेके लिये उद्घात हुए ॥ ४ ॥

[हे सनलकुमार!] तब आपके पिता अपने आभूषण, वस्त्र, माला, उत्तरीय एवं निर्मल बालोंके बिखर जानेसे आँधीमें झकझोर हुए केलेके पेड़ और लतागुल्मोंके समान कम्पित होकर भैरवके चरणकमलोंपर गिर पड़े। हे तात! तब ब्रह्माकी रक्षा करनेकी इच्छासे कृपालु विष्णुने मेरे स्वामी भगवान् शंकरके चरणकमलोंको अपने अश्रु-जलसे भिंगोते हुए हथ जोड़कर इस प्रकार प्रार्थना की, जैसे एक छोटा बालक अपने पिताके प्रति दूटी-फूटी वाणीमें करता है ॥ ५-६ ॥

अच्युत बोले—[हे ईश!] आपने ही पहले कृपापूर्वक इन ब्रह्माको पंचाननरूप प्रदान किया था। इसलिये ये आपके अनुग्रह करनेयोग्य हैं, इनका अपराध क्षमा करें और इनपर प्रसन्न हों ॥ ७ ॥

भगवान् अच्युतके द्वारा इस प्रकार प्रार्थना किये जानेपर शिवजीने प्रसन्न होकर देवताओंके सामने ही ब्रह्माको दण्डित करनेसे भैरवको रोक दिया। शिवजीने एक सिरसे विहीन कपटी ब्रह्मासे कहा—हे ब्रह्मन्! तुम ब्रेष्ट्ता पानेके चक्करमें शठेशत्वको प्राप्त हो गये हो। इसलिये संसारमें तुम्हारा सत्कार नहीं होगा और तुम्हरे मन्दिर तथा पूजनोत्सव आदि नहीं होंगे ॥ ८-९ ॥

ब्रह्माजी बोले—हे महाविभूतिसम्पन्न स्वामिन्! आप मुझपर प्रसन्न होइये; मैं [आपकी कृपासे] अपने सिरके कटनेको भी आज ब्रेष्ट समझता हूँ। विश्वके कारण, विश्ववन्यु, दोषोंको सह लेनेवाले और पर्वतके समान कठोर धनुष धारण करनेवाले आप भगवान्,

// इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें शिवकी कृपाका वर्णन नामक आठवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ८ ॥

शिवको नमस्कार है ॥ १०-११ ॥

ईश्वर बोले—हे वत्स! अनुशासनका भय नहीं रहनेसे यह सारा संसार नष्ट हो जायगा। अतः तुम दण्डनीयको दण्ड दो और इस संसारकी व्यवस्था चलाओ। तुम्हें एक परम दुर्लभ वर भी देता हूँ, जिसे ग्रहण करो। अग्निहोत्र आदि वैतानिक और गृह्य यज्ञोंमें आप ही श्रेष्ठ रहेंगे। सर्वांगपूर्ण और पुष्कल दक्षिणावाला यज्ञ भी आपके बिना निष्फल होगा ॥ १२-१३ ॥

तब भगवान् शिवने द्वाटी गवाही देनेवाले कपटी केतक पुष्पसे कहा—अरे शठ केतक! तुम दुष्ट हो; यहाँसे दूर चले जाओ। मेरी पूजामें उपस्थित तुम्हारा फूल मुझे प्रिय नहीं होगा। शिवजीद्वारा इस प्रकार कहते ही सभी देवताओंने केतकीको उनके पाससे हटाकर अन्यत्र भेज दिया ॥ १४-१६ ॥

केतक बोला—हे नाथ! आपको नमस्कार है। आपकी आज्ञाके कारण मेरा तो जन्म ही निष्फल हो गया है। हे तात! मेरा अपराध क्षमा करें और मेरा जन्म सफल कर दें। जाने-अनजानेमें हुए पाप आपके स्मरणमात्रसे नष्ट हो जाते हैं, फिर ऐसे प्रभावशाली आपके साक्षात् दर्शन करनेपर भी मेरे झुट बोलनेका दोष कैसे रह सकता है? ॥ १७-१८ ॥

उस सभास्थलमें केतक पुष्पके इस प्रकार स्तुति करनेपर भगवान् सदाशिवने कहा—मैं सत्य बोलनेवाला हूँ, अतः मेरे द्वारा तुझे धारण किया जाना उचित नहीं है, किंतु मेरे ही अपने (विष्णु आदि देवगण) तुम्हें धारण करोगे और तुम्हारा जन्म सफल होगा और मण्डप आदिके बहाने तुम मेरे ऊपर भी उपस्थित रहोगे ॥ १९-२० ॥

इस प्रकार भगवान् शंकर ब्रह्मा, विष्णु और केतकी पुष्पपर अनुग्रह करके सभी देवताओंसे स्तुत होकर सभामें सुशोभित हुए ॥ २१ ॥

नौवाँ अध्याय

**महेश्वरका ब्रह्मा और विष्णुको अपने निष्कल और सकल स्वरूपका परिचय देते हुए
लिंगपूजनका महत्त्व बताना**

नन्दिकेश्वर बोले—वे दोनों—ब्रह्मा और विष्णु भगवान् शंकरको प्रणाम करके दोनों हाथ जोड़कर उनके दायें-बायें भागमें चुपचाप खड़े हो गये। फिर उन्होंने वहाँ [साक्षात् प्रकट] पूजनीय महादेवजीको कुटुम्बसहित श्रेष्ठ आसनपर स्थापित करके पवित्र पुरुष-वस्तुओंद्वारा उनका पूजन किया ॥ १-२ ॥

दीर्घकालतक अविकृतभावसे सुस्थित रहनेवाली वस्तुओंको पुरुषवस्तु कहते हैं और अल्पकालतक ही टिकनेवाली वस्तुएँ प्राकृतवस्तु कहलाती हैं—इस तरह वस्तुके ये दो भेद जानने चाहिये। [किन पुरुष-वस्तुओंसे उन्होंने भगवान् शिवका पूजन किया, यह बताया जाता है—] हार, नुपुर, केयूर, किरीट, मणिमय कुण्डल, यज्ञोपवीत, उत्तरीय वस्त्र, पुष्प-माला, रेशमी वस्त्र, हार, मुद्रिका (अङ्गठी), पुष्प, ताम्बूल, कपूर, चन्दन एवं अगुरुका अनुलेप, धूप, दीप, श्वेतछत्र, व्यजन, ध्वजा, चंचर तथा अन्यान्य दिव्य उपहारोंद्वारा उन दोनोंने अपने स्वामी महेश्वरका पूजन किया, जिन महेश्वरका वैभव वाणी और मनको पहुँचसे परे था, जो केवल पशुपति परमात्माके ही योग्य थे और जिन्हें पशु (बद्ध जीव) नहीं पा सकते थे ॥ ३-५ १/२ ॥

हे सन्तकुमार! स्वामीके योग्य जो-जो उत्तम वस्तुएँ थीं, उन सभी वस्तुओंका भगवान् शंकरने भी प्रसन्नतापूर्वक यथोचित रूपसे सभासदोंके बीच वितरण कर दिया, जिससे यह श्रेष्ठ परम्परा बनी रहे कि प्राप्त पदार्थोंका वितरण आश्रितोंमें करना चाहिये। उन वस्तुओंको ग्रहण करनेवाले सभासदोंमें वहाँ कोलाहल मच गया। इस प्रकार वहाँ पहले ही ब्रह्मा तथा विष्णुसे पूजित हुए भक्तिवर्धक भगवान् शिव विनम्र उन दोनों देवताओंसे हँसकर कहने लगे ॥ ६-८ १/२ ॥

ईश्वर बोले—हे पुत्रो! आजका दिन महान् है। इसमें तुम्हारे द्वारा जो आज मेरी पूजा हुई है, इससे मैं

तुमलोगोंपर बहुत प्रसन्न हूँ। इसी कारण यह दिन परम पवित्र और महान्-से-महान् होगा। आजकी यह तिथि शिवरात्रिके नामसे विख्यात होकर मेरे लिये परम प्रिय होगी ॥ ९-१० ॥

इस समय जो मेरे लिंग (निष्कल—अंग-आकृतिसे रहित निराकार स्वरूपके प्रतीक) और देर (सकल—साकाररूपके प्रतीक विग्रह)-की पूजा करेगा, वह पुरुष जगत्की सृष्टि और पालन आदि कार्य भी कर सकता है ॥ ११ ॥

जो शिवरात्रिको दिन-रात निराहर एवं जितेन्द्रिय रहकर अपनी शक्तिके अनुसार निष्कप्त भावसे मेरी यथोचित पूजा करेगा, उसको मिलनेवाले फलका वर्णन सुनो। एक वर्षतक निरन्तर मेरी पूजा करनेपर जो फल मिलता है, वह सारा फल केवल शिवरात्रिको मेरा पूजन करनेसे मनुष्य तत्काल प्राप्त कर लेता है ॥ १२-१३ ॥

जैसे पूर्ण चन्द्रमाका उदय समुद्रकी वृद्धिका अवसर है, उसी प्रकार यह शिवरात्रि तिथि मेरे धर्मकी वृद्धिका समय है। इस तिथिमें मेरी स्थापना आदिका मंगलमय उत्सव होना चाहिये ॥ १४ ॥

हे वत्सो! पहले मैं जब ज्योतिर्मय स्तम्भरूपसे प्रकट हुआ था, उस समय मार्गशीर्षमासमें आद्रा नक्षत्र था। अतः जो पुरुष मार्गशीर्षमासमें आद्रा नक्षत्र होनेपर मुझ उमापतिका दर्शन करता है अथवा मेरी मूर्ति या लिंगकी ही झाँकीका दर्शन करता है, वह मेरे लिये कार्तिकेयसे भी अधिक प्रिय है। उस शुभ दिन मेरे दर्शनमात्रसे पूरा फल प्राप्त होता है। यदि [दर्शनके साथ-साथ] मेरा पूजन भी किया जाय तो उसका अधिक फल प्राप्त होता है, जिसका वाणीद्वारा वर्णन नहीं हो सकता ॥ १५-१७ ॥

इस रणभूमिमें मैं लिंगरूपसे प्रकट होकर बहुत बड़ा हो गया था। अतः उस लिंगके कारण यह भूतल लिंगस्थानके नामसे प्रसिद्ध हुआ। हे पुत्रो! जगत्के लोग

इसका दर्शन और पूजन कर सकें, इसके लिये यह अनादि और अनन्त ज्योतिःस्तम्भ अत्यन्त छोटा हो जायगा। यह लिंगं सब प्रकारके भोगांको सुलभ करनेवाला और भोग तथा मोक्षका एकमात्र साधन होगा। इसका दर्शन, स्पर्श तथा ध्यान प्राणियोंको जन्म और मृत्युसे छुटकारा दिलानेवाला होगा॥ १८—२०॥

अग्निके पहाड़—जैसा जो यह शिवलिंगं यहाँ प्रकट हुआ है, इसके कारण यह स्थान अरुणाचल नामसे प्रसिद्ध होगा। यहाँ अनेक प्रकारके बड़े—बड़े तीर्थ प्रकट होंगे। इस स्थानमें निवास करने या मरनेसे जीवोंका मोक्ष हो जायगा॥ २१—२२॥

रथेत्सवादिके आयोजनसे यहाँ सर्वत्र अनेक लोग कल्याणकारी रूपसे निवास करेंगे। इस स्थानपर किया गया दान, हवन तथा जप—यह सब करोड़गुना फल देनेवाला होगा। यह क्षेत्र मेरे सभी क्षेत्रोंमें श्रेष्ठतम् होगा। यहाँ मेरा स्मरण करनेमात्रसे प्राणियोंकी मुक्ति हो जायगी। अतः यह परम रमणीय क्षेत्र अति महत्वपूर्ण है। यह सभी प्रकारके कल्याणोंसे पूर्ण, शुभ और सबको मुक्ति प्रदान करनेवाला होगा॥ २३—२५॥

इस लिंगमें मुझ लिंगेश्वरकी अर्चना करके मनुष्य सालोक्य, सामीक्ष्य, सारूप्य, सार्थि और सायुज्य—इन पाँचों प्रकारकी मुक्तियोंका अधिकार प्राप्त कर लेगा। आपलोगोंको भी शीघ्र ही सभी मनोवांछित फल प्राप्त होंगे॥ २६—२७॥

नन्दिकेश्वर बोले— इस प्रकार विनम्र ब्रह्मा तथा विष्णुपर अनुग्रह करके भगवान् शंकरने उनके जो सैन्यदल परस्पर युद्धमें मारे गये थे, उन्हें अपनी अमृतवर्षिणी शक्तिसे जीवित कर दिया। उन दोनों ब्रह्मा और विष्णुकी मूढ़ता और [पारस्परिक] वैरको मिटानेके लिये भगवान् शंकर उन दोनोंसे कहने लगे—॥ २८—२९॥

मेरे दो रूप हैं—‘सकल’ और ‘निष्कल’। दूसरे किसीके ऐसे रूप नहीं हैं, अतः [मेरे अतिरिक्त] अन्य सब अनीश्वर हैं। हे पुत्रो! पहले मैं स्तम्भरूपसे प्रकट हुआ, फिर अपने साक्षात्-रूपसे। ‘ब्रह्मभाव’ में ‘निष्कल’ रूप और ‘महेश्वरभाव’ सकल रूप है। ये दोनों मेरे ही

सिद्धरूप हैं; मेरे अतिरिक्त किसी दूसरे के नहीं हैं। इस कारण तुम दोनोंका अथवा अन्य किसीका भी ईश्वरत्व कभी नहीं है॥ ३०—३२॥

अज्ञानके कारण तुम दोनोंको जो यह ईशत्वका आशर्यजनक अभिमान उत्पन्न हो गया था, उसे दूर करनेके लिये ही मैं इस रणभूमिमें प्रकट हुआ हूँ। उस अपने अभिमानको छोड़ दो और मुझ परमेश्वरमें [अपनी] बुद्धि स्थिर करो। मेरे अनुग्रहसे ही सभी लोकोंमें सब कुछ प्रकाशित होता है। इस गूढ़ ब्रह्मतत्त्वको तुम्हरे प्रति प्रेम होनेके कारण ही मैं बता रहा हूँ॥ ३३—३५॥

मैं ही परब्रह्म हूँ। कल (सगुण) और अकल (निर्गुण)—ये दोनों मेरे ही स्वरूप हैं। मेरा स्वरूप ब्रह्मरूप होनेके कारण मैं ईश्वर भी हूँ। जीवोंपर अनुग्रह आदि करना मेरा कार्य है। हे ब्रह्मा और केशव! सबसे बहुत और जगत्की वृद्धि करनेवाला होनेके कारण मैं ‘ब्रह्म’ हूँ। हे पुत्रो! सर्वत्र समरूपसे स्थित और व्यापक होनेसे मैं ही सबका आत्मा हूँ॥ ३६—३७॥

अन्य सभी जीव अनात्मरूप हैं; इसमें सन्देह नहीं है। सर्गसे लेकर अनुग्रहतक (आत्मा या ईश्वरसे भिन्न) जो जगत्-सम्बन्धी पाँच कृत्य हैं, वे सदा मेरे ही हैं, मेरे अतिरिक्त दूसरे किसीके नहीं हैं; क्योंकि मैं ही सबका ईश्वर हूँ। पहले मेरी ब्रह्मरूपताका बोध करनेके लिये ‘निष्कल’ लिंग प्रकट हुआ था, फिर तुम दोनोंको अज्ञात ईश्वरत्वका स्पष्ट साक्षात्कार करानेके लिये मैं साक्षात् जगदीश्वर ही ‘सकल’ रूपमें तत्काल प्रकट हो गया। अतः मुझमें जो ईशत्व है, उसे ही मेरा सकलरूप जानना चाहिये तथा जो यह मेरा निष्कल रूप है, वह मेरे ब्रह्मरूपका बोध करनेवाला है। हे पुत्रो! लिंग-लक्षणयुक्त होनेके कारण यह मेरा ही लिंग (चित्त) है। तुम दोनोंको प्रतिदिन यहाँ रहकर इसका पूजन करना चाहिये। यह मेरा ही स्वरूप है और मेरे सामीक्ष्यकी प्राप्ति करानेवाला है। लिंग और लिंगीमें नित्य अभेद होनेके कारण मेरे इस लिंगका महान् पुरुषोंको भी पूजन करना चाहिये॥ ३८—४३॥

हे वत्सो! जहाँ-जहाँ जिस किसीने मेरे लिंगको

स्थापित कर लिया, वहाँ में अप्रतिष्ठित होनेपर भी प्रतिष्ठित हो जाता हूँ ॥ ४४ ॥

मेरे एक लिंगकी स्थापना करनेका फल मेरी समानताकी प्राप्ति बताया गया है। एकके बाद दूसरे शिवलिंगकी भी स्थापना कर दी गयी, तब फलरूपसे मेरे साथ एकत्व

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें शिवके महेश्वरतत्वका वर्णन
नामक नौवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १ ॥

(सायुज्य मोक्ष)-रूप फल प्राप्त होता है ॥ ४५ ॥

प्रधानतया शिवलिंगकी ही स्थापना करनी चाहिये। मूर्तिकी स्थापना उसकी अपेक्षा गौण है। शिवलिंगके अभावमें सब ओरसे मूर्तियुक्त होनेपर भी वह स्थान क्षेत्र नहीं कहलाता ॥ ४६ ॥

दसवाँ अध्याय

सृष्टि, स्थिति आदि पाँच कृत्योंका प्रतिपादन, प्रणव एवं पंचाक्षर-मन्त्रकी महत्ता, ब्रह्म-विद्याद्वारा भगवान् शिवकी स्तुति तथा उनका अन्तर्धान होना

ब्रह्मा और विद्या बोले—हे प्रभो! हम दोनोंको सृष्टि आदि पाँच कृत्योंका लक्षण बताइये ॥ ३-२ ॥

शिवजी बोले—मेरे कृत्योंको समझना अत्यन्त गहन है, तथापि मैं कृपापूर्वक तुम दोनोंको उनके विषयमें बता रहा हूँ। हे ब्रह्मा और अच्युत! सृष्टि, स्थिति, संहार, तिरोभाव और अनुग्रह—ये पाँच ही मेरे जगत्-सम्बन्धी कार्य हैं, जो नित्यसिद्ध हैं। संसारकी रचनाका जो आरम्भ है, वह 'सर्ग' है। मुझसे पालित होकर सृष्टिका सुस्थिररूपसे रहना ही उसकी 'स्थिति' कहा गया है। उसका विनाश ही 'संहार' है। प्राणोंका उत्क्रमण ही 'तिरोभाव' है। इन सबसे छुटकारा मिल जाना ही मेरा 'अनुग्रह' है। इस प्रकार मेरे पाँच कृत्य हैं। इन मेरे कर्तव्योंको चुपचाप अन्य पंचभूतादि वहन करते रहते हैं, जैसे जलमें पड़नेवाले गोपुर-बिम्बमें आवागमन होता रहता है ॥ १-४ ॥

सृष्टि आदि जो चार कृत्य हैं, वे संसारका विस्तार करनेवाले हैं। पाँचवाँ कृत्य अनुग्रह मोक्षका हेतु है। वह सदा मुझमें ही अचल भावसे स्थिर रहता है। मेरे भूतजन इन पाँचों कृत्योंको पाँचों भूतोंमें देखते हैं। सृष्टि भूतलमें, स्थिति जलमें, संहार अग्निमें, तिरोभाव वायुमें और अनुग्रह आकाशमें स्थित है। पृथ्वीसे सबकी सृष्टि होती है, जलसे सबकी वृद्धि होती है, आग सबको जला देती है, वायु सबको एक स्थानसे दूसरे स्थानको ले

जाती है और आकाश सबको अनुगृहीत करता है—यह विद्यान् पुरुषोंको जानना चाहिये ॥ ५-८ ॥

इन पाँच कृत्योंका भार वहन करनेके लिये ही मेरे पाँच मुख हैं। चार दिशाओंमें चार मुख हैं और इनके बीचमें पाँचवाँ मुख है। हे पुत्रो! तुम दोनोंने तपस्या करके प्रसन्न हुए मुझ परमेश्वरसे भाग्यवश सृष्टि और स्थिति नामक दो कृत्य प्राप्त किये हैं। ये दोनों तुम्हें बहुत प्रिय हैं। इसी प्रकार मेरे विभूतिस्वरूप रुद्र और महेश्वरने दो अन्य उत्तम कृत्य—संहार और तिरोभाव मुझसे प्राप्त किये हैं, परंतु अनुग्रह नामक कृत्य कोई नहीं पा सकता ॥ ९-११ ॥

उन सभी पहलेके कर्मोंको तुम दोनोंने समयानुसार भूला दिया। रुद्र और महेश्वर अपने कर्मोंको नहीं भूले हैं, इसलिये मैंने उन्हें अपनी समानता प्रदान की है। वे रूप, वेष, कृत्य, वाहन, आसन और आयुध आदिमें मेरे समान ही हैं ॥ १२-१३ ॥

हे पुत्रो! मेरे ध्यानसे शून्य होनेके कारण तुम दोनोंमें मूढ़ता आ गयी है, मेरा ज्ञान रहनेपर महेश्वरके समान अभिमान और स्वरूप नहीं रहता। इसलिये मेरे ज्ञानकी सिद्धिके लिये मेरे ओंकार नामक मन्त्रका तुम दोनों जप करो, यह अभिमानको दूर करनेवाला है ॥ १४-१५ ॥

पूर्वकालमें मैंने अपने स्वरूपभूत मन्त्रका उपदेश किया है, जो ओंकारके रूपमें प्रसिद्ध है। वह महामंगलकारी

मन्त्र है। सबसे पहले मेरे मुखसे ऊंकार (३०) प्रकट हुआ, जो मेरे स्वरूपका बोध करानेवाला है। ऊंकार वाचक है और मैं वाच्य हूँ। यह मन्त्र मेरा स्वरूप ही है। प्रतिदिन ऊंकारका निन्तर स्मरण करनेसे मेरा ही सदा स्मरण होता रहता है॥ १६-१७॥

पहले मेरे उत्तरवर्ती मुखसे अकार, पश्चिम मुखसे उकार, दक्षिण मुखसे भकार, पूर्ववर्ती मुखसे बिन्दु तथा मध्यवर्ती मुखसे नाद उत्पन्न हुआ। इस प्रकार पाँच अवयवोंसे युक्त होकर ऊंकारका विस्तार हुआ है। इन सभी अवयवोंसे एकीभूत होकर वह प्रणव ३० नामक एक अक्षर हो गया। यह नाम-रूपात्मक सारा जगत् तथा वेद-वर्णित स्त्री-पुरुषवर्गरूप दोनों कुल इस प्रणव-मन्त्रसे व्याप्त है। यह मन्त्र शिव और शक्ति दोनोंका बोधक है॥ १८-२०॥

इसी प्रणवसे पंचाक्षरमन्त्रकी उत्पत्ति हुई है, जो मेरे सकल रूपका बोधक है। वह अकारादि क्रमसे और नकारादि क्रमसे क्रमशः प्रकाशमें आया है। [३० नमः शिवाय] इस पंचाक्षरमन्त्रसे मातृकावर्ण प्रकट हुए हैं, जो पाँच भेदवाले हैं।* उसीसे शिरोमन्त्र तथा चार मुखोंसे त्रिपदा गायत्रीका प्राकटय हुआ है। उस गायत्रीसे सम्पूर्ण वेद प्रकट हुए हैं और उन वेदोंसे करोड़ों मन्त्र निकले हैं। उन-उन मन्त्रोंसे भिन्न-भिन्न कार्योंकी सिद्धि होती है, परंतु इस प्रणव एवं पंचाक्षरसे सम्पूर्ण मनोरथोंकी सिद्धि होती है। इस मूलमन्त्रसे भोग और मोक्ष दोनों ही सिद्ध होते हैं। मेरे सकल स्वरूपसे सम्बन्ध रखनेवाले सभी मन्त्रराज साक्षात् भोग प्रदान करनेवाले और शुभकारक हैं॥ २१-२४॥

नन्दिकेश्वर बोले—तदनन्तर जगदम्बा पार्वतीके साथ बैठे हुए गुरुवर महादेवजीने उत्तराभिमुख बैठे हुए ब्रह्मा और विष्णुको परदा करनेवाले वस्त्रसे आच्छादित करके उनके मस्तकपर अपना करकमल रखकर धीर-धीर उच्चारण करके उन्हें उत्तम मन्त्रका उपदेश दिया॥ २५॥

यन्त्र-तन्त्रमें बतायी हुई विधिके पालन-पूर्वक तीन बार मन्त्रका उच्चारण करके भगवान् शिवने

उन दोनों शिष्योंको मन्त्रकी दीक्षा दी। तत्पश्चात् उन शिष्योंने गुरुदक्षिणाके रूपमें अपने-आपको ही समर्पित कर दिया और दोनों हाथ जोड़कर उनके समीप खड़े हो उन देवत्रैष्ट जगदगुरुका स्तवन किया॥ २६-२७॥

ब्रह्मा और विष्णु बोले—[हे प्रभो!] आप निष्कलरूप हैं; आपको नमस्कार है। आप निष्कल तेजसे प्रकाशित होते हैं; आपको नमस्कार है। आप सबके स्वामी हैं; आपको नमस्कार है। आप सर्वात्माको नमस्कार है अथवा सकल-स्वरूप आप महेश्वरको नमस्कार है। आप प्रणवके वाच्यर्थ हैं; आपको नमस्कार है। आप प्रणवलिंग-बाले हैं; आपको नमस्कार है। सृष्टि, पालन, संहर, तिरोभाव और अनुग्रह करनेवाले आपको नमस्कार है। आपके पाँच मुख हैं; आपको नमस्कार है। पंचब्रह्मस्वरूप पाँच कृत्यवाले आपको नमस्कार है। आप सबके आत्मा हैं, ब्रह्म हैं, आपके गुण और आपकी शक्तियाँ अनन्त हैं, आपको नमस्कार है। आपके सकल और निष्कल दो रूप हैं। आप सदगुरु एवं शम्भु हैं, आपको नमस्कार है। इन पद्योद्धारा अपने गुरु महेश्वरकी सूति करके ब्रह्मा और विष्णुने उनके चरणोंमें प्रणाम किया॥ २८-३१॥

ईश्वर बोले—हे वत्सो! मैंने तुम दोनोंसे सारा तत्त्व कहा और दिखा दिया। तुमदोनों देवीके द्वाय उपदिष्ट प्रणव (३०), जो मेरा ही स्वरूप है-का निरन्तर जप करो॥ ३२॥

[इसके जपसे] ज्ञान, स्थिर भाग्य—सब कुछ सदाके लिये प्राप्त हो जाता है। आद्रा नक्षत्रसे युक्त चतुर्दशीको प्रणवका जप किया जाय तो वह अक्षय फल देनेवाला होता है। सूर्यकी संक्रान्तिसे युक्त महा-आद्रा नक्षत्रमें एक बार किया हुआ प्रणवजप कोटियुने जपका फल देता है। मृगशिरा नक्षत्रका अनित्म भाग तथा पुनर्वसुका आदिभाग पूजा, होम और तर्पण आदिके लिये सदा आद्राके समान ही होता है—यह जानना चाहिये। मेरा या मेरे लिंगका दर्शन प्रभातकालमें ही प्रातः तथा संगव (मध्याह्नके पूर्व)-कालमें करना चाहिये॥ ३३-३५॥

मेरे दर्शन-पूजनके लिये चतुर्दशी तिथि निशीथव्यापिनी

* अ इ उत्तर लु—ये पाँच मूलभूत स्वर हैं तथा अंगन भी पाँच-पाँच वर्णोंसे युक्त पाँच वर्गवाले हैं।

अथवा प्रदोषव्यापिनी लेनी चाहिये; क्योंकि परवर्तिनी (अमावास्या) तिथिसे संयुक्त चतुर्दशीकी ही प्रशंसा की जाती है। पूजा करनेवालोंके लिये मेरी मूर्ति तथा लिंग दोनों समान हैं, फिर भी मूर्तिकी अपेक्षा लिंगका स्थान श्रेष्ठ है। इसलिये मुमुक्षु पुरुषोंको चाहिये कि वे वेर (मूर्ति)-से भी श्रेष्ठ समझकर लिंगका ही पूजन करें।

लिंगका ॐकारमन्त्रसे और वेरका पंचाक्षरमन्त्रसे पूजन करना चाहिये। शिवलिंगकी स्वयं ही स्थापना करके अथवा दूसरोंसे भी स्थापना करवाकर उत्तम द्रव्यमय उपचारोंसे पूजा करनी चाहिये; इससे मेरा पद सुलभ हो जाता है। इस प्रकार उन दोनों शिव्योंको उपदेश देकर भगवान् शिव वहीं अन्तर्धान हो गये ॥ ३६—३९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें आँकारोपदेशका वर्णन
नामक दसवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १० ॥

ग्रारहवाँ अध्याय

शिवलिंगकी स्थापना, उसके लक्षण और पूजनकी विधिका वर्णन तथा शिवपदकी प्राप्ति
करनेवाले सत्कर्मोंका विवेचन

ऋषिगण बोले—[हे सूतजी!] शिवलिंगकी स्थापना कैसे करनी चाहिये, उसका लक्षण क्या है तथा उसकी पूजा कैसे करनी चाहिये, किस देश-कालमें करनी चाहिये और किस द्रव्यके द्वारा उसका निर्माण होना चाहिये? ॥ १ ॥

सूतजी बोले—[हे मर्हियो!] मैं आपलोगोंके लिये इस विषयका वर्णन करता हूँ। ध्यान देकर समझिये। अनुकूल एवं शुभ समयमें किसी पवित्र तीर्थमें अथवा नदी आदिके तटपर अपनी सूचिके अनुसार ऐसी जगह शिवलिंगकी स्थापना करनी चाहिये, जहाँ नित्य पूजन हो सके। पार्थिव द्रव्यसे, जलमय द्रव्यसे अथवा धातुमय पदार्थसे अपनी सूचिके अनुसार कल्पोक्त लक्षणोंसे युक्त शिवलिंगका निर्माण करके उसकी पूजा करनेसे उपासकको उस पूजनका पूरा-पूरा फल प्राप्त होता है। सम्पूर्ण शुभ लक्षणोंसे युक्त शिवलिंग तत्काल पूजाका फल देनेवाला होता है ॥ २—४ ॥

यदि चलप्रतिष्ठा करनी हो तो इसके लिये छोटा-सा शिवलिंग और यदि अचलप्रतिष्ठा करनी हो तो स्थूल शिवलिंग त्रैच माना जाता है। उत्तम लक्षणोंसे युक्त पीठसंहित शिवलिंगकी स्थापना करनी चाहिये। शिवलिंगका पीठ मण्डलाकार (गोल), चौकोर, त्रिकोण अथवा खट्टवांगके आकारका (ऊपर गोल तथा आगे लम्बा) होना चाहिये। ऐसा लिंगपीठ महान् फल देनेवाला होता है ॥ ५—६ ॥

पहले मिट्टी, प्रस्तर आदिसे अथवा लोहे आदिसे शिवलिंगका निर्माण करना चाहिये। जिस द्रव्यसे शिवलिंगका निर्माण हो, उसीसे उसका पीठ भी बनाना चाहिये—यही स्थावर (अचल प्रतिष्ठावाले) शिवलिंगकी विशेष बात है। चर (चलप्रतिष्ठावाले) शिवलिंगमें भी लिंग और पीठका एक ही उपादान होना चाहिये, किंतु बाणलिंगके लिये यह नियम नहीं है। लिंगकी लम्बाई निर्माणकर्ताके बारह अंगुलके बराबर होनी चाहिये—ऐसा ही शिवलिंग उत्तम कहा गया है। इससे कम लम्बाई हो तो फलमें कमी आ जाती है, अधिक हो तो कोई दोष नहीं है। चर लिंगमें भी वैसा ही नियम है, उसकी लम्बाई कम-से-कम करके एक अंगुलके बराबर होनी चाहिये ॥ ७—९ ॥

पहले शिल्पशास्त्रके अनुसार एक विमान या देवालय बनवाये, जो देवगणोंकी मूर्तियोंसे अलंकृत हो। उसका गर्भगृह बहुत ही सुन्दर, सुदृढ़ और दर्पणके समान स्वच्छ हो। उसे नी प्रकारके रत्नोंसे विभूषित किया गया हो। उसमें पूर्व और पश्चिम दिशामें दो मुख्य द्वार हों। जहाँ शिवलिंगकी स्थापना करनी हो, उस स्थानके गर्तमें नीलम, लाल रत्न, वैदूर्य, श्याम रत्न, भरकत, मोती, मूँगा, गोमेद और हीरा—इन नी रत्नोंको तथा अन्य महत्वपूर्ण द्रव्योंको वैदिक मन्त्रोंके साथ छोड़े। सद्गोजात

आदि पाँच वैदिक मन्त्रोद्घारा शिवलिंगका पाँच स्थानोंमें क्रमशः पूजन करके अग्निमें हविष्यकी अनेक आहुतियाँ दे और परिवारसहित मेरी पूजा करके गुरुस्वरूप आचार्यको धन तथा भाई-बन्धुओंको अभिलषित बस्तुओंसे सन्तुष्ट करे। याचकोंको जड़ (सुवर्ण, गृह एवं भू-सम्पत्ति) तथा चेतन (गौ आदि) वैभव प्रदान करे ॥ १०—१४ ॥

स्थावर-जंगम सभी जीवोंको यत्पूर्वक सन्तुष्ट करके एक गढ़देमें सुवर्ण तथा नौ प्रकारके रत्न भरकर सद्योजातादि* वैदिक मन्त्रोंका उच्चारण करके परम कल्याणकारी महादेवजीका ध्यान करे। तत्पश्चात् नादधोषसे युक्त महामन्त्र आंकारका उच्चारण करके उक्त गढ़देमें शिवलिंगकी स्थापना करके उसे पीठसे संयुक्त करे। इस प्रकार पीठयुक्त लिंगकी स्थापना करके उसे नित्य लेप (दीर्घकालतक टिके रहनेवाले मसाले)-से जोड़कर स्थिर करे ॥ १५—१७ ॥

इसी प्रकार वहाँ पंचाक्षर मन्त्रसे परम सुन्दर वेर (मूर्ति)-की भी स्थापना करनी चाहिये (सारांश यह कि भूमि-संस्कार आदिकी सारी विधि जैसी लिंगप्रतिष्ठाके लिये कही गयी है, वैसी ही वेर (मूर्ति)-प्रतिष्ठाके लिये भी समझनी चाहिये। अन्तर इतना ही है कि लिंगप्रतिष्ठाके लिये प्रणवमन्त्रके उच्चारणका विधान है, परंतु वेरकी प्रतिष्ठा पंचाक्षरमन्त्रसे करनी चाहिये)। जहाँ लिंगकी प्रतिष्ठा हुई है, वहाँ भी उत्सवके लिये और बाहर सवारी निकालने आदिके निमित्त वेर (मूर्ति)-को रखना आवश्यक है ॥ १८ ॥

वेरको बाहरसे भी लिया जा सकता है। उसे गुरुजनोंसे ग्रहण करे। वाह्य वेर वही लेनेयोग्य है, जो साधुपुरुषोंद्वारा पूजित हो। इस प्रकार लिंगमें और वेरमें भी की हुई महादेवजीकी पूजा शिवपद प्रदान करनेवाली होती है। स्थावर और जंगमके भेदसे लिंग भी दो प्रकारका कहा गया है। वृक्ष, लता आदिको स्थावर लिंग कहते हैं और

कृमि-कीट आदिको जंगम लिंग। सभीने आदिके द्वारा स्थावर लिंगकी सेवा करनी चाहिये और जंगम लिंगको आहार एवं जल आदि देकर तुप्त करना उचित है। उन स्थावर-जंगम जीवोंको सुख पहुँचानेमें अनुरक्त होना भगवान् शिवका पूजन है—ऐसा विद्वान् पुरुष मानते हैं। [इस प्रकार चराचर जीवोंको ही भगवान् शंकरके प्रतीक मानकर उनका पूजन करना चाहिये] ॥ १९—२१ ॥

सभी पीठ पराप्रकृति जगद्बाका स्वरूप हैं और समस्त शिवलिंग चैतन्यस्वरूप हैं। जैसे भगवान् शंकर देवी पार्वतीको गोदमें बिठाकर विराजते हैं, उसी प्रकार यह शिवलिंग सदा पीठके साथ ही विराजमान होता है ॥ २२—२३ ॥

इस तरह महालिंगकी स्थापना करके विविध उपचारोंद्वारा उसका पूजन करे। अपनी शक्तिके अनुसार नित्य पूजा करनी चाहिये तथा देवालयके पास ध्वजारोपण आदि करना चाहिये। इस प्रकार साक्षात् शिवका पद प्रदान करनेवाले लिंगकी स्थापना करे अथवा चर लिंगमें षोडशोपचारोंद्वारा यथोचित रीतिसे क्रमशः पूजन करे; यह पूजन भी शिवपद प्रदान करनेवाला है। आवाहन, आसन, अर्ध्य, पादा, पाद्मांग आचमन, अभ्यंगपूर्वक स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल-समर्पण, नीराजन, नमस्कार और विसर्जन—ये सोलह उपचार हैं। अथवा अर्ध्यसे लेकर नैवेद्यतक विधिवत् पूजन करे। अभिषेक, नैवेद्य, नमस्कार और तर्पण—ये सब यथाशक्ति नित्य करे। इस तरह किया हुआ शिवका पूजन शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला होता है ॥ २४—२९ ॥

अथवा किसी मनुष्यके द्वारा स्थापित शिवलिंगमें, ऋषियोंद्वारा स्थापित शिवलिंगमें, देवताओंद्वारा स्थापित शिवलिंगमें, अपने-आप प्रकट हुए स्वयम्भूलिंगमें तथा अपने द्वारा नूतन स्थापित हुए शिवलिंगमें भी उपचार-समर्पणपूर्वक जैसे-तैसे पूजन करनेसे या पूजनकी सामग्री

* ॐ सद्योजातं प्रपश्यामि सद्योजातय वै नमो नमः । भवे भवे नातिप्रवे भवस्व मा भवोद्वावय नमः ॥

ॐ वामदेवाय नमो श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलादिकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोमन्यनाय नमः ॥

ॐ अवोरभूत्य वोरोपो घोरोपोभः । सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्रलोभः ॥

ॐ तत्पुरुषाय विश्वे महादेवाय धीमहि । तनो लः प्रवोदयत् ॥

ॐ इशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्विद्वानोऽधिपतिर्विद्वाना शिवो मे अस्तु सदा शिवोम् ॥

देनेसे भी मनुष्य ऊपर जो कुछ कहा गया है, वह सारा फल प्राप्त कर लेता है। क्रमशः परिक्रमा और नमस्कार करनेसे भी शिवलिंग शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला होता है। यदि नियमपूर्वक शिवलिंगका दर्शनमात्र कर लिया जाय तो वह भी कल्प्याणप्राप्त होता है। मिट्टी, आटा, गायके गोबर, फूल, कनेरपूष्य, फल, गुड़, मखबन, भस्म अथवा अन्नसे भी अपनी रुचिके अनुसार शिवलिंग बनाकर तदनुसार उसका पूजन करे॥ ३०—३३॥

कुछ लोग हाथके आँगूठे आदिपर भी पूजा करना चाहते हैं। लिंगका निर्माण कहीं भी करनेमें किसी प्रकारका निषेध नहीं है। भगवान् शिव सर्वत्र ही भक्तके प्रयत्नके अनुसार फल प्रदान कर देते हैं। अथवा ब्रह्मपूर्वक शिवभक्तको शिवलिंगका दान या लिंगके मूल्यका दान करनेसे भी शिवलोककी प्राप्ति होती है॥ ३४—३५ ३/२॥

अथवा प्रतिदिन दस हजार प्रणवमन्त्रका जप करे अथवा दोनों सन्ध्याओंके समय एक-एक हजार प्रणवका जप किया करे। यह क्रम भी शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला है—ऐसा जानना चाहिये। जपकालमें मकारान्त प्रणवका उच्चारण मनकी शुद्धि करनेवाला होता है। समाधिमें मानसिक जपका विधान है तथा अन्य सब समय उपांशु* जप ही करना चाहिये। नाद और बिन्दुसे युक्त औंकारके उच्चारणको विद्वान् पुरुष समानप्रणव कहते हैं। यदि प्रतिदिन आदरपूर्वक दस हजार पंचाक्षर मन्त्रका जप किया जाय अथवा दोनों सन्ध्याओंके समय एक-एक हजारका ही जप किया जाय तो उसे शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला समझना चाहिये॥ ३६—३९॥

ब्राह्मणोंके लिये आदिमें प्रणवसे युक्त पंचाक्षरमन्त्र अच्छा बताया गया है। फलकी प्राप्तिके लिये दीक्षापूर्वक गुरुसे मन्त्र ग्रहण करना चाहिये। कलशसे किया हुआ स्नान, मन्त्रकी दीक्षा, मातुकाओंका न्यास, सत्यसे पवित्र अन्तःकरणवाला ब्राह्मण तथा ज्ञानी गुरु—इन सबको उत्तम माना गया है॥ ४०—४१॥

द्विजोंके लिये 'नमः शिवाय' के उच्चारणका

विधान है। द्विजेतरोंके लिये अन्तमें नमः—पदके प्रयोगकी विधि है अर्थात् वे 'शिवाय नमः' इस मन्त्रका उच्चारण करें। स्त्रियोंके लिये भी कहीं-कहीं विधिपूर्वक अन्तमें नमः जोड़कर उच्चारणका ही विधान है अर्थात् कोई-कोई ऋषि ब्राह्मणकी स्त्रियोंके लिये नमःपूर्वक शिवायके जपकी अनुमति देते हैं अर्थात् वे 'नमः शिवाय' का जप करें। पंचाक्षर-मन्त्रका पाँच करोड़ जप करके मनुष्य भगवान् सदाशिवके समान हो जाता है। एक, दो, तीन अथवा चार करोड़का जप करनेसे क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा महेश्वरका पद प्राप्त होता है अथवा मन्त्रमें जितने अक्षर हैं, उनका पृथक्-पृथक् एक-एक लाख जप करे अथवा समस्त अक्षरोंका एक साथ ही जितने अक्षर हों, उतने लाख जप करे। इस तरहके जपको शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला समझना चाहिये। यदि एक हजार दिनोंमें प्रतिदिन एक सहस्र जपके क्रमसे पंचाक्षर-मन्त्रका दस लाख जप पूरा कर लिया जाय और प्रतिदिन ब्राह्मण-भोजन कराया जाय तो उस मन्त्रसे अधीष्ट कार्यकी सिद्धि होती है॥ ४२—४५ ३/२॥

ब्राह्मणको चाहिये कि वह प्रतिदिन प्रातःकाल एक हजार आठ बार गायत्रीका जप करे। ऐसा होनेपर गायत्री क्रमशः शिवका पद प्रदान करनेवाली होती है। वेदमन्त्रों और वैदिक सूक्तोंका भी नियमपूर्वक जप करना चाहिये॥ ४६—४७॥

एकाक्षर मन्त्र दस हजार, दशार्ण मन्त्र एक हजार, सौसे कम अक्षरवाले मन्त्र एक सौ और उससे अधिक अक्षरवाले मन्त्र यथाशक्ति एकसे अधिक बार जपने चाहिये॥ ४८॥

वेदोंके पारायणको भी शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला जानना चाहिये। अन्यान्य जो बहुत-से मन्त्र हैं, उनका भी जितने अक्षर हों, उतने लाख जप करना चाहिये॥ ४९॥

एकाक्षर मन्त्रोंको उसी प्रकार करोड़की संख्यामें जपना चाहिये। अधिक अक्षरवाले मन्त्र हजारकी संख्यामें भक्तिपूर्वक जपने चाहिये॥ ५०॥

इस प्रकार जो यथाशक्ति जप करता है, वह

* मन्त्राक्षरोंका इतने धीमे स्वरमें उच्चारण करे कि उसे दूसरा कोई सुन न मरे, ऐसे जपको उपांशु कहते हैं।

आदि पाँच वैदिक मन्त्रोद्घारा शिवलिंगका पाँच स्थानोंमें क्रमशः पूजन करके अग्निमें हविष्यकी अनेक आहुतियाँ दे और परिवारसहित मेरी पूजा करके गुरुस्वरूप आचार्यको धन तथा भाई-बस्तुओंको अभिलिष्ट वस्तुओंसे सन्तुष्ट करे। याचकोंको जड़ (सुवर्ण, गृह एवं भू-सम्पत्ति) तथा चेतन (गौ आदि) वैभव प्रदान करे॥ १०—१४॥

स्थावर-जंगम सभी जीवोंको यत्नपूर्वक सन्तुष्ट करके एक गढ़देमें सुवर्ण तथा नौ प्रकारके रत्न भरकर सद्योजातादि* वैदिक मन्त्रोंका उच्चारण करके परम कल्याणकारी महादेवजीका ध्यान करे। तत्पश्चात् नादधोषसे युक्त महामन्त्र औंकारका उच्चारण करके उक्त गढ़देमें शिवलिंगकी स्थापना करके उसे पीठसे संयुक्त करे। इस प्रकार पीठयुक्त लिंगकी स्थापना करके उसे नित्य लेप (दीर्घकालतक टिके रहनेवाले मसाले)-से जोड़कर स्थिर करे॥ १५—१७॥

इसी प्रकार वहाँ पंचाक्षर मन्त्रसे परम सुन्दर वेर (मूर्ति)-की भी स्थापना करनी चाहिये (सारांश यह कि भूमि-संस्कार आदिकी सारी विधि जैसी लिंगप्रतिष्ठाके लिये कही गयी है, वैसो ही वेर (मूर्ति)-प्रतिष्ठाके लिये भी समझनी चाहिये। अन्तर इतना ही है कि लिंगप्रतिष्ठाके लिये प्रणवमन्त्रके उच्चारणका विधान है, परंतु वेरकी प्रतिष्ठा पंचाक्षरमन्त्रसे करनी चाहिये)। जहाँ लिंगकी प्रतिष्ठा हुई है, वहाँ भी उत्सवके लिये और बाहर सवारी निकालने आदिके निमित्त वेर (मूर्ति)-को रखना आवश्यक है॥ १८॥

वेरको बाहरसे भी लिया जा सकता है। उसे गुरुजनोंसे ग्रहण करे। बाह्य वेर वही लेनेयोग्य है, जो साधुपुरुषोंद्वारा पूजित हो। इस प्रकार लिंगमें और वेरमें भी की हुई महादेवजीकी पूजा शिवपद प्रदान करनेवाली होती है। स्थावर और जंगमके भेदसे लिंग भी दो प्रकारका कहा गया है। वृक्ष, लता आदिको स्थावर लिंग कहते हैं और

कृमि-कीट आदिको जंगम लिंग। सौंचने आदिके द्वारा स्थावर लिंगकी सेवा करनी चाहिये और जंगम लिंगको आहार एवं जल आदि देकर तुप्त करना उचित है। उन स्थावर-जंगम जीवोंको सुख पहुँचनेमें अनुरूप होना भगवान् शिवका पूजन है—ऐसा विद्वान् पुरुष मानते हैं। [इस प्रकार चराचर जीवोंको ही भगवान् शंकरके प्रतीक मानकर उनका पूजन करना चाहिये]॥ १९—२१½॥

सभी पीठ पराप्रकृति जगद्बाका स्वरूप हैं और समस्त शिवलिंग चैतन्यस्वरूप हैं। जैसे भगवान् शंकर देवी पावतीको गोदमें बिठाकर विराजते हैं, उसी प्रकार यह शिवलिंग सदा पीठके साथ ही विराजमान होता है॥ २२—२३॥

इस तरह महालिंगकी स्थापना करके विविध उपचारोंद्वारा उसका पूजन करे। अपनी शक्तिके अनुसार नित्य पूजा करनी चाहिये तथा देवालयके पास ध्वजारोपण आदि करना चाहिये। इस प्रकार साक्षात् शिवका पद प्रदान करनेवाले लिंगकी स्थापना करे अथवा चर लिंगमें षोडशोपचारोंद्वारा यथोचित रीतिसे क्रमशः पूजन करे; यह पूजन भी शिवपद प्रदान करनेवाला है। आवाहन, आसन, अर्ध्य, पादा, पाद्यांग आचमन, अभ्यंगपूर्वक स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल-समर्पण, नीराजन, नमस्कार और विसर्जन—ये सोलह उपचार हैं। अथवा अर्ध्यसे लेकर नैवेद्यतक विधिवत् पूजन करे। अभिषेक, नैवेद्य, नमस्कार और तर्पण—ये सब यथाशक्ति नित्य करे। इस तरह किया हुआ शिवका पूजन शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला होता है॥ २४—२९॥

अथवा किसी मनुष्यके द्वारा स्थापित शिवलिंगमें, ऋषियोंद्वारा स्थापित शिवलिंगमें, देवताओंद्वारा स्थापित शिवलिंगमें, अपने-आप प्रकट हुए स्वयम्भूलिंगमें तथा अपने द्वारा नूतन स्थापित हुए शिवलिंगमें भी उपचार-समर्पणपूर्वक जैसे-तैसे पूजन करनेसे या पूजनकी सामग्री

* ३५ सद्योजातं प्रपश्यामि सद्योजातय वै नमो नमः। भवे भवे नातिभवे भवस्व भावोद्वाय नमः॥

३५ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः। श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः। कालाय नमः। कलचिकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलप्रसन्नाय नमः। सर्वभूतप्रदाय नमो मनोन्मनाय नमः॥

३५ अमोरभ्योऽथ योरेषो योरोत्तरेष्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु लङ्घणेभ्यः॥

३५ तत्पुरुषाय विचारे महादेवाय धीमहि। वनो रुद्रः प्रचोदयात्॥

३५ इशानः। सर्वविद्यानामीश्वरः। सर्वभूतानां व्रायाधिपतिर्विद्वाह्या। इधिपतिर्विद्वाह्या शिवो मे असु सदा शिवोम्॥

देनेसे भी मनुष्य ऊपर जो कुछ कहा गया है, वह सारा फल प्राप्त कर लेता है। क्रमशः परिक्रमा और नमस्कार करनेसे भी शिवलिंग शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला होता है। यदि नियमपूर्वक शिवलिंगका दर्शनमात्र कर लिया जाय तो वह भी कल्प्याणप्राप्त होता है। मिट्टी, आटा, गायके गोबर, फूल, कनेरपूष्य, फल, गुड़, मखबन, भस्म अथवा अन्नसे भी अपनी रुचिके अनुसार शिवलिंग बनाकर तदनुसार उसका पूजन करे॥ ३०—३३॥

कुछ लोग हाथके आँगूठे आदिपर भी पूजा करना चाहते हैं। लिंगका निर्माण कहीं भी करनेमें किसी प्रकारका निषेध नहीं है। भगवान् शिव सर्वत्र ही भक्तके प्रयत्नके अनुसार फल प्रदान कर देते हैं। अथवा ग्राहापूर्वक शिवभक्तको शिवलिंगका दान या लिंगके मूल्यका दान करनेसे भी शिवलोककी प्राप्ति होती है॥ ३४—३५ १/२॥

अथवा प्रतिदिन दस हजार प्रणवमन्त्रका जप करे अथवा दोनों सन्ध्याओंके समय एक-एक हजार प्रणवका जप किया करे। यह क्रम भी शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला है—ऐसा जानना चाहिये। जपकालमें मकारान्त प्रणवका उच्चारण मनकी शुद्धि करनेवाला होता है। समाधिमें मानसिक जपका विधान है तथा अन्य सब समय उपांशु* जप ही करना चाहिये। नाद और बिन्दुसे युक्त औंकारके उच्चारणको विद्वान् पुरुष समानप्रणव कहते हैं। यदि प्रतिदिन आदरपूर्वक दस हजार पंचाक्षर मन्त्रका जप किया जाय अथवा दोनों सन्ध्याओंके समय एक-एक हजारका ही जप किया जाय तो उसे शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला समझना चाहिये॥ ३६—३९॥

ब्राह्मणोंके लिये आदिमें प्रणवसे युक्त पंचाक्षरमन्त्र अच्छा बताया गया है। फलकी प्राप्तिके लिये दीक्षापूर्वक गुरुसे मन्त्र ग्रहण करना चाहिये। कलशसे किया हुआ स्नान, मन्त्रकी दीक्षा, मातुकाओंका न्यास, सत्यसे पवित्र अन्तःकरणवाला ब्राह्मण तथा ज्ञानी गुरु—इन सबको उत्तम माना गया है॥ ४०—४१॥

द्विजोंके लिये 'नमः शिवाय' के उच्चारणका

विधान है। द्विजेतरोंके लिये अन्तमें नमः—पदके प्रयोगकी विधि है अर्थात् वे 'शिवाय नमः' इस मन्त्रका उच्चारण करें। स्त्रियोंके लिये भी कहीं-कहीं विधिपूर्वक अन्तमें नमः जोड़कर उच्चारणका ही विधान है अर्थात् कोई-कोई ऋषि ब्राह्मणकी स्त्रियोंके लिये नमःपूर्वक शिवायके जपकी अनुमति देते हैं अर्थात् वे 'नमः शिवाय' का जप करें। पंचाक्षर-मन्त्रका पाँच करोड़ जप करके मनुष्य भगवान् सदाशिवके समान हो जाता है। एक, दो, तीन अथवा चार करोड़का जप करनेसे क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा महेश्वरका पद प्राप्त होता है अथवा मन्त्रमें जितने अक्षर हैं, उनका पृथक्-पृथक् एक-एक लाख जप करे अथवा समस्त अक्षरोंका एक साथ ही जितने अक्षर हों, उतने लाख जप करे। इस तरहके जपको शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला समझना चाहिये। यदि एक हजार दिनोंमें प्रतिदिन एक सहस्र जपके क्रमसे पंचाक्षर-मन्त्रका दस लाख जप पूरा कर लिया जाय और प्रतिदिन ब्राह्मण-भोजन कराया जाय तो उस मन्त्रसे अभीष्ट कार्यकी सिद्धि होती है॥ ४२—४५ १/२॥

ब्राह्मणको चाहिये कि वह प्रतिदिन प्रातःकाल एक हजार आठ बार गायत्रीका जप करे। ऐसा होनेपर गायत्री क्रमशः शिवका पद प्रदान करनेवाली होती है। वेदमन्त्रों और वैदिक सूक्तोंका भी नियमपूर्वक जप करना चाहिये॥ ४६—४७॥

एकाक्षर मन्त्र दस हजार, दशार्ण मन्त्र एक हजार, सौसे कम अक्षरवाले मन्त्र एक सौ और उससे अधिक अक्षरवाले मन्त्र यथाशक्ति एकसे अधिक बार जपने चाहिये॥ ४८॥

वेदोंके पारायणको भी शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला जानना चाहिये। अन्यान्य जो बहुत-से मन्त्र हैं, उनका भी जितने अक्षर हों, उतने लाख जप करना चाहिये॥ ४९॥

एकाक्षर मन्त्रोंको उसी प्रकार करोड़की संख्यामें जपना चाहिये। अधिक अक्षरवाले मन्त्र हजारकी संख्यामें भक्तिपूर्वक जपने चाहिये॥ ५०॥

इस प्रकार जो यथाशक्ति जप करता है, वह

* मन्त्राक्षरोंका इन्हें धीमे स्वरमें उच्चारण करे कि उसे दूसरा कोई सुन न सके, ऐसे जपको उपांशु कहते हैं।

क्रमशः: शिवपद प्राप्त कर लेता है। अपनी रुचिके अनुसार किसी एक मन्त्रको अपनाकर मृत्युपर्यन्त प्रतिदिन उसका जप करना चाहिये अथवा 'ओम् (ॐ)' इस मन्त्रका प्रतिदिन एक सहस्र जप करना चाहिये। ऐसा करनेपर भगवान् शिवकी आज्ञासे सम्पूर्ण मनोरथोंकी सिद्धि होती है ॥ ५१३/२ ॥

जो मनुष्य भगवान् शिवके लिये फुलबाढ़ी या बगीचे आदि लगाता है तथा शिवके सेवाकार्यके लिये मन्दिरमें झाड़ने-बुहारने आदिकी व्यवस्था करता है, वह इस पुण्यकर्मको करके शिवपद प्राप्त कर लेता है। भगवान् शिवके जो [काशी आदि] क्षेत्र हैं, उनमें भक्तिपूर्वक नित्य निवास करे। वे जड, चेतन सभीको भोग और मोक्ष देनेवाले होते हैं। अतः विद्वान् पुरुषको भगवान् शिवके क्षेत्रमें मृत्युपर्यन्त निवास करना चाहिये ॥ ५२-५४ ॥

मनुष्योद्धारा स्थापित शिवलिंगसे चारों ओर सौ हाथतक पुण्यक्षेत्र कहा गया है तथा ऋषियोद्धारा स्थापित शिवलिंगके चारों ओर एक हजार हाथतक पुण्यक्षेत्र होता है। इसी प्रकार देवताओंद्वारा स्थापित शिवलिंगके चारों ओर भी एक हजार हाथतक पुण्यक्षेत्र समझना चाहिये। स्वयम्भू लिंगके चारों ओर तो एक हजार धनुष (चार हजार हाथ)-तक पुण्यक्षेत्र होता है ॥ ५५-५६ ॥

पुण्यक्षेत्रमें रित्यत बावड़ी, कुआँ और पोखरे आदिको शिवगंगा समझना चाहिये—भगवान् शिवका ऐसा ही वचन है। वहाँ स्नान, दान और जप करके मनुष्य भगवान् शिवको प्राप्त कर लेता है। अतः मृत्युपर्यन्त शिवके क्षेत्रका आश्रय लेकर रहना चाहिये। जो शिवके क्षेत्रमें अपने किसी मृत-सम्बन्धीका दाह, दशाह, मासिक श्राद्ध, सपिण्डीकरण अथवा वार्षिक श्राद्ध करता है अथवा कभी भी शिवके क्षेत्रमें अपने पितरोंको पिण्ड देता है, वह तत्काल सब पापोंसे मुक्त हो जाता है और अन्तमें शिवपद पाता है? अथवा शिवके क्षेत्रमें सात, पाँच, तीन या एक ही रात निवास कर ले। ऐसा करनेसे

// इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें शिवलिंगकी पूजादिका वर्णन नामक ग्यारहवाँ अध्याय यूनियन हुआ ॥ १ ॥

भी क्रमशः: शिवपदकी प्राप्ति होती है ॥ ५७-६०१/२ ॥
लोकमें अपने-अपने वर्णके अनुरूप सदाचारका पालन करनेसे भी मनुष्य शिवपदको प्राप्त कर लेता है। वर्णानुकूल आचरणसे तथा भक्तिभावसे वह अपने सत्कर्मका अतिशय फल पाता है, कामनापूर्वक किये हुए अपने कर्मके अभीष्ट फलको शीघ्र ही पा लेता है। निष्कामभावसे किया हुआ सारा कर्म साक्षात् शिवपदकी प्राप्ति करनेवाला होता है ॥ ६१-६२१/२ ॥

दिनके तीन विभाग होते हैं—प्रातः, मध्याह्न और सायाह्न। इन तीनोंमें क्रमशः एक-एक प्रकारके कर्मका सम्पादन किया जाता है। प्रातःकालको शास्त्रविहित नित्यकर्मके अनुष्ठानका समय जानना चाहिये। मध्याह्नकाल सकाम-कर्मके लिये उपयोगी है तथा सायंकाल शान्ति-कर्मके लिये उपयुक्त है—ऐसा जानना चाहिये। इसी प्रकार रात्रिमें भी समयका विभाजन किया गया है। रातके चार प्रहरोंमें जो बीचके दो प्रहर हैं, उन्हें निशीथकाल कहा गया है। विशेषतः उस कालमें की हुई भगवान् शिवकी पूजा अभीष्ट फलको देनेवाली होती है—ऐसा जानकर कर्म करनेवाला मनुष्य यथोक्त फलका भागी होता है। विशेषतः कलियुगमें कर्मसे ही फलकी सिद्धि होती है। अपने-अपने अधिकारके अनुसार ऊपर कहे गये किसी भी कर्मके द्वारा शिवाराधन करनेवाला पुरुष यदि सदाचारी है और पापसे डरता है तो वह उन-उन कर्मोंका पूरा-पूरा फल अवश्य प्राप्त कर लेता है ॥ ६३-६७ ॥

ऋषिगण बोले—हे सूतजी! अब आप हमें पुण्यक्षेत्र बताइये, जिनका आश्रय लेकर सभी स्त्री-पुरुष शिवपद प्राप्त कर लें। हे सूतजी! हे योगिवरोंमें श्रेष्ठ! शिवक्षेत्रों तथा शैवागमों (शिवविषयक शास्त्रों)-का भी वर्णन कीजिये ॥ ६८३/२ ॥

सूतजी बोले—[हे ऋषियो!] सभी क्षेत्रों और आगमोंका वर्णन श्रद्धापूर्वक सुनिये ॥ ६९ ॥

बारहवाँ अध्याय

मोक्षदायक पुण्यक्षेत्रोंका वर्णन, कालविशेषमें विभिन्न नदियोंके जलमें स्नानके

उत्तम फलका निर्देश तथा तीर्थोंमें पापसे बचे रहनेकी चेतावनी

सूतजी बोले—हे बुद्धिमान् महर्षियो! मोक्षदायक शिवक्षेत्रोंका वर्णन सुनिये। तत्पश्चात् मैं लोकरक्षाके लिये शिवसम्बन्धी आगमोंका वर्णन करूँगा। पर्वत, वन और काननोंसहित इस पृथ्वीका विस्तार पचास करोड़ योजन है। भगवान् शिवकी आज्ञासे पृथ्वी सम्पूर्ण जगत्को धारण करके स्थित है। भगवान् शिवने भूतलपर विभिन्न स्थानोंमें वहाँके निवासियोंको कृपापूर्वक मोक्ष देनेके लिये शिवक्षेत्रका निर्माण किया है ॥ १—३ ॥

कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जिन्हें देवताओं तथा ऋषियोंने अपना वासस्थान बनाकर अनुगृहीत किया है। इसीलिये उनमें तीर्थत्व प्रकट हो गया है तथा अन्य बहुत-से तीर्थक्षेत्र ऐसे हैं, जो लोकोंकी रक्षाके लिये स्वयं प्रादुर्भूत हुए हैं। तीर्थ और क्षेत्रमें जानेपर मनुष्यको सदा स्नान, दान और जप आदि करना चाहिये; अन्यथा वह रोग, दरिद्रता तथा मृक्ता आदि दोषोंका भागी होता है। जो मनुष्य इस भारतवर्षके भीतर स्वयम्भू तीर्थोंमें वास करके मरता है, उसे पुनः मनुष्ययोनि ही प्राप्त होती है। हे ब्राह्मणो! पुण्यक्षेत्रमें पापकर्म किया जाय तो वह और भी दृढ़ हो जाता है। अतः पुण्यक्षेत्रमें निवास करते समय थोड़ा-सा भी पाप न करे। जिस किसी भी उपायसे मनुष्यको पुण्यक्षेत्रमें वास करना चाहिये ॥ ४—७३/२ ॥

सिन्धु और गंगा नदीके तटपर बहुत-से पुण्यक्षेत्र हैं। सरस्वती नदी परम पवित्र और साठ मुखवाली कही गयी है अर्थात् उसकी साठ धाराएँ हैं। जो विद्वान् पुरुष सरस्वतीकी उन-उन धाराओंके तटपर निवास करता है, वह क्रमशः ब्रह्मपदोंका पा लेता है। हिमालय पर्वतसे निकली हुई पुण्यसिलिला गंगा सौ मुखवाली नदी है, उसके तटपर काशी आदि अनेक पुण्यक्षेत्र हैं। वहाँ मकरराशिके सूर्य होनेपर गंगाकी तटभूमि पहलेसे भी अधिक प्रशस्त एवं पुण्यदायक हो जाती है। शोणभद्र नदकी दस धाराएँ हैं, वह बृहस्पतिके मकरराशिमें

आनेपर अत्यन्त पवित्र तथा अभीष्ट फल देनेवाला हो जाता है। उस समय वहाँ स्नान और उपवास करनेसे विनायकपदकी प्राप्ति होती है। पुण्यसिलिला महानदी नर्मदाके चौबीस मुख (स्नोत) हैं। उसमें स्नान तथा उसके तटपर निवास करनेसे मनुष्यको वैष्णवपदकी प्राप्ति होती है। तमसा नदीके बारह तथा रेवाके दस मुख हैं। परम पुण्यमयी गोदावरीके इक्कीस मुख बताये गये हैं। वह ब्रह्महत्या तथा गोवधके पापका भी नाश करनेवाली एवं रुद्रलोक देनेवाली है। कृष्णवेणी नदीका जल बड़ा पवित्र है। वह नदी समस्त पापोंका नाश करनेवाली है। उसके अठारह मुख बताये गये हैं तथा वह विष्णुलोक प्रदान करनेवाली है। तुंगभद्राके दस मुख हैं, वह ब्रह्मलोक देनेवाली है। पुण्यसिलिला सुवर्णमुखीरीके नौ मुख कहे गये हैं। ब्रह्मलोकसे लौटे हुए जीव उसीके तटपर जन्म लेते हैं। सरस्वती, पम्मा, कन्याकुमारी तथा शुभकारक श्वेत नदी—ये सभी पुण्यक्षेत्र हैं। इनके तटपर निवास करनेसे इन्द्रलोककी प्राप्ति होती है। सद्य पर्वतसे निकली हुई महानदी कावेरी परम पुण्यमयी है। उसके सत्राइस मुख बताये गये हैं। वह सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाली है। उसके तट स्वर्गलोककी प्राप्ति करनेवाले तथा ब्रह्मा और विष्णुका पद देनेवाले हैं। कावेरीके जो तट शैवक्षेत्रके अन्तर्गत हैं, वे अभीष्ट फल देनेके साथ ही शिवलोक प्रदान करनेवाले भी हैं ॥ ८—१९३/२ ॥

नैपियारण्य तथा बद्रिकाश्रममें सूर्य और बृहस्पतिके घेषणाशिमें आनेपर यदि स्नान करे तो उस समय वहाँ किये हुए स्नान-पूजन आदिको ब्रह्मलोककी प्राप्ति करनेवाला जानना चाहिये। सिंह और कर्कराशिमें सूर्यकी संकालित होनेपर सिन्धुनदीमें किया जा उआ स्नान तथा केदारतीर्थके जलका पान एवं स्नान ज्ञानदायक माना गया है ॥ २०—२१३/२ ॥

जब बृहस्पति सिंहराशिमें स्थित हों, उस समय

सिंहकी संक्रान्तिसे युक्त भाद्रपदमासमें यदि गोदावरीके जलमें स्नान किया जाय, तो वह शिवलोककी प्राप्ति करनेवाला होता है—ऐसा पूर्वकालमें स्वयं भगवान् शिवने कहा था। जब सूर्य और बृहस्पति कन्याराशिमें स्थित हों, तब यमुना और शोणभद्रमें स्नान करे। वह स्नान धर्मराज तथा गणेशजीके लोकमें महान् भोग प्रदान करनेवाला होता है—यह महिंश्योंकी मान्यता है। जब सूर्य और बृहस्पति तुलाराशिमें स्थित हों, उस समय कावेरी नदीमें स्नान करे। वह स्नान भगवान् विष्णुके वचनकी महिमासे सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाला माना गया है। जब सूर्य और बृहस्पति वृश्चिक राशिपर आ जायें, तब मार्गशीर्षके महीनेमें नर्मदामें स्नान करनेसे विष्णुलोककी प्राप्ति होती है। सूर्य और बृहस्पतिके धनुराशिमें स्थित होनेपर सुवर्णमुखरी नदीमें किया हुआ स्नान शिवलोक प्रदान करनेवाला होता है, यह ब्रह्माजीका वचन है। जब सूर्य और बृहस्पति मकरराशिमें स्थित हों, उस समय माघमासमें गंगाजीके जलमें स्नान करना चाहिये। ब्रह्माजीका कथन है कि वह स्नान शिवलोककी प्राप्ति करनेवाला होता है। शिवलोकके पश्चात् ब्रह्म और विष्णुके स्थानोंमें सुख भोगकर अन्तमें मनुष्यको ज्ञानकी प्राप्ति हो जाती है ॥ २२—२८ ॥

माघमासमें तथा सूर्यके कुम्भराशिमें स्थित होनेपर फलगुनमासमें गंगाजीके तटपर किया हुआ श्राद्ध, पिण्डदान अथवा तिलोदकदान पिता और नाना दोनों कुलोंके पितरोंकी अनेकों पीड़ियोंका उद्धार करनेवाला माना गया है। सूर्य और बृहस्पति जब मीनराशिमें स्थित हों, तब कृष्णवेणी नदीमें किये गये स्नानकी ऋषियोंने प्रशंसा की है। उन-उन महीनोंमें पूर्वोक्त तीर्थोंमें किया हुआ स्नान इन्द्रपटकी प्राप्ति करनेवाला होता है। विद्वान् पुरुष गंगा अथवा कावेरी नदीका आश्रय लेकर तीर्थवास करे। ऐसा करनेसे उस समयमें किये हुए पापका निश्चय ही नाश हो जाता है ॥ २९—३१ ॥

स्त्रलोक प्रदान करनेवाले बहुत—से क्षेत्र हैं। ताप्रपर्णी

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्वैश्वरतीहितामें शिवक्षेत्रका वर्णन नामक

बारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ २ ॥

और वेगवती—ये दोनों नदियाँ ब्रह्मलोककी प्राप्तिरूप फल देनेवाली हैं। उन दोनोंके तटपर अनेक स्वर्गदायक क्षेत्र हैं। उन दोनोंके मध्यमें बहुत—से पुण्यप्रद क्षेत्र हैं। वहाँ निवास करनेवाला विद्वान् पुरुष वैसे फलका भागी होता है। सदाचार, उत्तम वृत्ति तथा सद्ग्रावनाके साथ मनमें दयाभाव रखते हुए विद्वान् पुरुषको तीर्थमें निवास करना चाहिये, अन्यथा उसका फल नहीं मिलता। पुण्यक्षेत्रमें किया हुआ थोड़ा-सा पुण्य भी अनेक प्रकारसे वृद्धिको प्राप्त होता है तथा वहाँ किया हुआ छोटा-सा पाप भी महान् हो जाता है। यदि पुण्यक्षेत्रमें रहकर ही जीवन बितानेका निश्चय हो, तो उस पुण्यसंकल्पसे उसका पहलेका सारा पाप तत्काल नष्ट हो जायगा; क्योंकि पुण्यको ऐश्वर्यदायक कहा गया है। हे ब्राह्मणो ! तीर्थवासजनित पुण्य कायिक, वाचिक और मानसिक सारे पापोंका नाश कर देता है। तीर्थमें किया हुआ मानसिक पाप बत्रलेप हो जाता है। वह कई कल्पोंतक पीछा नहीं छोड़ता है ॥ ३२—३८ ॥

वैसा पाप केवल ध्यानसे ही नष्ट होता है, अन्यथा नष्ट नहीं होता। वाचिक पाप जपसे तथा कायिक पाप शरीरको सुखाने—जैसे कठोर तपसे नष्ट होता है। धनोपार्जनमें हुए पाप दानसे नष्ट होते हैं अन्यथा करोड़ों कल्पोंमें भी उनका नाश नहीं होता। कभी—कभी अतिशय मात्रामें बड़े पापोंसे पुण्य भी नष्ट हो जाते हैं। पुण्य और पाप दोनोंका वीजांश, वृद्धयंश और भोगांश होता है। वीजांशका नाश ज्ञानसे, वृद्धयंशका ऊपर लिखे प्रकारसे तथा भोगांशका नाश भोगनेसे होता है। अन्य किसी प्रकारसे करोड़ों पुण्य करके भी पापके भोगांश नहीं मिट सकते। पाप-बीजके अकुरित हो जानेपर उसका अंश नष्ट होनेपर भी शेष पाप भोगना ही पड़ता है। देवताओंकी पूजा, ब्राह्मणोंको दान तथा अधिक तप करनेसे समय पाकर पापभोग मनुष्योंके सहनेयोग्य हो जाते हैं। इसलिये सुख चाहनेवाले व्यक्तिको पापोंसे बचकर ही तीर्थवास करना चाहिये ॥ ३९—४३ ॥

तेरहवाँ अध्याय

सदाचार, शौचाचार, स्नान, भस्मधारण, सन्ध्यावन्दन, प्रणव-जप, गायत्री-जप, दान, न्यायतः धनोपार्जन तथा अरिन्होत्र आदिकी विधि एवं उनकी महिमाका वर्णन

ऋषिगण बोले—[हे सूतजी!] अब आप शीघ्र ही हमें वह सदाचार सुनाइये, जिससे विद्वान् पुरुष पुण्यलोकोंपर विजय प्राप्त कर लेता है। स्वर्ग प्रदान करनेवाले धर्ममय आचारों तथा नरकका कष्ट देनेवाले अधर्ममय आचारोंका भी वर्णन कीजिये ॥ १ ॥

सूतजी बोले—[हे ऋषियो!] सदाचारका पालन करनेवाला विद्वान् ब्राह्मण ही वास्तवमें 'ब्राह्मण' नाम धारण करनेका अधिकारी है। जो केवल वेदोक्त आचारका पालन करनेवाला है, उस ब्राह्मणकी 'विप्र' संज्ञा होती है। सदाचार, वेदाचार तथा विद्या—इनमेंसे एक-एक गुणसे ही युक्त होनेपर उसे 'द्विज' कहते हैं। जिसमें स्वल्पमात्रामें ही आचारका पालन देखा जाता है, जिसने वेदाध्ययन भी बहुत कम किया है तथा जो राजाका सेवक (पुरोहित, मन्त्री आदि) है, उसे 'क्षत्रियब्राह्मण' कहते हैं। जो ब्राह्मण कृपि तथा वाणिज्य कर्म करनेवाला है और कुछ-कुछ ब्राह्मणोंचित आचारका भी पालन करता है, वह 'वैश्यब्राह्मण' है तथा जो स्वयं ही खेत जोता (हल चलाता) है, उसे 'शूद्रब्राह्मण' कहा गया है। जो दूसरोंके दोष देखनेवाला और परदोही है, उसे 'चाण्डालद्विज' कहते हैं ॥ २—४ ॥

इसी तरह क्षत्रियोंमें भी जो पृथ्वीका पालन करता है, वह राजा है। दूसरे लोग राजत्वहीन क्षत्रिय माने गये हैं। वैश्योंमें भी जो धान्य आदि वस्तुओंका क्रय-विक्रय करता है, वह वैश्य है; दूसरोंको वणिक कहते हैं। जो ब्राह्मणों, क्षत्रियों तथा वैश्योंकी सेवामें लगा रहता है, वह शूद्र कहलाता है। जो शूद्र हल जोतनेका काम करता है, उसे वृश्ल समझना चाहिये। शेष शूद्र दस्यु कहलाते हैं ॥ ५—६ ॥

इन सभी वर्णोंके मनुष्योंको चाहिये कि वे उपःकालमें उठकर पूर्वाभिमुख हो सबसे पहले देवताओंका, फिर धर्मका, पुनः अर्थका, तदनन्तर उसकी प्राप्तिके लिये

उठाये जानेवाले क्लेशोंका तथा आय और व्ययका भी चिन्तन करें ॥ ७ ॥

प्रातःकाल उठकर [पूर्व, अग्निकोण, दक्षिण आदि] आठ दिशाओंकी ओर मुख करके बैठनेपर क्रमशः आयु, द्वेष, मरण, पाप, भाव्य, व्याधि, पुष्टि और शक्ति प्राप्त होती है ॥ ८ ॥

रातके पिछले पहरको उपःकाल जानना चाहिये। उस अन्तिम पहरका जो आधा या मध्यभाग है, उसे सन्धि कहते हैं। उस सन्धिकालमें उठकर द्विजको मल-मूत्र आदिका त्याग करना चाहिये। घरसे दूर जाकर बाहरसे अपने शरीरको ढके रखकर दिनमें उत्तराभिमुख बैठकर मल-मूत्रका त्याग करे। यदि उत्तराभिमुख बैठनेमें कोई रुक्षावट हो तो दूसरी दिशाकी ओर मुख करके बैठे। जल, अग्नि, ब्राह्मण आदि तथा देवताओंका सामना बचाकर बैठे। बायें हाथसे उपस्थितोंके ढाँककर तथा दाहने हाथसे मुखको ढककर मलत्याग करे और उठनेपर उस मलको न देखे। तदनन्तर जलाशयसे बाहर निकाले हुए जलसे ही गुदाकी शुद्धि करे; अथवा देवताओं, पितरों तथा ऋषियोंके तीर्थोंमें उठरे बिना ही प्राप्त हुए जलसे शुद्धि करनी चाहिये। गुदामें सात, पाँच या तीन बार मिट्टीसे उसे धोकर शुद्ध करे। लिंगमें ककोड़ेके फलके बराबर मिट्टी सेकर लगाये और उसे धो दे। परंतु गुदामें लगानेके लिये एक पसर मिट्टीकी आवश्यकता होती है। लिंग और गुदाकी शुद्धिके पश्चात् उठकर अन्यत्र जाय और हाथ-पैरोंकी शुद्धि करके आठ बार कुल्ला करे ॥ ९—१४ ॥

जिस किसी वृक्षके पत्तेसे अथवा उसके पतले काष्ठसे जलके बाहर दातुन करना चाहये। उस समय तर्जनी अङ्गुलीका उपयोग न करे। यह दनशुद्धिका विधान बताया गया है। तदनन्तर जल-सम्बन्धी देवताओंको नमस्कार करके मन्त्रपाठ करते हुए स्नान करे। यदि

कण्ठतक या कमरतक पानीमें खड़े होनेकी शक्ति न हो तो घटनेतक जलमें खड़ा होकर अपने ऊपर जल छिड़कर मन्त्रोच्चारणपूर्वक स्नानकार्य सम्पन्न करे। विद्वान् पुरुषको चाहिये कि वहाँ तीर्थजलसे देवता आदिका स्नानांग तर्पण भी करे॥ १५—१७ ॥

इसके बाद धौतवस्त्र लेकर पाँच कच्छ करके उसे धारण करे। साथ ही कोई उत्तरीय भी धारण कर ले; क्योंकि सन्ध्या-वन्दन आदि सभी कर्मोंमें उसकी आवश्यकता होती है। नदी आदि तीर्थोंमें स्नान करनेपर स्नान-सम्बन्धी उत्तरे हुए वस्त्रको वहाँ न धोये। स्नानके पश्चात् विद्वान् पुरुष उस वस्त्रको बावड़ीमें, कुएँके पास अथवा घर आदिमें ले जाय और वहाँ पत्थरपर, लकड़ी आदिपर, जलमें या स्थलमें अच्छी तरह धोकर उस वस्त्रको निचोड़े। हे द्विजो! वस्त्रको निचोड़नेसे जो जल गिरता है, वह पितरोंकी तृप्तिके लिये होता है॥ १८—२० ॥

इसके बाद जाबालि-उपनिषद्में बताये गये [अग्निरिति] मन्त्रसे भस्म लेकर उसके द्वारा त्रिपुण्ड्र लगाये।* इस विधिका पालन न किया जाय, इसके पूर्व ही यदि जलमें भस्म गिर जाय तो कर्ता नरकमें जाता है। 'आपो हि छा' इस मन्त्रसे पाप-शान्तिके लिये सिरपर जल छिड़के तथा 'यस्य क्षयाय'—इस मन्त्रको पढ़कर पैरपर जल छिड़के; इसे सन्धिप्रोक्षण कहते हैं। 'आपो हि छा' इत्यादि मन्त्रमें तीन ऋचाएँ हैं और प्रत्येक ऋचामें गायत्री छन्दके तीन-तीन चरण हैं। इनमेंसे प्रथम ऋचाके तीन चरणोंका पाठ करते हुए क्रमशः पैर, मस्तक और हृदयमें जल छिड़के; दूसरी ऋचाके तीन चरणोंको पढ़कर क्रमशः मस्तक, हृदय और पैरमें जल

छिड़के तथा तीसरी ऋचाके तीन चरणोंका पाठ करते हुए क्रमशः हृदय, पैर और मस्तकका जलसे प्रोक्षण करे—इसे विद्वान् पुरुष मन्त्रस्नान मानते हैं॥ २१—२३ ॥

किसी अपवित्र वस्तुसे किंचित् स्पर्श हो जानेपर, अपना स्वास्थ्य ठीक न रहनेपर, राजभय या राष्ट्रभय उपस्थित होनेपर तथा यात्राकालमें जलकी उपलब्धि न होनेकी विवशता आ जानेपर मन्त्रस्नान करना चाहिये। प्रातःकाल [सूर्यश्च मा मन्युश्च—इस] सूर्यनुवाकसे तथा सायंकाल [अग्निश्च मा मन्युश्च—इस] अग्नि-सम्बन्धी अनुवाकसे जलका आचमन करके पुनः जलसे अपने अंगोंका प्रोक्षण करे। मध्याह्नकालमें भी [आपः पुनर्नु—इस] मन्त्रसे आचमन करके पूर्ववत् प्रोक्षण करना चाहिये॥ २४—२५ ॥

प्रातःकालकी सन्ध्योपासनामें गायत्रीमन्त्रका जप करके तीन बार ऊपरकी ओर सूर्यदेवको अर्थ देना चाहिये। हे ब्राह्मणो! मध्याह्नकालमें गायत्री-मन्त्रके उच्चारणपूर्वक सूर्यको एक ही अर्थ देना चाहिये। फिर सायंकाल आनेपर पश्चिमकी ओर मुख करके बैठ जाय और पृथ्वीपर ही सूर्यके लिये अर्थ दे [ऊपरकी ओर नहीं]। प्रातःकाल और मध्याह्नकालके समय अंजलिमें अर्घ्यजल लेकर अँगुलियोंकी ओरसे सूर्यदेवके लिये अर्थ दे। अँगुलियोंके छिद्रसे ढलते हुए सूर्योंको देखे तथा उनके लिये आत्म-प्रदक्षिणा करके शुद्ध आचमन करे॥ २६—२८ ॥

सायंकालमें सूर्यास्तसे दो घड़ी पहले की हुई सन्ध्या निष्कल होती है; क्योंकि वह सायं सन्ध्याका समय नहीं है। ठीक समयपर सन्ध्या करनी चाहिये—ऐसी शास्त्रकी आज्ञा है। यदि सन्ध्योपासना किये बिना

* जाबालि-उपनिषद्में भस्मधारणकी विधि इस प्रकार कही गयी है—

'ॐ अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म व्योमेति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म' इस मन्त्रसे भस्मको अधिमन्त्रित करे। 'मा नस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोपु मा नो अस्वेषु रीरियः। मा नो चीरान्तु भामिनो वधीर्विष्णनः सदमित्त्वा हवामहे'॥

इत्यादि मन्त्रसे मस्तक, ललाट, वक्षःस्थल और क्षयोंपर त्रिपुण्ड्र करे।

'आयुर्वेदमदनः कश्यपस्य आयुषम्। यदेवेषु आयुषं तनोऽस्तु आयुषम्॥'

तथा—

'त्र्यम्बकं यजामहे सुगम्भिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव वन्धनान्मृत्योर्मृत्यीय मामृतात्।'

—इन दोनों मन्त्रोंको तीन-तीन बार पढ़ते हुए तीन रेखाएँ खांचे।

दिन बीत जाय तो प्रत्येक समयके लिये क्रमशः प्रायश्चित्त करना चाहिये। यदि एक दिन बीते तो प्रत्येक बीते हुए सन्ध्याकालके लिये नित्य-नियमके अतिरिक्त सौ गायत्री-मन्त्रका अधिक जप करे। यदि नित्यकर्मके लुप्त हुए दस दिनसे अधिक बीत जाय तो उसके प्रायश्चित्तरूपमें एक लाख गायत्रीका जप करना चाहिये। यदि एक मासतक नित्यकर्म छूट जाय तो पुनः अपना उपनयनसंस्कार कराये ॥ २९—३० ३/२ ॥

अर्थसिद्धिके लिये ईश, गौरी, कार्तिकेय, विष्णु, ब्रह्मा और यमका तथा ऐसे ही अन्य देवताओंका भी शुद्ध जलसे तर्पण करे। तत्पश्चात् तर्पण कर्मको ब्रह्मार्पण करके शुद्ध आचमन करे। तीर्थके दक्षिण भागमें, प्रशस्त मठमें, मन्त्रालयमें, देवालयमें, घरमें अथवा अन्य किसी नियत स्थानमें आसनपर स्थिरतापूर्वक बैठकर विद्वान् पुरुष अपनी बुद्धिको स्थिर करे और सम्पूर्ण देवताओंको नमस्कार करके पहले प्रणवका जप करनेके पश्चात् गायत्री-मन्त्रकी आवृत्ति करे ॥ ३१—३४ ॥

प्रणवके अ, उ, म् इन तीनों अक्षरोंसे जीव और ब्रह्मकी एकताका प्रतिपादन होता है—इस बातको जानकर प्रणवका जप करना चाहिये। जपकालमें यह भावना करनी चाहिये कि हम तीनों लोकोंकी सुष्टि करनेवाले ब्रह्मा, पालन करनेवाले विष्णु तथा संहार करनेवाले रुद्रकी—जो स्वयंप्रकाश चिन्मय हैं, उपासना करते हैं। यह ब्रह्मस्वरूप आंकार हमारी कर्मन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियोंकी वृत्तियोंको, मनकी वृत्तियोंको तथा बुद्धिवृत्तियोंको सदा भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाले धर्म एवं ज्ञानकी ओर प्रेरित करे। बुद्धिके द्वारा प्रणवके इस अर्थका चिन्तन करता हुआ जो इसका जप करता है, वह निश्चय ही ब्रह्मको प्राप्त कर लेता है। अथवा अर्थानुसन्धानके बिना भी प्रणवका नित्य जप करना चाहिये, इससे ब्राह्मणत्वकी पूर्ति होती है। ब्राह्मणत्वकी पूर्तिके लिये श्रेष्ठ ब्राह्मणको प्रतिदिन प्रातःकाल एक सहस्र गायत्री-मन्त्रका जप करना चाहिये। मध्याह्नकालमें सौ बार और साथेकालमें अद्वैट बार जपकी विधि है। अन्य वर्णके लोगोंको अर्थात् क्षत्रिय और वैश्यको तीनों सन्ध्याओंके समय

यथासाध्य गायत्री-जप करना चाहिये ॥ ३५—३९ ॥

[शरीरके भीतर मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, आज्ञा और सहस्रार—ये छः चक्र हैं।] इनमें मूलाधारसे लेकर सहस्रारतक छहों स्थानोंमें क्रमशः विद्येश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, ईश, जीवात्मा और परमेश्वर स्थित हैं। इन सबमें ब्रह्मबुद्धि करके इनकी एकताका निश्चय करे और वह ब्रह्म मैं है—ऐसी भावनासे युक्त होकर जप करे। उन्हीं विद्येश्वर आदिकी ब्रह्मन्त्र आदिमें तथा इस शरीरसे बाहर भी भावना करे। महत्त्वसे लेकर पंचभूतपर्यन्त तत्त्वोंसे बना हुआ जो शरीर है, ऐसे सहस्रों शरीरोंका एक-एक अजपा गायत्रीके जपसे एक-एकके क्रमसे अतिक्रमण करके जीवको धीर-धीर परमात्मासे संयुक्त करे—यह जपका तत्त्व बताया गया है। सौ अथवा अद्वैट इस मन्त्रोंके जपसे उतने ही शरीरोंका अतिक्रमण होता है। इस प्रकार जो मन्त्रोंका जप है, इसीको आदिक्रमसे वास्तविक जप जाना चाहिये ॥ ४०—४३ ३/२ ॥

एक हजार बार किया हुआ जप ब्रह्मलोक प्रदान करनेवाला होता है—ऐसा जानना चाहिये। सौ बार किया हुआ जप इन्द्रपदीकी प्राप्ति करनेवाला माना गया है। ब्राह्मणेतर पुरुष आत्मरक्षाके लिये जो स्वल्पमात्रामें जप करता है, वह ब्राह्मणके कुलमें जन्म लेता है। इस प्रकार प्रतिदिन सूर्योपस्थान करके उपर्युक्तरूपसे जपका अनुष्ठान करना चाहिये ॥ ४४—४५ ॥

बारह लाख गायत्रीका जप करनेवाला पुरुष पूर्णरूपसे ब्राह्मण कहा गया है। जिस ब्राह्मणने एक लाख गायत्रीका भी जप न किया हो, उसे वैदिक कार्यमें न लगाये। सतर वर्षकी अवस्थातक नियमपालनपूर्वक कार्य करे। इसके बाद गृह त्यागकर संन्यास ले ले। परिद्वाजक या संन्यासी पुरुष नित्य प्रातःकाल बारह हजार प्रणवका जप करे। यदि एक दिन नियमका उल्लंघन हो जाय, तो दूसरे दिन उसके बदलेमें उतना मन्त्र और अधिक जपना चाहिये; इस प्रकार जपको चलानेका प्रयत्न करना चाहिये। यदि क्रमशः एक मास उल्लंघनका व्यतीत हो गया हो तो ढेढ़ लाख जप करके उसका प्रायश्चित्त करना चाहिये। इससे अधिक समयतक

नियमका उल्लंघन हो जाय तो पुनः नये सिरेसे गुरुसे नियम ग्रहण करे। ऐसा करनेसे दोषोंकी शान्ति होती है, अन्यथा रौरव नरकमें जाना पड़ता है ॥ ४६—४९ ॥

जो सकाम भावनासे युक्त गृहस्थ ब्राह्मण है, उसीको धर्म तथा अर्थके लिये यत्न करना चाहिये। मुमुक्षु ब्राह्मणको तो सदा ज्ञानका ही अभ्यास करना चाहिये। धर्मसे अर्थकी प्राप्ति होती है, अर्थसे भोग सुलभ होता है और उस भोगसे वैराग्यकी प्राप्ति होती है। धर्मपूर्वक उपार्जित धनसे जो भोग प्राप्त होता है, उससे एक दिन अवश्य वैराग्यका उदय होता है। धर्मके विपरीत अधर्मसे उपार्जित धनके द्वारा जो भोग प्राप्त होता है, उससे भोगोंके प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है ॥ ५०—५१ ॥

धर्म दो प्रकारका कहा गया है—द्रव्यके द्वारा सम्पादित होनेवाला और शरीरसे किया जानेवाला। द्रव्यधर्म यज्ञ आदिके रूपमें और शरीरधर्म तीर्थ—स्नान आदिके रूपमें पाये जाते हैं। मनुष्य धर्मसे धन पाता है, तपस्यासे उसे द्रव्य रूपकी प्राप्ति होती है। कामनाओंका त्याग करनेवाले पुरुषके अन्तःकरणकी शुद्धि होती है; उस शुद्धिसे ज्ञानका उदय होता है; इसमें संशय नहीं है ॥ ५२—५३ ॥

सत्ययुगा आदिमें तपको ही प्रशस्त कहा गया है, किंतु कलियुगमें द्रव्यसाध्य धर्म अच्छा जाना गया है। सत्ययुगमें ध्यानसे, त्रेतामें तपस्यासे और द्वापरमें यज्ञ करनेसे ज्ञानकी सिद्धि होती है, परंतु कलियुगमें प्रतिमा (भगवद्गिरह)—की पूजासे ज्ञानलाभ होता है ॥ ५४—५५ ॥

जिसका जैसा पुण्य या पाप होता है, उसे वैसा ही फल प्राप्त होता है। द्रव्य, देह अथवा अंगमें न्यूनता, वृद्धि अथवा क्षय आदिके रूपमें वह फल प्रकट होता है ॥ ५६ ॥

अधर्म हिंसा (दुःख)-रूप है और धर्म सुखरूप है। मनुष्य अधर्मसे दुःख पाता है और धर्मसे सुख एवं अभ्युदयका भागी होता है। दुराचारसे दुःख प्राप्त होता है और सदाचारसे सुख। अतः भोग और मोक्षकी सिद्धिके लिये धर्मका उपार्जन करना चाहिये ॥ ५७—५८ ॥

जिसके घरमें कम-से-कम चार मनुष्य हैं, ऐसे कुटुम्बी ब्राह्मणको जो सौ वर्षके लिये जीविका (जीवन-

निर्वाहकी सामग्री) देता है, उसके लिये वह दान ब्रह्मलोककी प्राप्ति करानेवाला होता है। एक हजार चान्द्रायण व्रतका अनुष्ठान ब्रह्मलोकदायक माना गया है। जो क्षत्रिय एक हजार कुटुम्बोंको जीविका और आवास देता है, उसका वह कर्म इन्द्रलोककी प्राप्ति करानेवाला होता है और दस हजार कुटुम्बोंको दिया हुआ आश्रयदान ब्रह्मलोक प्रदान करता है। दाता पुरुष जिस देवताके उद्देश्यसे दान करता है अर्थात् वह दानके द्वारा जिस देवताको प्रसन्न करना चाहता है, उसीका लोक उसे प्राप्त होता है—ऐसा वेदवेत्ता पुरुष कहते हैं। धनहीन पुरुष सदा तपस्याका उपार्जन करे; क्योंकि तपस्या और तीर्थसेवनसे अक्षय सुख पाकर मनुष्य उसका उपभोग करता है ॥ ५९—६२ ॥

अब मैं न्यायतः धनके उपार्जनकी विधि बता रहा हूँ। ब्राह्मणको चाहिये कि वह सदा सावधान रहकर विशुद्ध प्रतिग्रह (दानग्रहण) तथा याजन (यज्ञ करने) आदिसे धनका अर्जन करे। वह इसके लिये कहीं दीनता न दिखाये और न अत्यन्त क्लेशदायक कर्म ही करे। क्षत्रिय बाहुबलसे धनका उपार्जन करे और वैश्य कृषि एवं गोरक्षासे। न्यायोपार्जित धनका दान करनेसे दाताको ज्ञानकी सिद्धि होती है। ज्ञानसिद्धिद्वारा सब पुरुषोंको गुरुकृपासे मोक्षसिद्धि सुलभ होती है। मोक्षसे स्वरूपकी सिद्धि (ब्रह्मरूपसे स्थिति) प्राप्त होती है, जिससे [मुक्त पुरुष] परमानन्दका अनुभव करता है। हे द्विजो! मनुष्योंको यह सब सत्संगसे प्राप्त है ॥ ६३—६४ ॥

गृहस्थाश्रीमीको धन-धान्य आदि सभी वस्तुओंका दान करना चाहिये। अपना हित चाहनेवाले गृहस्थको जिस कालमें जो फल अथवा धान्यादि वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं, उन्हें ब्राह्मणोंको दान करना चाहिये ॥ ६७—६८ ॥

वह तृपा-निवृत्तिके लिये जल तथा क्षुधारूपी रोगकी शान्तिके लिये सदा अन्तका दान करे। खेत, धान्य, कच्चा अन तथा भक्ष्य, भोज्य, लेश्य और चोब्य—ये चार प्रकारके सिद्ध अन दान करने चाहिये। जिसके अन्तको खाकर मनुष्य जबतक कथा-श्रवण आदि सद्धर्मका पालन करता है, उतने समयतक उसके

किये हुए पुण्यफलका आधा भाग दाताको मिल जाता है; इसमें संशय नहीं है ॥ ६९-७० ॥

दान लेनेवाला पुरुष दानमें प्राप्त हुई वस्तुका दान तथा तपस्या करके अपने प्रतिग्रहजनित पापकी शुद्धि करे; अन्यथा उसे रौरव नरकमें गिरना पड़ता है। अपने धनके तीन भाग करे—एक भाग धर्मके लिये, दूसरा भाग वृद्धिके लिये तथा तीसरा भाग अपने उपभोगके लिये। नित्य, नैमित्तिक और काम्य—ये तीनों प्रकारके कर्म धर्मार्थ रखे हुए धनसे करे। साधकों चाहिये कि वह वृद्धिके लिये रखे हुए धनसे ऐसा व्यापार करे, जिससे उस धनकी वृद्धि हो तथा उपभोगके लिये रक्षित धनसे हितकारक, परिमित एवं पवित्र भोग भोगे ॥ ७१-७३ ॥

खेतीसे पैदा किये हुए धनका दसवाँ अंश दान कर दे। इससे पापकी शुद्धि होती है। शेष धनसे धर्म, वृद्धि एवं उपभोग करे, अन्यथा वह रौरव नरकमें पड़ता है अथवा उसकी बुद्धि पापसे परिपूर्ण हो जाती है या खेती ही चौपट हो जाती है। वृद्धिके लिये किये गये व्यापारमें प्राप्त हुए धनका छठा भाग दान कर दे ॥ ७४-७५ ॥

श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको दानमें प्राप्त हुए शुद्ध पदार्थोंका चतुर्थांश दान कर देना चाहिये। उन्हें अकस्मात् प्राप्त हुए धनका तो आधा भाग दान कर ही देना चाहिये। असत्-प्रतिग्रह (दूषित दान) -में प्राप्त सम्पूर्ण पदार्थोंको समुद्रमें फेंक देना चाहिये। अपने भोगकी समृद्धिके लिये ब्राह्मणोंको बुलाकर दान करना चाहिये। किसीके द्वारा

॥ इस प्रकार ग्रीष्मिकमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें सदाचारवर्णन नामक तेरहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १३ ॥

चौदहवाँ अध्याय

अग्नियज्ञ, देवयज्ञ और ब्रह्मयज्ञ आदिका वर्णन, भगवान् शिवके द्वारा सातों वारोंका निर्माण तथा उनमें देवाराधनसे विभिन्न प्रकारके फलोंकी प्राप्तिका कथन

ब्रह्मिगण बोले—हे प्रभो! अग्नियज्ञ, देवयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, गुरुपूजा तथा ब्रह्मतुपितका क्रमशः हमारे समक्ष वर्णन कीजिये ॥ १ ॥

सूतजी बोले—हे महर्षियो! गृहस्थ पुरुष अग्निमें सायंकाल और प्रातःकाल जो चावल आदि द्रव्यकी आहुति

याचना करनेपर अपनी शक्तिके अनुसार सदैव ही सब कुछ देना चाहिये। यदि मार्गे जानेपर [शक्ति रहते हुए] वह पदार्थ न दिया जाय तो दूसरे जन्ममें वह ऋण चुकाना पड़ता है ॥ ७६-७८ ॥

विद्वान्‌को चाहिये कि वह दूसरोंके दोषोंका वर्णन न करे। हे ब्रह्मन्! द्वेषवश दूसरोंके सुने या देखे हुए छिद्रको भी प्रकट न करे। विद्वान् पुरुष ऐसी बात न कहे, जो समस्त प्राणियोंके हृदयमें रोष पैदा करनेवाली हो ॥ ७९ ३/२ ॥

ऐश्वर्यकी सिद्धिके लिये दोनों सन्ध्याओंके समय अग्निहोत्र करे, यदि असमर्थ हो तो वह एक ही समय सूर्य और अग्निको विधिपूर्वक दो हुई आहुतिसे सनुष्टुत करे। चावल, धान्य, घी, फल, कन्द तथा हविष्य—इनके द्वारा विधिपूर्वक स्थालीपाक बनाये तथा यथोचित रीतिसे सूर्य और अग्निको अर्पित करे। यदि हविष्यका अभाव हो तो प्रधान होममात्र करे। सदा सुरक्षित रहनेवाली अग्निको विद्वान् पुरुष अजस्तकी संज्ञा देते हैं। यदि असमर्थ हो तो सन्ध्याकालमें जपमात्र या सूर्यकी वन्दनमात्र कर ले ॥ ८०-८३ ॥

आत्मज्ञानकी इच्छावाले तथा धनार्थी पुरुषोंको भी इस प्रकार विधिवत् उपासना करनी चाहिये। जो सदा ब्रह्मयज्ञमें तप्तर रहते हैं, देवताओंकी पूजामें लगे रहते हैं, नित्य अग्निपूजा एवं गुरुपूजामें अनुरक्त होते हैं तथा ब्राह्मणोंको तृप्त किया करते हैं, वे सब लोग स्वर्गके भागी होते हैं ॥ ८४-८५ ॥

देता है, उसीको अग्नियज्ञ कहते हैं। जो ब्रह्मचर्य आश्रममें स्थित है, उन ब्रह्मचारियोंके लिये समिधाका आधान ही अग्नियज्ञ है। वे समिधाका ही अग्निमें हवन करें। हे ब्राह्मणो! ब्रह्मचर्य आश्रममें निवास करनेवाले द्विजोंका जबतक विवाह न हो जाय और वे औंपासनाग्निकी प्रतिष्ठा न कर लें,

तबतक उनके लिये अग्निमें समिधाकी आहुति, ब्रत आदिका पालन तथा विशेष यजन आदि ही कर्तव्य है (यही उनके लिये अग्नियज्ञ है)। हे द्विजो! जिन्होंने बाह्य अग्निको विसर्जित करके अपनी आत्मामें ही अग्निका आरोप कर लिया है, ऐसे बानप्रस्थियों और संन्यासियोंके लिये यही हवन या अग्नियज्ञ है कि वे विहित समयपर हितकर, परिमित और पवित्र अन्नका भोजन कर लें ॥ २-४ ॥

आपासनाग्निको ग्रहण करके जब कुण्ड अथवा भाण्डमें सुरक्षित कर लिया जाय, तब उसे अजस्र कहा जाता है। राजविष्ळव या दुर्वेसे अग्नित्यागका भय उपस्थित हो जानेपर जब अग्निको स्वयं आत्मामें अथवा अरणीमें स्थापित कर लिया जाता है, तब उसे समारोपित कहते हैं ॥ ५-६ ॥

हे ब्राह्मणो! सायंकाल अग्निके लिये दी हुई आहुति सम्पत्ति प्रदान करनेवाली होती है, ऐसा जानना चाहिये और प्रातःकाल सूर्यदेवको दी हुई आहुति आयुकी वृद्धि करनेवाली होती है, यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये। दिनमें अग्निदेव सूर्यमें ही प्रविष्ट हो जाते हैं। अतः प्रातःकाल सूर्यको दी हुई आहुति भी अग्नियज्ञ ही है ॥ ७ ॥

इन्द्र आदि समस्त देवताओंके उद्देश्यसे अग्निमें जो आहुति दी जाती है, उसे देवयज्ञ समझना चाहिये। स्थालीपाक आदि यज्ञोंको देवयज्ञ ही मानना चाहिये। लौकिक अग्निमें प्रतिष्ठित जो चूडाकरण आदि संस्कार-निमित्तक हवन-कर्म हैं, उन्हें भी देवयज्ञके ही अन्तर्गत जानना चाहिये। [अब ब्रह्मयज्ञका वर्णन सुनिये।] द्विजको चाहिये कि वह देवताओंकी तृप्तिके लिये निरन्तर ब्रह्मयज्ञ करे। वेदोंका जो नित्य अध्ययन होता है, उसीको ब्रह्मयज्ञ कहा गया है। प्रातः नित्यकर्मके अनन्तर सायंकालिक ब्रह्मयज्ञ किया जा सकता है। उसके बाद गतमें इसका विधान नहीं है ॥ ८-१०३/२ ॥

अग्निके बिना देवयज्ञ कैसे सम्पन्न होता है, इसे आपलोग श्रद्धासे और आदरपूर्वक सुनिये। सृष्टिके आरम्भमें सर्वज्ञ, दयालु और सर्वसमर्थ महादेवजीने समस्त लोकोंके उपकारके लिये वारोंकी कल्पना की।

वे भगवान् शिव संसाररूपी रोगको दूर करनेके लिये वैद्य हैं। सबके ज्ञाता तथा समस्त औषधोंके भी औषध हैं। उन भगवान् ने पहले अपने वारकी कल्पना की, जो आरोग्य प्रदान करनेवाला है। तत्पश्चात् उन्होंने अपनी मायाशक्तिका वार बनाया, जो सम्पत्ति प्रदान करनेवाला है। जन्मकालमें दुर्गतिग्रस्त बालककी रक्षाके लिये उन्होंने कुमारके वारकी कल्पना की। तत्पश्चात् सर्वसमर्थ महादेवजीने आलस्य और पापकी निवृत्ति तथा समस्त लोकोंका हित करनेकी इच्छासे लोकरक्षक भगवान् विष्णुका वार बनाया। इसके बाद सबके स्वामी भगवान् शिवने पुष्टि और रक्षाके लिये आयुःकर्त्ता तथा त्रिलोकस्था परमेष्ठी ब्रह्माका आयुष्कारक वार बनाया, जिससे सम्पूर्ण जगत्के आयुष्की सिद्धि हो सके। इसके बाद तीनों लोकोंकी वृद्धिके लिये पहले पुण्य-पापकी रचना की; तत्पश्चात् उनके करनेवाले लोगोंको शुभाशुभ फल देनेके लिये भगवान् शिवने इन्द्र और यमके वारोंका निर्माण किया। ये दोनों वार क्रमशः भोग देनेवाले तथा लोगोंके मृत्युभयको दूर करनेवाले हैं ॥ ११-१८१/२ ॥

इसके बाद सूर्य आदि सात ग्रहोंको, जो अपने ही स्वरूपभूत तथा प्राणियोंके लिये सुख-दुःखके सूचक हैं; भगवान् शिवने उपर्युक्त सात वारोंका स्वामी निश्चित किया। वे सब-के-सब ग्रह नक्षत्रोंके ज्योतिर्मय मण्डलमें प्रतिष्ठित हैं। [शिवके वार या दिनके स्वामी सूर्य हैं। शक्तिसम्बन्धी वारके स्वामी सोम हैं। कुमारसम्बन्धी दिनके अधिपति मंगल हैं। विष्णुवारके स्वामी बुध हैं। ब्रह्माजीके वारके अधिपति बृहस्पति हैं। इन्द्रवारके स्वामी शुक्र और यमवारके स्वामी शनैश्चर हैं।] अपने-अपने वारमें की हुई उन देवताओंकी पूजा उनके अपने-अपने फलको देनेवाली होती है ॥ १९-२० ॥

सूर्य आरोग्यके और चन्द्रमा सम्पत्तिके दाता हैं। मंगल व्याधियोंका निवारण करते हैं, बुध पुष्टि देते हैं, बृहस्पति आयुकी वृद्धि करते हैं, शुक्र भोग देते हैं और शनैश्चर मृत्युका निवारण करते हैं। ये सात वारोंके क्रमशः फल बताये गये हैं, जो उन-उन देवताओंकी प्रीतिसे प्राप्त होते हैं। अन्य देवताओंकी भी पूजाका फल

अथ भगवान् पूजा करने की विधि इसकी विवरण समाप्त हो जाएगी। इसके बाद इनका वर्णन करना चाहिये।

देवेवाले भगवान् शिव ही हैं। देवताओंकी प्रसन्नताके लिये पूजाकी पाँच प्रकारकी ही पद्धति बनायी गयी। उन-उन देवताओंके मन्त्रोंका जप यह पहला प्रकार है। उनके लिये होम करना दूसरा, दान करना तीसरा तथा तप करना चौथा प्रकार है। किसी वेदीपर, प्रतिमामें, अग्निमें अथवा ब्राह्मणके शरीरमें आराध्य देवताओंकी भावना करके सोलह उपचारोंसे उनकी पूजा या आराधना करना पाँचवाँ प्रकार है। २१—२४॥

इनमें पूजाके उत्तरोत्तर आधार त्रेष्ठ हैं। पूर्व-पूर्वके अभावमें उत्तरोत्तर आधारका अवलम्बन करना चाहिये। दोनों नेत्रों तथा मस्तकके रोग और कुष्ठ रोगकी शान्तिके लिये भगवान् सूर्यकी पूजा करके ब्राह्मणोंको भोजन कराये। तदनन्तर एक दिन, एक मास, एक वर्ष अथवा तीन वर्षतक लगातार ऐसा साधन करना चाहिये। इससे यदि प्रबल प्रारब्धका निर्भाण हो जाय तो रोग एवं जरा आदिका नाश हो जाता है। इष्टदेवके नामनन्दोंका जप आदि साधन वार आदिके अनुसार फल देते हैं। २५—२७॥

रविवारको सूर्यदेवके लिये, अन्य देवताओंके लिये तथा ब्राह्मणोंके लिये विशिष्ट वस्तु अपित करे। यह साधन विशिष्ट फल देनेवाला होता है तथा इसके द्वारा विशेषरूपसे पापोंकी शान्ति होती है। २८॥

विद्वान् पुरुष सोमवारको सम्पत्तिकी प्राप्तिके लिये लक्ष्मी आदिकी पूजा करे तथा सप्तलीक ब्राह्मणोंको घृतपवव अनका भोजन कराये। मंगलवारको रोगोंकी शान्तिके लिये काली आदिकी पूजा करे तथा उड़द, मूँग एवं अरहरकी दाल आदिसे युक्त अन ब्राह्मणोंको भोजन कराये। २९—३०॥

विद्वान् पुरुष बुधवारको दधियुक्त अन्से भगवान् विष्णुका पूजन करे—ऐसा करनेसे सदा पुत्र, मित्र और स्त्री आदिकी पुष्टि होती है। जो दीर्घायु होनेकी इच्छा रखता हो, वह गुरुवारको देवताओंकी पुष्टिके लिये वस्त्र, यज्ञोपवीत तथा घृतमिश्रित खीरसे यजन-पूजन करे। ३१—३२॥

भोगोंकी प्राप्तिके लिये शुक्रवारको एकाग्रचित्त होकर देवताओंका पूजन करे और ब्राह्मणोंकी तृप्तिके

लिये घड़रसयुक्त अनका दान करे। इसी प्रकार स्थियोंकी प्रसन्नताके लिये सुन्दर वस्त्र आदिका दान करे। शनैश्चर अपमृत्युका निवारण करनेवाला है, उस दिन बुद्धिमान् पुरुष रुद्र आदिकी पूजा करे। तिलके होमसे, दानसे देवताओंको सन्तुष्ट करके ब्राह्मणोंको तिलमिश्रित अन भोजन कराये। जो इस तरह देवताओंकी पूजा करेगा, वह आरोग्य आदि फलका भागी होगा। ३३—३५॥

देवताओंके नित्य-पूजन, विशेष-पूजन, स्नान, दान, जप, होम तथा ब्राह्मण-तर्पण आदिमें एवं रवि आदि वारोंमें विशेष तिथि और नक्षत्रोंका योग प्राप्त होनेपर विभिन्न देवताओंके पूजनमें सर्वज्ञ जगदीश्वर भगवान् शिव ही उन-उन देवताओंके रूपमें पूजित होकर सब लोगोंको आरोग्य आदि फल प्रदान करते हैं। देश, काल, पात्र, द्रव्य, श्रद्धा एवं लोकके अनुसार उनके तातात्प्य क्रमका ध्यान रखते हुए महादेवजी आराधना करनेवाले लोगोंको आरोग्य आदि फल देते हैं। ३६—३९॥

शुभ (मांगलिक कर्म)-के आरम्भमें और अशुभ (अन्त्येष्टि आदि कर्म)-के अन्तमें तथा जन्म-नक्षत्रोंकी आनेपर गृहस्थ पुरुष अपने घरमें आरोग्य आदिकी समृद्धिके लिये सूर्य आदि ग्रहोंका पूजन करे। इससे सिद्ध है कि देवताओंका यजन सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाला है। ब्राह्मणोंका देवयज्ञ कर्म वैदिक मन्त्रके साथ होना चाहिये [यहाँ ब्राह्मण शब्द क्षत्रिय और वैश्यका भी उपलक्षण है।] शूद्र आदि दूसरोंका देवयज्ञ तान्त्रिक विधिसे होना चाहिये। शुभ फलकी इच्छा रखनेवाले मनुष्योंको सातों ही दिन अपनी शक्तिके अनुसार सदा देवपूजन करना चाहिये। ४०—४२॥

निर्धन मनुष्य तपस्या (व्रत आदिके कट्ट-सहन) - द्वारा और धनी धनके द्वारा देवताओंकी आराधना करे। वह बार-बार श्रद्धापूर्वक इस तरहके धर्मका अनुष्ठान करता है और बारम्बार पुण्यलोकोंमें नाना प्रकारके फल भोगकर मुनः इस पृथ्वीपर जन्म ग्रहण करता है। धनवान् पुरुष सदा भोगसिद्धिके लिये मार्गमें वृक्ष आदि लगाकर लोगोंके लिये छायाकी व्यवस्था करे, जलाशय (कुआँ, बावली और पोखरे) बनवाये, वेद-शास्त्रोंकी प्रतिष्ठाके

लिये पाठशालाका निर्माण करे तथा अन्यान्य प्रकारसे भी जाती है। द्विजो! जो इस अध्यायको सुनता, पढ़ता, धर्मका संग्रह करता रहे। समयानुसार पुण्यकर्मके अथवा दूसरोंको सुनाता है, उसे देवयज्ञका फल प्राप्त परिपाकसे [अन्तःकरण शुद्ध होनेपर] ज्ञानकी सिद्धि होता है ॥ ४३—४६ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिववंधापुराणके अन्तर्गत प्रथम विष्णुवर्संहितामें अग्नियज्ञ आदिका वर्णन नामक चौदहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ॥ १४ ॥

पञ्चहवाँ अध्याय

देश, काल, पात्र और दान आदिका विचार

ऋषिगण बोले—समस्त पदार्थके ज्ञाताओंमें श्रेष्ठ हे सूतजी! अब आप क्रमशः देश, काल आदिका वर्णन करें ॥ १/२ ॥

सूतजी बोले—हे महर्षियो! देवयज्ञ आदि कर्मोंमें अपना शुद्ध गृह समान फल देनेवाला होता है अर्थात् अपने घरमें किये हुए देवयज्ञ आदि शास्त्रोक्त कर्म फलको समप्राप्तामें देनेवाले होते हैं। गोशालाका स्थान घरकी अपेक्षा दसगुना फल देता है। जलाशयका तट उससे भी दसगुना महत्व रखता है तथा जहाँ बेल, तुलसी एवं पीपलवृक्षका मूल निकट हो, वह स्थान जलाशयसे भी दस गुना अधिक फल देनेवाला होता है ॥ १-२ ॥

देवालयको उससे भी दस गुना महत्वका स्थान जानना चाहिये। तीर्थभूमिका तट देवालयसे भी दस गुना महत्व रखता है और उससे दसगुना श्रेष्ठ है नदीका किनारा। उससे दस गुना उत्कृष्ट है तीर्थनदीका तट और उससे भी दस गुना महत्व रखता है सप्तगांगा नामक नदियोंका तीर्थ। गंगा, गोदावरी, कावेरी, ताप्रपर्णी, सिन्धु, सरयू और नर्मदा—इन सात नदियोंको सप्तगांगा कहा गया है। समुद्रके तटका स्थान इनसे भी दस गुना अधिक पवित्र माना गया है और पर्वतके शिखरका प्रदेश समुद्रतटसे भी दस गुना पावन है। सबसे अधिक महत्वका वह स्थान जानना चाहिये, जहाँ मन लग जाय [यहाँतक देशका वर्णन हुआ],

अब कालका तारतम्य बताया जाता है—] ॥ ३—५ १/२ ॥

सत्ययुगमें यज्ञ, दान आदि कर्म पूर्ण फल देनेवाले होते हैं—ऐसा जानना चाहिये। त्रेतायुगमें उसका तीन चौथाई फल मिलता है। द्वापरमें सदा आधे ही फलकी प्राप्ति कही गयी है। कलियुगमें एक चौथाई ही फलकी प्राप्ति समझनी चाहिये और आधा कलियुग बीतनेपर उस फलमेंसे भी एक चतुर्थांश कम हो जाता है ॥ ६—७ ॥

शुद्ध अन्तःकरणवाले पुरुषको शुद्ध एवं पवित्र दिन सम फल देनेवाला होता है। हे विद्वान् ब्राह्मणो! सूर्य-संक्रान्तिके दिन किया हुआ सत्कर्म पूर्वोक्त शुद्ध दिनकी अपेक्षा दस गुना फल देनेवाला होता है—यह जानना चाहिये। उससे भी दस गुना अधिक महत्व उस कर्मका है, जो विषुव* नामक योगमें किया जाता है। दक्षिणायन आरम्भ होनेके दिन अर्थात् कर्ककी संक्रान्तिमें किये हुए पुण्यकर्मका महत्व विषुवसे भी दस गुना अधिक माना गया है। उससे भी दसगुना अधिक मकर-संक्रान्तिमें और उससे भी दस गुना अधिक चन्द्रग्रहणमें किये हुए पुण्यका महत्व है। सूर्यग्रहणका समय सबसे उत्तम है। उसमें किये गये पुण्यकर्मका फल चन्द्रग्रहणसे भी अधिक और पूर्णमासमें होता है—इस बातको विज्ञ पुरुष जानते हैं। जगदरूपी सूर्यका राहुरूपी विषपसे संयोग होता है, इसलिये सूर्यग्रहणका समय रोग प्रदान करनेवाला है। अतः उस विषकी शान्तिके लिये उस समय स्नान, दान और

* ज्योतिषके अनुसार वह समय जबकि सूर्य विषुव रेखापर पहुँचता है और दिन तथा रात दोनों बायर होते हैं। यह वर्षमें दो बार आता सितम्बरको।

जप करना चाहिये। वह काल विषकी शान्तिके लिये उपयोगी होनेके कारण पुण्यप्रद माना गया है॥ ८—११ ॥

जन्म-नक्षत्रके दिन तथा ब्रतकी पूर्तिके दिनका समय सूर्यग्रहणके समान ही समझा जाता है। परंतु महापुरुषोंके संगका काल करोड़ों सूर्यग्रहणके समान पावन है—ऐसा ज्ञानी पुरुष मानते हैं॥ १२ ॥

तपोनिष्ठ योगी और ज्ञाननिष्ठ यति—ये पूजाके पात्र हैं; क्योंकि ये पापोंके नाशमें कारण होते हैं। जिसने चौबीस लाख गायत्रीका जप कर लिया हो, वह ब्राह्मण भी पूजाका पात्र है; उसका पूजन सम्पूर्ण फलों और भोगोंको देनेमें समर्थ है। जो पतनसे त्राण करता अर्थात् नरकमें गिरनेसे बचाता है, उसके लिये [इसी गुणके कारण शास्त्रमें] पात्र शब्दका प्रयोग होता है। वह दाताको पापसे त्राण प्रदान करनेके कारण पात्र कहलाता है॥ १३—१५ ॥

गायत्री अपना गान करनेवालेका अधोगतिसे त्राण करती है, इसलिये वह गायत्री कहलाती है। जैसे इस लोकमें जो धनहीन है, वह दूसरेको धन नहीं दे सकता—जो यहाँ धनवान् है, वही दूसरेको धन दे सकता है, उसी तरह जो स्वयं शुद्ध और पवित्रता है, वही दूसरे मनुष्योंका त्राण या उद्धार कर सकता है। जो गायत्रीका जप करके शुद्ध हो गया है, वही शुद्ध ब्राह्मण कहा जाता है। इसलिये दान, जप, होम, पूजा—इन सभी कर्मोंके लिये वही शुद्ध पात्र है। ऐसा ब्राह्मण ही दान लेने तथा रक्षा करनेकी पात्रता रखता है॥ १६—१६ १/२ ॥

स्त्री हो या पुरुष—जो भी भूखा हो, वही अन्दानका पात्र है। श्रेष्ठ ब्राह्मणको समयपर बुलाकर उसे धन अथवा उत्तम वाणीसे सन्तुष्ट करना चाहिये, इससे अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है। जिसको जिस वस्तुकी इच्छा हो, उसे वह वस्तु बिना माँग ही दे दी जाय, तो दाताको उस दानका पूरा-पूरा फल प्राप्त होता है—ऐसी महर्षियोंकी मान्यता है। जो याचना करनेके बाद दिया गया हो, वह दान आधा ही फल देनेवाला बताया गया है। अपने सेवकको दिया हुआ दान एक चौथाई फल देनेवाला कहा गया है। हे विप्रवरो! जो

जातिमात्रसे ब्राह्मण है और दीनतापूर्ण वृत्तिसे जीवन बिताता है, उसे दिया हुआ धनका दान दाताको इस भूतलपर दस वर्षोंतक भोग प्रदान करनेवाला होता है। वही दान यदि वेदवेत्ता ब्राह्मणको दिया जाय, तो वह स्वर्गलोकमें देवताओंके दस वर्षोंतक दिव्य भोग देनेवाला होता है॥ १९—२३ ॥

गायत्री-जापक ब्राह्मणको दान देनेसे सत्यलोकमें दस वर्षोंतक पुण्यभोग प्राप्त होता है और विष्णुभक्त ब्राह्मणको दिया गया दान वैकुण्ठकी प्राप्ति करनेवाला जाना जाता है। शिवभक्त विप्रको दिया हुआ दान कैलासकी प्राप्ति कराने वाला कहा गया है। इस प्रकार सबको इन लोकोंमें भोगप्राप्तिके लिये दान देना चाहिये॥ २४—२५ ॥

रविवारके दिन ब्राह्मणको दशांग अन्ल देनेवाला मनुष्य दूसरे जन्ममें दस वर्षोंतक निरोग रहता है। बहुत सम्मानपूर्वक बुलाना, अभ्यंग (चन्दन आदि), पादसेवन, वस्त्र, गन्ध आदिसे पूजन, धीके मालपुए आदि सुन्दर भोजन, छहाँ रस, व्यंजन, दक्षिणासहित ताम्बूल, नमस्कार और (जाते समय) अनुगमन—ये अन्दानके दस अंग कहे गये हैं॥ २६—२८ ॥

दस ब्राह्मणोंको रविवारके दिन दशांग अन्का दान करनेवाला सौ वर्षतक निरोग रहता है। सोमवार आदि विभिन्न वारोंमें अन्दानका फल उन-उन वारोंके अनुसार दूसरे जन्ममें इस पृथ्वीलोकमें प्राप्त होता है—ऐसा जानना चाहिये। सातों वारोंमें दस-दस ब्राह्मणोंको दशांग अन्दान करनेसे सौ वर्षतक आरोग्यादि फल प्राप्त होते हैं। इस प्रकार रविवारके दिन ब्राह्मणोंको अन्दान करने वाला मनुष्य हजार वर्षोंतक शिवलोकमें आरोग्यलभ करता है। इसी प्रकार हजार ब्राह्मणोंको अन्दान करके मनुष्य दस हजार वर्षोंतक आरोग्यभोग करता है। विद्वान्को सोमवार आदि दिनोंके विषयमें भी ऐसा ही जानना चाहिये॥ २९—३३ ॥

रविवारको गायत्रीजपसे पवित्र अन्तःकरणवाले एक हजार ब्राह्मणोंको अन्दान करके मनुष्य सत्यलोकमें आरोग्यादि भोगोंको प्राप्त करता है। इसी प्रकार दस

हजार ब्राह्मणोंको दान देनेसे विष्णुलोकमें ऐसी प्राप्ति होती है और एक लाख ब्राह्मणोंको अनन्दान करनेसे रुद्रलोकमें भोगादिकी प्राप्ति होती है ॥ ३४-३५ ॥

विद्याकी कामनावाले मनुष्योंको ब्रह्मवृद्धिसे बालकोंको दशांग अनका दान करना चाहिये, पुत्रकी कामनावाले लोगोंको विष्णुवृद्धिसे युवकोंको दान करना चाहिये और ज्ञानप्राप्तिकी इच्छावालोंको रुद्रवृद्धिसे वृद्धजनोंको दान देना चाहिये। इसी प्रकार बुद्धिकी कामना करनेवाले श्रेष्ठ मनुष्योंको सरस्वतीबुद्धिसे बालिकाओंको दशांग अनका दान करना चाहिये। सुखभोगकी कामनावाले श्रेष्ठजनोंको लक्ष्मीबुद्धिसे युवतियोंको दान देना चाहिये। आत्मज्ञानकी इच्छावाले लोगोंको पार्वतीबुद्धिसे वृद्धा स्त्रियोंको अनन्दान करना चाहिये ॥ ३६-३८ ॥

ब्राह्मणके लिये शिल तथा उञ्ज्ञ* वृत्तिसे लाया हुआ और गुरुदक्षिणामें प्राप्त हुआ अन-धन शुद्ध द्रव्य कहलाता है; उसका दान दाताको पूर्ण फल देनेवाला बताया गया है ॥ ३९ ॥

शुद्ध (शुक्ल) प्रतिग्रह (दान)-में मिला हुआ द्रव्य मध्यम द्रव्य कहा जाता है और खेती, व्यापार आदिसे प्राप्त धन अधम द्रव्य कहा जाता है ॥ ४० ॥

क्षत्रियोंका शौर्यसे कमाया हुआ, वैश्योंका व्यापारसे कमाया हुआ और शूद्रोंका सेवावृत्तिसे प्राप्त किया हुआ धन भी उत्तम द्रव्य कहलाता है। धर्मकी इच्छा रखनेवाली स्त्रियोंको जो धन पिता एवं पतिसे मिला हुआ हो, उनके लिये वह उत्तम द्रव्य है ॥ ४१ ॥

गौ आदि बारह वस्तुओंका चैत्र आदि बारह महीनोंमें क्रमशः दान करना चाहिये अथवा किसी पुण्यकालमें एकत्रित करके अपनी अभीष्ट प्राप्तिके लिये इनका दान करना चाहिये। गौ, भूमि, तिल, सूर्वण, धी, वस्त्र, धान्य, गुड़, चाँदी, नमक, कोहड़ा और कन्या—ये ही वे बारह वस्तुएँ हैं ॥ ४२-४३ ॥

* किसानके द्वारा खेतमें थोये हुए अनको काटकर ले जानेके बाद उनसे गिरे हुए एक-एक दानेको दोनों अंगुलियोंसे चुनने (उवने)-को 'उञ्ज्ञ' तथा उक्त खेतमें एक-एक बाल (धानके गुच्छों)-को चुननेको 'शिल' कहते हैं—'उञ्ज्ञो धान्यकणादानं कणिशशूर्जनं शिलम्।' मनुस्मृतिके टीकाकार आचार्य श्रीराधवानदर्जीने बाजार आदिमें क्राय-विक्रयके अनन्तर गिरे हुए अनके दानोंके चुननेको 'उञ्ज्ञ' और खेत कट जानेके बाद खेतमें पढ़े हुए धान्यादिकी बालोंको चौनना 'शिल' कहा है। (मनु० ४।५ की व्याख्या)

गोदानमें दी हुई गायके उपकारी गोबरसे धन-धान्यादि ठोस पदार्थोंके आश्रयसे टिके पापोंका नाश होता है और उसके गोमूत्रसे जल-तेल आदि तरल पदार्थोंमें रहनेवाले पापोंका नाश होता है। उसके दूध-दही और धीसे कायिक, वाचिक तथा मानसिक तीनों प्रकारके पाप नष्ट हो जाते हैं। उनसे कायिक आदि पुण्यकर्मोंकी पुष्टि भी होती है—ऐसा बुद्धिमान् मनुष्यको जानना चाहिये ॥ ४४-४६ ॥

हे ब्राह्मणो! भूमिका दान इहलोक और परलोकमें प्रतिष्ठा (आश्रय)-की प्राप्ति करनेवाला है। तिलका दान बलवर्धक एवं मृत्युका निवारक कहा गया है। सुवर्णका दान जठराग्निको बढ़ानेवाला तथा वीर्यदायक है। धीके दानको पुष्टिकारक जानना चाहिये। वस्त्रका दान आयुकी वृद्धि करनेवाला है—ऐसा जानना चाहिये। धान्यका दान अनकी समृद्धिमें कारण होता है। गुड़का दान मधुर भोजनकी प्राप्ति करनेवाला होता है। चाँदीके दानसे वीर्यकी वृद्धि होती है। लवणका दान घट्टरस भोजनकी प्राप्ति करता है। सब प्रकारका दान सम्पूर्ण समृद्धिकी सिद्धिके लिये होता है। विज्ञ पुरुष कूप्याण्डके दानको पुष्टिदायक मानते हैं। कन्याका दान आजीवन भोग देनेवाला कहा गया है। हे ब्राह्मणो! वह लोक और परलोकमें भी सम्पूर्ण भोगोंकी प्राप्ति करनेवाला है ॥ ४७-५० ॥

कटहल-आम, कैथ आदि वृक्षोंके फल, केला आदि ओषधियोंके फल तथा जो फल लता एवं गुल्मोंसे उत्पन्न हुए हों, मुष्ट (आवरणयुक्त) फल जैसे—नारियल, बादाम आदि, उड़द, मूँग आदि दालें, शाक, मिर्च, सरसों आदि, तेल-मसाले और त्रहुतोंमें तैयार होनेवाले फल समय-समयपर बुद्धिमान् व्यक्तिद्वारा दान किये जाने चाहिये ॥ ५१-५३ ॥

विद्वान् पुरुषको चाहिये कि जिन वस्तुओंसे ऋबण आदि इन्द्रियोंकी तृप्ति होती है, उनका सदा दान करे। श्रोत्र आदि दस इन्द्रियोंके जो शब्द आदि दस विषय हैं,

को 'उञ्ज्ञ' तथा उक्त खेतमें एक-एक बाल (धानके गुच्छों)-को चुननेको 'शिल' कहते हैं—'उञ्ज्ञो धान्यकणादानं कणिशशूर्जनं शिलम्।'

उनका दान किया जाय, तो वे भोगोंकी प्राप्ति करते हैं तथा दिशा आदि इन्द्रिय देवताओंको* सन्तुष्ट करते हैं। वेद और शास्त्रको गुरुमुखसे ग्रहण करके गुरुके उपदेशसे अथवा स्वयं ही बोध प्राप्त करनेके पश्चात् जो बुद्धिका यह निश्चय होता है कि 'कर्मोंका फल अवश्य मिलता है', इसीको उच्चकोटिकी 'आस्तिकता' कहते हैं। भाई-बन्धु अथवा राजाके भयसे जो आस्तिकता-बुद्धि या त्रद्धा होती है, वह कनिष्ठ श्रेणीकी आस्तिकता है॥ ५४-५५१/२॥

जो सर्वथा दरिद्र है, जिसके पास सभी वस्तुओंका अभाव है, वह बाणी अथवा कर्म (शरीर)-द्वारा यजन करे। मन्त्र, स्तोत्र और जप आदिको बाणीद्वारा किया गया यजन समझना चाहिये तथा तीर्थयात्रा और ब्रत आदिको विद्वान् पुरुष शारीरिक यजन मानते हैं। जिस किसी भी उपायसे थोड़ा हो या बहुत, देवतार्पण-बुद्धिसे जो कुछ

भी दिया अथवा किया जाय, वह दान या सत्कर्म भोगोंकी प्राप्ति करनेमें समर्थ होता है॥ ५६-५८॥

तपस्या और दान—ये दो कर्म मनुष्यको सदा करने चाहिये तथा ऐसे गृहका दान करना चाहिये, जो अपने वर्ण (चमक-दमक या सफाई) और गुण (सुख-सुविधा)-से सुशोभित हो। बुद्धिमान् पुरुष देवताओंकी तृप्तिके लिये जो कुछ देते हैं, वह अतिशय मात्रामें और सब प्रकारके भोग प्रदान करनेवाला होता है। उस दानसे विद्वान् पुरुष इहलोक और परलोकमें उत्तम जन्म और सदा सुलभ होनेवाला भोग पाता है। इश्वरार्पण-बुद्धिसे यज्ञ, दान आदि कर्म करके मनुष्य मोक्ष-फलका भागी होता है॥ ५९-६०॥

जो मनुष्य इस अध्यायका सदा पाठ अथवा श्रवण करता है, उसे धार्मिक बुद्धि प्राप्त होती है तथा उसमें ज्ञानका उदय होता है॥ ६१॥

// इस प्रकार श्रीगिरिमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें देश-काल-पात्र आदिका वर्णन नामक पञ्चहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ॥ १५॥

सोलहवाँ अध्याय

मृत्तिका आदिसे निर्मित देवप्रतिमाओंके पूजनकी विधि, उनके लिये नैवेद्यका विचार, पूजनके विभिन्न उपचारोंका फल, विशेष मास, वार, तिथि एवं नक्षत्रोंके योगमें पूजनका विशेष फल तथा लिंगके वैज्ञानिक स्वरूपका विवेचन

ऋषिगण बोले—हे साधुशिरोमणे! अब आप पार्थिव प्रतिमाकी पूजाका वह विधान बताइये, जिस पूजा-विधानसे समस्त अभीष्ट वस्तुओंकी प्राप्ति होती है॥ १॥

सूतजी बोले—हे महर्षियो! तुमलोगोंने बहुत उत्तम बात पूछी है। पार्थिव प्रतिमाका पूजन सदा सम्पूर्ण मनोरथोंको देनेवाला है तथा दुःखका तत्काल निवारण करनेवाला है। मैं उसका वर्णन करता हूँ, [ध्यान देकर] सुनिये॥ २॥

हे द्विजो! यह पूजा अकाल मृत्युको हरनेवाली तथा काल और मृत्युका भी नाश करनेवाली है। यह शीघ्र ही

स्त्री, पुत्र और धन-धान्यको प्रदान करनेवाली है। इसलिये पृथ्वी आदिकी बनी हुई देवप्रतिमाओंकी पूजा इस भूतलपर अभीष्टदायक मानी गयी है; निश्चय ही इसमें पुरुषोंका और स्त्रियोंका भी अधिकार है॥ ३-४१/२॥

नदी, पोखरे अथवा कुर्में प्रवेश करके पानीके भीतरसे मिट्टी ले आये। तत्पश्चात् गन्ध-चूर्णके द्वारा उसका संशोधन करके शुद्ध मण्डपमें रखकर उसे महीन बनाये तथा हाथसे प्रतिमा बनाये और दूधसे उसका सम्पूर्ण संस्कार करे। उस प्रतिमामें अंग-प्रत्यंग अच्छी तरह प्रकट हुए हों तथा वह सब प्रकारके अस्त्र-शस्त्रोंसे

* ग्रवणेन्द्रियके देवता दिशाएँ, नैवेद्य सूर्य, नासिकाके अश्विनीकुमार, रसनेन्द्रियके वरण, त्वारिणीदिवके वायु, यागिन्द्रियके अग्नि, लिंगके प्रजापति, गुदाके मित्र, हाथोंके इन्द्र और धैर्यके देवता विष्णु हैं।

सम्पन्न बनायी गयी हो। तदनन्तर उसे पद्मासनपर स्थापित करके आदर-पूर्वक उसका पूजन करे। गणेश, सूर्य, विष्णु, दुर्गा और शिवजीकी प्रतिमाका एवं शिवजीके शिवलिंगका द्विजो के सदा पूजन करना चाहिये। पूजनजनित फलकी सिद्धिके लिये सोलह उपचारोंद्वारा पूजन करना चाहिये॥ ५—८^{१/२}॥

पुष्टे प्रोक्षण और मन्त्रपाठपूर्वक अभिषेक करे। अगहनीके चावलसे नैवेद्य तैयार करे। सारा नैवेद्य एक कुडव (लगभग पावभर) होना चाहिये। घरमें पार्थिव-पूजनके लिये एक कुडव और बाहर किसी मनुष्यद्वारा स्थापित शिवलिंगके पूजनके लिये एक प्रस्थ (सेरभर) नैवेद्य तैयार करना आवश्यक है—ऐसा जानना चाहिये। देवताओंद्वारा स्थापित शिवलिंगके लिये तीन सेर नैवेद्य अपित करना उचित है और स्वयं प्रकट हुए लिंगके लिये पाँच सेर। ऐसा करनेसे पूर्ण फलकी प्राप्ति समझनी चाहिये। इससे दुगुना या तिगुना करनेपर और अधिक फल प्राप्त होता है। इस प्रकार सहस्र बार पूजन करनेसे हिंज सत्यलोकको प्राप्त कर लेता है॥ ९—११^{१/२}॥

बारह अँगुल चौड़ा, इससे दूना और एक अँगुल अधिक अर्थात् पचीस अँगुल लम्बा तथा पन्द्रह अँगुल कंचा जो लोहे या लकड़ीका बना हुआ पात्र होता है, उसे विद्वान् पुरुष शिव कहते हैं। उसका आठवाँ भाग प्रस्थ कहलाता है, जो चार कुडवके बराबर माना गया है। मनुष्यद्वारा स्थापित शिवलिंगके लिये दस प्रस्थ, ऋषियोंद्वारा स्थापित शिवलिंगके लिये सौ प्रस्थ और स्वयम्भू शिवलिंगके लिये एक सहस्र प्रस्थ नैवेद्य निवेदन किया जाय तथा जल, तैल आदि एवं गन्ध द्रव्योंकी भी यथायोग्य मात्रा रखी जाय तो यह उन शिवलिंगोंकी महापूजा बतायी जाती है॥ १२—१५॥

देवताका अभिषेक करनेसे आत्मशुद्धि होती है, गथसे पुण्यकी प्राप्ति होती है, नैवेद्य अपेण करनेसे आयु बढ़ती है और तृप्ति होती है, धूप निवेदन करनेसे धनवकी प्राप्ति होती है, दीप दिखानेसे ज्ञानका उदय होता है और ताम्बूल समर्पण करनेसे भोगकी उपलब्धि होती है। इसलिये स्नान आदि छः उपचारोंको यत्पूर्वक अपित

करे॥ १६—१७॥

नमस्कार और जप—ये दोनों सम्पूर्ण अभीष्ट फलको देनेवाले हैं। इसलिये भोग और मोक्षकी इच्छा रखेवाले लोगोंको पूजाके अन्तमें सदा ही जप और नमस्कार करना चाहिये। मनुष्यको चाहिये कि वह सदा पहले मनसे पूजा करके फिर उन-उन उपचारोंसे पूजा करे। देवताओंकी पूजासे उन-उन देवताओंके लोकोंकी प्राप्ति होती है तथा उनके अवान्तर लोकमें भी यथेष्ट भोगकी वस्तुएँ उपलब्ध होती हैं॥ १८—१९^{१/२}॥

हे द्विजो! अब मैं देवपूजासे प्राप्त होनेवाले विशेष फलोंका वर्णन करता हूँ। आपलोग श्रद्धापूर्वक सुनें। विज्ञरज गणेशकी पूजासे भूलोकमें उत्तम अभीष्ट वस्तुकी प्राप्ति होती है। शुक्रवारको, ब्रावण और भाद्रपद मासोंकी शुक्लपक्षकी चतुर्थीको और पौषमासमें शतभिषा नक्षत्रके आनेपर विधिपूर्वक गणेशजीकी पूजा करनी चाहिये। सौ या सहस्र दिनोंमें सौ या सहस्र बार पूजा करे। देवता और अग्निमें श्रद्धा रखते हुए किया जानेवाला उनका नित्य पूजन मनुष्योंको पुत्र एवं अभीष्ट वस्तु प्रदान करता है। वह समस्त पापोंका शमन तथा भिन्न-भिन्न दुष्कर्मोंका विनाश करनेवाला है। विभिन्न वारोंमें की हुई शिव आदिकी पूजाको आत्मशुद्धि प्रदान करनेवाली समझना चाहिये। वार या दिन तिथि, नक्षत्र और योगोंका आधार है। वह समस्त कामनाओंको देनेवाला है। उसमें वृद्धि और क्षय नहीं होता है, इसलिये उसे पूर्ण ब्रह्मस्वरूप मानना चाहिये। सूर्योदयकालसे लेकर दूसरे सूर्योदयकाल आनेतक एक वारकी स्थिति मानी गयी है, जो ब्राह्मण आदि सभी वर्णोंके कर्मोंका आधार है। विहित तिथिके पूर्वभागमें की हुई देवपूजा मनुष्योंको पूर्ण भोग प्रदान करनेवाली होती है॥ २०—२५^{१/२}॥

यदि मध्याह्नके बाद तिथिका आरम्भ होता है, तो गत्रियुक्त तिथिका पूर्वभाग पितरोंके आद्व आदि कर्मके लिये उत्तम बताया जाता है। ऐसी तिथिका परभाग ही दिनसे युक्त होता है, अतः वही देवकर्मके लिये प्रशस्त माना गया है। यदि मध्याह्नकालतक तिथि रहे तो उदयव्यापिनी तिथिको ही देवकार्यमें ग्रहण करना चाहिये।

इसी तरह शुभ तिथि एवं नक्षत्र आदि देवकार्यमें ग्राहा होते हैं। वार आदिका भलीभौति विचार करके पूजा और जप आदि करने चाहिये॥ २६—२८॥

वेदोंमें पूजा-शब्दके अर्थकी इस प्रकार योजना कही गयी है—‘पूजायते अनेन इति पूजा।’ यह पूजाशब्दकी व्युत्पत्ति है। पूः का अर्थ है भोग और फलकी सिद्धि—वह जिस कर्मसे सम्पन्न होती है, उसका नाम पूजा है। मनोवांछित वस्तु तथा ज्ञान—ये ही अभीष्ट वस्तुएँ हैं; सकाम भाववालेको अभीष्ट भोग अपेक्षित होता है और निष्काम भाववालेको अर्थ—पारमार्थिक ज्ञान। ये दोनों ही पूजाशब्दके अर्थ हैं; इनकी योजना करनेसे ही पूजा-शब्दकी सार्थकता है। इस प्रकार लोक और वेदमें पूजा-शब्दका अर्थ विच्छायत है। नित्य और नैमित्तिक कर्म कालान्तरमें फल देते हैं, किंतु काम्य कर्मका यदि भलीभौति अनुष्ठान हुआ हो तो वह तत्काल फलदायक होता है। प्रतिदिन एक पक्ष, एक मास और एक वर्षतक लगातार पूजन करनेसे उन-उन कर्मोंके फलकी प्राप्ति होती है और उनसे वैसे ही पापोंका क्रमशः क्षय होता है॥ २९—३१ १/२॥

प्रत्येक मासके कृष्णपक्षकी चतुर्थी तिथिको को हुई महागणपतिकी पूजा एक पक्षके पापोंका नाश करनेवाली और एक पक्षतक उत्तम भोगरूपी फल देनेवाली होती है। चैत्रमासमें चतुर्थीको की हुई पूजा एक मासतक किये गये पूजनका फल देनेवाली होती है और जब सूर्य सिंह राशिपर स्थित हों, उस समय भाद्रपदमासकी चतुर्थीको की हुई गणेशजीकी पूजाको एक वर्षतक [मनोवांछित] भोग प्रदान करनेवाली जानना चाहिये॥ ३२—३३ १/२॥

श्रावणमासके रविवारको, हस्त नक्षत्रसे युक्त सप्तमी तिथिको तथा माघशुक्रला सप्तमीको भगवान् सूर्यका पूजन करना चाहिये। ज्येष्ठ तथा भाद्रपदमासोंके बुधवारको, श्रवण नक्षत्रसे युक्त द्वादशी तिथिको तथा केवल द्वादशीको भी किया गया भगवान् विष्णुका पूजन अभीष्ट सम्पत्तिको देनेवाला माना गया है। श्रावणमासमें की जानेवाली श्रीहरिकी पूजा अभीष्ट मनोरथ और आरोग्य प्रदान करनेवाली होती है। अंगों एवं उपकरणोंसहित पूर्वोंक गौ-

आदि बारह वस्तुओंका दान करनेसे जिस फलकी प्राप्ति होती है, उसीको द्वादशी तिथिमें आराधनाद्वारा श्रीविष्णुकी तृप्ति करके मनुष्य प्राप्त कर लेता है। जो द्वादशी तिथिको भगवान् विष्णुके बारह नामोंद्वारा बारह ब्राह्मणोंका बोडशोपचार पूजन करता है, वह उनकी प्रसन्नता प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार सम्पूर्ण देवताओंके विभिन्न बारह नामोंद्वारा बारह ब्राह्मणोंका किया हुआ पूजन उन-उन देवताओंको प्रसन्न करनेवाला होता है॥ ३४—३९॥

ऐश्वर्यकी इच्छा रखनेवाले पुरुषको कर्ककी संक्रान्तिसे युक्त श्रावणमासमें नवमी तिथिको मृगशिरा नक्षत्रके योगमें सम्पूर्ण मनोवांछित भोगों और फलोंको देनेवाली अम्बिकाका पूजन करना चाहिये। आश्विनमासके शुक्लपक्षकी नवमी तिथि सम्पूर्ण अभीष्ट फलोंको देनेवाली है। उसी मासके कृष्णपक्षकी चतुर्दशीको यदि रविवार पड़ा हो तो उस दिनका महत्व विशेष बढ़ जाता है। उसके साथ ही यदि आर्द्धा और महार्द्धा (सूर्यसंक्रान्तिसे युक्त आर्द्धा)—का योग हो तो उक्त अवसरोंपर की हुई शिवपूजाका विशेष महत्व माना गया है। माघ कृष्ण चतुर्दशीको शिवजीकी की हुई पूजा सम्पूर्ण अभीष्ट फलोंको देनेवाली है। वह मनुष्योंकी आशु बढ़ाती है, मृत्युको दूर हटाती है और समस्त सिद्धियोंकी प्राप्ति कराती है॥ ४०—४२ १/२॥

ज्येष्ठमासमें चतुर्थीको यदि महाद्राका योग हो अथवा मार्गशीर्षमासमें किसी भी तिथिको यदि आर्द्धा नक्षत्र हो तो उस अवसरपर विभिन्न वस्तुओंकी बनी हुई मूर्तिके रूपमें शिवजीकी जो सोलह उपचारोंसे पूजा करता है, उस पुण्यात्माके चरणोंका दर्शन करना चाहिये। भगवान् शिवकी पूजा मनुष्योंको भोग और मोक्ष देनेवाली है—ऐसा जानना चाहिये। कार्तिक मासमें प्रत्येक बार और तिथि आदिमें देवपूजाका विशेष महत्व है। कार्तिकमास आनेपर विद्वान् पुरुष दान, तप, होम, जप और नियम आदिके द्वारा समस्त देवताओंका योडशोपचारोंसे पूजन करे। उस पूजनमें देवप्रतिमा, ब्राह्मण तथा मन्त्रोंका उपयोग आवश्यक है। ब्राह्मणोंको भोजन करनेसे वह पूजन-कर्म सम्पन्न होता है। पूजकको चाहिये कि वह कामनाओंको त्यागकर पीड़ारहित

(शन्त) हो देवाराधनमें तत्पर रहे ॥ ४३—४७ ॥

कार्तिकमासमें देवताओंका यजन-पूजन समस्त भोगोंको देनेवाला होता है; यह व्याधियोंको हर लेनेवाला और भूतों तथा ग्रहोंका विनाश भी करनेवाला है। कार्तिकमासके रविवारोंको भगवान् सूर्यकी पूजा करने और तेल तथा कपासका दान करनेसे मनुष्योंके कोढ़ आदि रोगोंका नाश होता है। हरे, काली मिर्च, वस्त्र तथा दूध आदिके दानसे और ब्राह्मणोंकी प्रतिष्ठा करनेसे क्षयके रोगका नाश होता है। दीप और सरसोंके दानसे मिरीका रोग मिट जाता है ॥ ४८—५० १/२ ॥

कृतिका नक्षत्रसे युक्त सोमवारोंको किया हुआ शिवजीका पूजन मनुष्योंके महान् दारिद्र्यको मिटानेवाला और सम्पूर्ण सम्पत्तियोंको देनेवाला है। घरकी आवश्यक सामग्रियोंके साथ गृह और क्षेत्र आदिका दान करनेसे भी उक्त फलकी प्राप्ति होती है। कृतिकायुक्त मंगलवारोंको श्रीस्कन्दका पूजन करनेसे तथा दीपक एवं घटा आदिका दान देनेसे मनुष्योंको शीघ्र ही वाक्सिद्धि प्राप्त हो जाती है ॥ ५१—५३ ॥

कृतिकायुक्त बुधवारोंको किया हुआ श्रीविष्णुका यजन तथा दही-भातका दान मनुष्योंको उत्तम सन्तानकी प्राप्ति करनेवाला होता है। कृतिकायुक्त गुरुवारोंको धनसे ब्रह्माजीका पूजन तथा मधु सोना और चीका दान करनेसे मनुष्योंके भोग-वैभवकी वृद्धि होती है ॥ ५४—५५ ॥

कृतिकायुक्त शुक्रवारोंको गजानन गणेशजीकी पूजा करनेसे तथा गन्ध, पुष्प एवं अन्नका दान देनेसे मानवोंके सुख भोगनेयोग्य पदार्थोंकी वृद्धि होती है। उस दिन सोना, चाँदी आदिका दान करनेसे वन्याको भी उत्तम पुत्रकी प्राप्ति होती है। कृतिकायुक्त शनिवारोंको दिक्षालोंकी वन्दना, दिग्गजों-नार्गों-सेतुपालोंका पूजन और त्रिनेत्रधारी रुद्र तथा पापहरी विष्णुका पूजन ज्ञानकी प्राप्ति करनेवाला है। ब्रह्मा, धन्वन्तरि एवं दोनों अश्विनीकुमारोंका पूजन करनेसे रोग तथा अपमृत्युका निवारण होता है और तात्कालिक व्याधियोंकी शान्ति हो जाती है। नमक, लोहा, तेल और उड्ड आदिका; त्रिकटु (सोंठ, पीपल और गोल

मिर्च), फल, गन्ध और जल आदिका तथा [धृत आदि] द्रव-पदार्थोंका और [सुवर्ण, मोती, धान्य आदि] ठोस वस्तुओंका भी दान देनेसे स्वर्गलोककी प्राप्ति होती है। इनमेंसे नमक आदिका मान कम-से-कम एक प्रस्थ (सेर) और सुवर्ण आदिका मान कम-से-कम एक पल होना चाहिये। धनुकी संक्रान्तिसे युक्त पौषमासमें उषःकालमें शिव आदि समस्त देवताओंका पूजन क्रमशः समस्त सिद्धियोंकी प्राप्ति करनेवाला होता है। इस पूजनमें अगहनीके चावलसे तैयार किये गये हविष्यका नैवेद्य उत्तम बताया जाता है। पौषमासमें नाना प्रकारके अन्नका नैवेद्य विशेष महत्व रखता है ॥ ५८—६२ १/२ ॥

मार्गशीर्षमासमें केवल अन्नका दान करनेवाले मनुष्यको सम्पूर्ण अभीष्ट फलोंकी प्राप्ति हो जाती है। मार्गशीर्षमासमें अन्नका दान करनेवाले मनुष्यके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं, वह अभीष्ट-सिद्धि, आरोग्य, धर्म, वेदका सम्पूर्ण ज्ञान, उत्तम अनुष्ठानका फल, इहलोक और परलोकमें महान् भोग तथा अन्तमें सनातन योग (मोक्ष) तथा वेदान्तज्ञानकी सिद्धि प्राप्त कर लेता है। जो भोगकी इच्छा रखनेवाला है, वह मनुष्य मार्गशीर्षमास आनेपर कम-से-कम तीन दिन भी उषःकालमें अवश्य देवताओंका पूजन करे और पौषमासका पूजनसे खाली न जाने दे। उषःकालसे लेकर संगवकालतक ही पौषमासमें पूजनका विशेष महत्व बताया गया है। पौषमासमें पूरे महीनेभर जितेन्द्रिय और निराहार रहकर द्विज प्रातःकालसे मध्याह्नकालतक वेदमाता गायत्रीका जप करे। तत्पश्चात् रातको सोनेके समयतक पंचाक्षर आदि मन्त्रोंका जप करे। ऐसा करनेवाला ब्राह्मण ज्ञान पाकर शरीर छूनेके बाद मोक्ष प्राप्त कर लेता है। द्विजेतर नर-नारियोंके त्रिकाल स्नान और पंचाक्षर मन्त्रके ही निरन्तर जपसे विशुद्ध ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इष्ट मन्त्रोंका सदा जप करनेसे बड़े-से-बड़े पापोंका भी नाश हो जाता है ॥ ६३—७० ॥

पौषमासमें विशेषरूपसे महानैवेद्य चढ़ाना चाहिये। यहाँ बतायी सभी वस्तुएँ बारहकी संख्यामें समझनी

चाहिये—चावल (बारह) भार^३, काली मिर्च (बारह) प्रस्थ^४, मधु और धूत (बारह) कुड़व^५, मूँग (बारह) द्रोण^६, बारह प्रकारके व्यंजन, धीमें तले हुए पूए, लड्डू और चावलके मिष्ठान (बारह) प्रस्थ, दही और दूध और बारह नारियल आदि फल, बारह सुपारी, करूर, कथा और पाँच प्रकारके सुगन्धद्रव्योंसे युक्त छत्तीस पत्ते पानसे महानैवेद्य बनता है ॥ ७१—७५ ॥

इस महानैवेद्यको देवताओंको अर्पण करके वर्णानुसार उस देवताके भक्तोंको दे देना चाहिये। इस प्रकारके ओदन—नैवेद्यसे मनुष्य पृथ्वीपर राष्ट्रका स्वामी होता है। महानैवेद्यके दानसे स्वर्गप्राप्ति होती है। हे द्विजश्रेष्ठो! एक हजार महानैवेद्योंके दानसे सत्यलोक प्राप्त होता है। और उस लोकमें पूर्णयु प्राप्त होती है एवं तीस हजार महानैवेद्योंके दानसे उसके ऊपरके लोकोंकी प्राप्ति होती है तथा पुनर्जन्म नहीं होता ॥ ७६—७९ ॥

छत्तीस हजार महानैवेद्योंको जन्मनैवेद्य कहा गया है। उतने नैवेद्योंका दान महापूर्ण कहलाता है। महापूर्ण नैवेद्य ही जन्मनैवेद्य कहा गया है। जन्मनैवेद्यके दानसे पुनर्जन्म नहीं होता ॥ ८०—८१ ॥

कार्तिक मासमें संक्रान्ति, व्यतीपात, जन्मनक्षत्र, पूर्णिमा आदि किसी पवित्र दिनको जन्मनैवेद्य चढ़ाना चाहिये। संवत्सरके प्रारम्भिक दिनको भी उत्तम जन्मनैवेद्यका अर्पण करना चाहिये। किसी अन्य महीनेमें भी जन्मनक्षत्रके पूर्ण योगके दिन तथा अधिक पुण्ययोगोंके मिलनेपर धीर-धीर छत्तीस हजार महानैवेद्य अर्पण करे। जन्मनैवेद्यके दानसे जन्मार्पणका फल प्राप्त होता है। जन्मार्पणसे प्रसन्न होकर भगवान् शंकर अपना सायुज्य प्रदान करते हैं। इसलिये इस जन्मनैवेद्यको शिवको ही अर्पण करना चाहिये। योनि और लिंगरूपमें विराजमान शिव जन्मको देनेवाले हैं, अतः पुनर्जन्मकी निवृत्तिके लिये जन्मनैवेद्यसे शिवकी पूजा करनी चाहिये ॥ ८२—८६ ॥

सारा चराचर जगत् विन्दु-नादस्वरूप है। विन्दु शक्ति

है और नाद शिव। इस तरह यह जगत् शिव-शक्तिस्वरूप ही है। नाद विन्दुका और विन्दु इस जगत्का आधार है, ये विन्दु और नाद (शक्ति और शिव) सम्पूर्ण जगत्के आधाररूपसे स्थित हैं। विन्दु और नादसे युक्त सब कुछ शिवस्वरूप है; क्योंकि वही सबका आधार है। आधारमें ही आधेयका समावेश अथवा लय होता है। यही सकलीकरण है। इस सकलीकरणकी स्थितिसे ही सृष्टिकालमें जगत्का प्रादुर्भाव होता है; इसमें संशय नहीं है। शिवलिंग विन्दुनादस्वरूप है, अतः उसे जगत्का कारण बताया जाता है। विन्दु देवी है और नाद शिव, इन दोनोंका संयुक्तरूप ही शिवलिंग कहलाता है। अतः जन्मके संकटसे छुटकारा पानेके लिये शिवलिंगकी पूजा करनी चाहिये। विन्दुरूपा देवी उमा माता हैं और नादस्वरूप भगवान् शिव पिता। इन माता-पिताके पूजित होनेसे परमानन्दकी ही प्राप्ति होती है। अतः परमानन्दका लाभ लेनेके लिये शिवलिंगका विशेषरूपसे पूजन करे ॥ ८७—९२ ॥

वे देवी उमा जगत्की माता हैं और भगवान् शिव जगत्के पिता। जो इनकी सेवा करता है, उस पुत्रपर इन दोनों माता-पिताकी कृपा नित्य अधिकाधिक बढ़ती रहती है। वे पूजकपर कृपा करके उसे अपना आन्तरिक ऐश्वर्य प्रदान करते हैं। अतः हे मुनीश्वरो! आन्तरिक आनन्दकी प्राप्तिके लिये शिवलिंगको माता-पिताका स्वरूप मानकर उसकी पूजा करनी चाहिये। भर्ग (शिव) पुरुषरूप है और भर्गा (शिवा अथवा शक्ति) प्रकृति कहलाती है। अव्यक्त आन्तरिक अधिष्ठानरूप गर्भको पुरुष कहते हैं और सुव्यक्त आन्तरिक अधिष्ठानभूत गर्भको प्रकृति। पुरुष आदिगर्भ है, वह प्रकृतिरूप गर्भसे युक्त होनेके कारण गर्भवान् है; क्योंकि वही प्रकृतिका जनक है। प्रकृतिमें जो पुरुषका संयोग होता है, यही पुरुषसे उसका प्रथम जन्म कहलाता है। अव्यक्त प्रकृतिसे महत्तत्वादिके क्रमसे जो जगत्का व्यक्त होना है, यही उस प्रकृतिका द्वितीय जन्म कहलाता है। जोव पुरुषसे

१—४—चार धानकी एक गुंजी या एक रत्नी होती है। पाँच रत्नीका एक पण (आधे माससे कुछ अधिक), आठ पणका एक भरण, आठ धरणका एक पल (ढाई छट्टीके लगभग), साँ पल (सोलह सेरके लगभग)—की एक तुला होती है, खोस तुलाका एक भार होता है, अर्थात् आजके माससे आठ मनका एक भार होता है। पावधरका एक कुड़वक होता है, चार कुड़वका एक प्रस्थ अर्थात् एक सेर होता है। चार सेर (प्रस्थ)-का एक आदक और आठ आदक (३२ सेर)-का एक प्रोण होता है। तीन द्वोषकी एक खारी और आठ द्वोषका एक वाह होता है।

ही बार-बार जन्म और मृत्युको प्राप्त होता है। मायाद्वारा अन्यरूपसे प्रकट किया जाना ही उसका जन्म कहलाता है। जीवका शरीर जन्मकालसे ही जीर्ण (छः भावविकारोंसे युक्त) होने लगता है, इसलिये उसे 'जीव' यह संज्ञा दी गयी है। जो जन्म लेता और विविध पाशोंद्वारा बन्धनमें पड़ता है, उसका नाम जीव है, जन्म और बन्धन जीव-शब्दका ही अर्थ है। अतः जन्ममृत्युरूपी बन्धनकी निवृत्तिके लिये जन्मके अधिष्ठानभूत माता-पितृस्वरूप शिवलिंगका भली-भाँति पूजन करना चाहिये ॥ १३—१०० ॥

शब्दादि पंचतन्मात्राओं तथा ऐचेन्द्रियोंसे विषय ग्रहण करनेसे 'भ' अर्थात् वृद्धिको 'गच्छति' अर्थात् प्राप्त होती है, इसलिये 'भग' शब्दका अर्थ प्रकृति है। भोग ही भगका मुख्य शब्दार्थ है। मुख्य 'भग' प्रकृति है और 'भगवान्' शिव कहे जाते हैं ॥ १०१—१०२ ॥

भगवान् ही भोग प्रदान करते हैं, दूसरा कोई नहीं दे सकता। भग (प्रकृति)-का स्वामी भगवान् ही विद्वानोंद्वारा भर्ता कहा जाता है। भग-प्रकृतिसे संयुक्त परमात्मलिंग और लिंगसंयुक्त भग-प्रकृति ही इस लोक और परलोकमें नित्य भोग प्रदान करते हैं, अतः भगवान् महादेवके शिवलिंगकी पूजा करनी चाहिये ॥ १०३—१०४ ॥

संसारको उत्पन्न करनेवाले सूर्य हैं और उत्पन्न करनेके कारण जगत् ही उनका (प्रत्यक्ष) चिन्ह है। [इसलिये उनका एक नाम भग भी है।] मुरुषको लिंगमें जगत्को उत्पन्न करनेवाले लिंगीकी ही पूजा करनी चाहिये। सृष्टिके अर्थको बतानेवाले चिह्नके रूपमें ही उसे लिंग कहा जाता है ॥ १०५—१०६ ॥

लिंग परमपुरुष शिवका बोध कराता है। इस प्रकार शिव और शक्तिके मिलनके प्रतीकको ही शिवलिंग कहा गया है। अपने चिह्नके पूजनसे प्रसन्न होकर महादेव उस चिह्नके कार्यरूप जन्मादिको समाप्त कर देते हैं तथा पूजकको पुनर्जन्मकी प्राप्ति नहीं होती। अतः सभी लोगोंको यथाप्राप्त बाह्य और मानसिक योद्धशेषपचारोंसे शिवलिंगका पूजन करना चाहिये ॥ १०७—१०९ ॥

"इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्वेश्वरसंहितामें पार्थिव पूजा आदिका प्रकार वर्णन नामक सोलहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १६ ॥"

रविवारको की गयी पूजा पुनर्जन्मका निवारण कर देती है। रविवारको महालिंगकी प्रणव (ॐ)-से ही पूजा करनी चाहिये। उस दिन पंचगव्यसे किया गया अधिष्ठेत्र विशेष महत्वका होता है। गोबर, गोमूत्र, गोदुध, उसका दही और गोघृत—ये पंचगव्य कहे जाते हैं ॥ ११०—१११ ॥

गायका दूध, गायका दही और गायका घी—इन तीनोंको पूजनके लिये शहद और शक्करके साथ पृथक्-पृथक् भी रखे और इन सबको मिलाकर सम्मिलितरूपसे पंचामृत भी तैयार कर ले। (इनके द्वारा शिवलिंगका अधिष्ठेत्र एवं स्नान कराये), फिर गायके दूध और अन्नके मेलसे नैवेद्य तैयार करके प्रणव मन्त्रके उच्चारणपूर्वक उसे भगवान् शिवको अपित करे। सम्पूर्ण प्रणवको ध्वनिलिंग कहते हैं। स्वयम्भूलिंग नादस्वरूप होनेके कारण नादलिंग कहा गया है। यन्त्र या अर्धा बिन्दुस्वरूप होनेके कारण बिन्दुलिंगके रूपमें विद्युत है। उसमें अचलरूपसे प्रतिष्ठित जो शिवलिंग है, वह मकार-स्वरूप है, इसलिये मकारलिंग कहलाता है। सवारी निकालने आदिके लिये जो चरलिंग होता है, वह उकारस्वरूप होनेसे उकारलिंग कहा गया है तथा पूजाकी दीक्षा देनेवाले जो गुरु या आचार्य हैं, उनका विग्रह अकारका प्रतीक होनेसे अकारलिंग माना गया है। इस प्रकार प्रणवमें प्रतिष्ठित अकार, उकार, मकार, बिन्दु, नाद और ध्वनिके रूपमें लिंगके छः भेद हैं। इन छहों लिंगोंकी नित्य पूजा करनेसे साधक जीवन्मुक्त हो जाता है; इसमें संशय नहीं है ॥ ११२—११४ ॥

भक्तिपूर्वक की गयी शिवपूजा मनुष्योंको पुनर्जन्मसे छुटकारा दिलाती है। ऋद्राक्षधारणसे एक चौथाई, विभूति (भस्म)-धारणसे आधा, मन्त्रजपसे तीन चौथाई और पूजासे पूर्ण फल प्राप्त होता है। शिवलिंग और शिवभक्तकी पूजा करके मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है। हे द्विजो! जो इस अध्यायको ध्यानपूर्वक पढ़ता-सुनता है, उसकी शिवभक्ति सुदृढ़ होकर बढ़ती रहती है ॥ ११५—११७ ॥

सत्रहवाँ अध्याय

**षड्लिंगस्वरूप प्रणवका माहात्म्य, उसके सूक्ष्म रूप (ॐकार) और स्थूल रूप (पंचाक्षर मन्त्र)-
का विवेचन, उसके जपकी विधि एवं महिमा, कार्यब्रह्मके लोकोंसे लेकर कारणरुद्रके
लोकोंतकका विवेचन करके कालातीत, पंचावरणविशिष्ट शिवलोकके
अनिर्वचनीय वैभवका निरूपण तथा शिवभक्तोंके सत्कारकी महत्ता**

ऋषिगण बोले—हे महामुने! हे प्रभो! आप हमारे लिये क्रमशः षड्लिंगस्वरूप प्रणवका माहात्म्य तथा शिवभक्तके पूजनकी विधि बताइये ॥ १ ॥

सूतजीने कहा—महर्षियो! आपलोग तपस्याके धनी हैं, आपने यह बड़ा सुन्दर प्रश्न उपस्थित किया है। किंतु इसका ठीक-ठीक उत्तर महादेवजी ही जानते हैं, दूसरा कोई नहीं। तथापि भगवान् शिवकी कृपासे ही मैं इस विषयका वर्णन करूँगा। वे भगवान् शिव हमारी और आपलोगोंकी रक्षाका महान् भार वारम्बार स्वयं ही ग्रहण करें ॥ २-३ ॥

'प्र' नाम है प्रकृतिसे उत्पन्न संसाररूपी महासागरका। 'प्रणव' इसे पार करनेके लिये दूसरी (नव) नाव है। इसलिये विद्वान् इस ओंकारको 'प्रणव' की संज्ञा देते हैं। [ॐकार अपने जप करनेवाले साधकोंसे कहता है—] 'प्र-प्रपञ्च, न—नहीं है, वः—तुमलोगोंके लिये ।' अतः इस भावको लेकर भी ज्ञानी पुरुष 'ओम्' को 'प्रणव' नामसे जानते हैं। इसका दूसरा भाव यह है— 'प्र-प्रकर्वण, न—नयेत्, वः—युवान् मोक्षम् इति वा प्रणवः। अर्थात् यह तुम सब उपासकोंको बलपूर्वक मोक्षतक पहुँचा देगा।' इस अभिप्रायसे भी इसे ऋषि-मुनि 'प्रणव' कहते हैं ॥ ४-५ ॥

अपना जप करनेवाले योगियोंके तथा अपने मन्त्रकी पूजा करनेवाले उपासकके समस्त कर्मोंका नाश करके यह दिव्य नूतन ज्ञान देता है; इसलिये भी इसका नाम प्रणव है। उन मायारहित महेश्वरको ही नव अर्थात् नूतन कहते हैं। वे परमात्मा प्रकृष्टरूपसे नव अर्थात् शुद्धस्वरूप हैं, इसलिये 'प्रणव' कहलाते हैं। प्रणव साधकको नव अर्थात् नवीन (शिवस्वरूप) कर देता है। इसलिये भी विद्वान् पुरुष उसे 'प्रणव' कहते हैं। अथवा प्रकृष्टरूपसे

नव—दिव्य परमात्मज्ञान प्रकट करता है, इसलिये वह प्रणव कहा गया है ॥ ६—७३/२ ॥

प्रणवके दो भेद बताये गये हैं—स्थूल और सूक्ष्म। एक अक्षररूप जो 'ओम्' है, उसे सूक्ष्म प्रणव जाना चाहिये और 'नमः शिवाय' इस पाँच अक्षरवाले मन्त्रको स्थूल प्रणव समझना चाहिये। जिसमें पाँच अक्षर व्यक्त नहीं हैं, वह सूक्ष्म है और जिसमें पाँचों अक्षर सुस्पष्टरूपसे व्यक्त हैं, वह स्थूल है। जीवन्मुकु पुरुषके लिये सूक्ष्म प्रणवके जपका विधान है। वही उसके लिये समस्त साधनोंका सार है। (यद्यपि जीवन्मुकुके लिये किसी साधनकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वह सिद्धरूप है, तथापि दूसरोंकी दृष्टिमें जबतक उसका शरीर रहता है, तबतक उसके द्वारा प्रणव-जपकी सहज साधना स्वतः होती रहती है।) वह अपनी देहका विलय होनेतक सूक्ष्म प्रणव मन्त्रका जप और उसके अर्थभूत परमात्म-तत्त्वका अनुसंधान करता रहता है। जब शरीर नष्ट हो जाता है, तब वह पूर्ण ब्रह्मस्वरूप शिवको प्राप्त कर लेता है—यह सुनिश्चित है ॥ ८—१०३/२ ॥

जो केवल मन्त्रका जप करता है, उसे निश्चय ही योगकी प्राप्ति होती है। जिसने छत्तीस करोड़ मन्त्रका जप कर लिया हो, उसे अवश्य ही योग प्राप्त हो जाता है। सूक्ष्म प्रणवके भी हस्त और दीर्घके भेदसे दो रूप जानने चाहिये। अकार, उकार, मकार, विन्दु, नाद, शब्द, काल और कला—इनसे युक्त जो प्रणव है, उसे 'दीर्घ प्रणव' कहते हैं। वह योगियोंके ही हृदयमें स्थित होता है। मकारपर्यन्त जो ओम् है, वह अ उ म्—इन तीन तत्त्वोंसे युक्त है। इसीको 'हस्त प्रणव' कहते हैं। 'अ' शिव है, 'उ' शक्ति है और मकार इन दोनोंकी एकता है; वह त्रितत्त्वरूप है, ऐसा समझकर हस्त प्रणवका जप

करना चाहिये । जो अपने समस्त पापोंका क्षय करना चाहते हैं, उनके लिये इस हस्त्र प्रणवका जप अत्यन्त आवश्यक है ॥ ११—१५ ॥

पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश—ये पाँच भूत तथा शब्द, स्पर्श आदि इनके पाँच विषय—ये सब मिलकर दस वस्तुएँ मनुष्योंकी कामनाके विषय हैं । इनकी आशा मनमें लेकर जो कर्मोंके अनुष्ठानमें संलग्न होते हैं, वे दस प्रकारके पुरुष प्रवृत्त अथवा प्रवृत्तिमार्गों कहलाते हैं तथा जो निष्कामभावसे शास्त्रविहित कर्मोंका अनुष्ठान करते हैं, वे निवृत्त अथवा निवृत्तिमार्गों कहे गये हैं । प्रवृत्त पुरुषोंको हस्त्र प्रणवका ही जप करना चाहिये और निवृत्त पुरुषोंको दीर्घ प्रणवका । व्याहतियों तथा अन्य मन्त्रोंके आदिमें इच्छानुसार शब्द और कलासे युक्त प्रणवका उच्चारण करना चाहिये । वेदके आदिमें और दोनों संध्याओंकी उपासनाके समय भी ओंकारका उच्चारण करना चाहिये ॥ १६—१७ ॥

प्रणवका नौ करोड़ जप करनेसे मनुष्य शुद्ध हो जाता है । पुनः नौ करोड़का जप करनेसे वह पृथ्वीतत्त्वपर विजय पा लेता है । तत्पश्चात् पुनः नौ करोड़का जप करके वह जल-तत्त्वको जीत लेता है । पुनः नौ करोड़

जपसे वह अनिनतत्त्वपर विजय पाता है । तदनन्तर फिर नौ करोड़का जप करके वह वायु-तत्त्वपर विजयी होता है और फिर नौ करोड़के जपसे आकाशको अपने अधिकारमें कर लेता है । इसी प्रकार नौ—नौ करोड़का जप करके वह क्रमशः गन्ध, रस, रूप, स्पर्श और शब्दपर विजय पाता है, इसके बाद फिर नौ करोड़का जप करके अहंकारको भी जीत लेता है ॥ १८—२१ ॥

हे द्विजो ! मनुष्य एक हजार मन्त्रोंके जप करनेसे नित्य शुद्ध होता है, इसके अनन्तर अपनी सिद्धिके लिये जप किया जाता है ॥ २२ ॥

इस तरह एक सौ आठ करोड़ प्रणवका जप करके उत्कृष्ट बोधको प्राप्त हुआ पुरुष शुद्ध योग प्राप्त कर लेता है । शुद्ध योगसे युक्त होनेपर वह जीवन्मुक्त हो जाता है; इसमें संशय नहीं है । सदा प्रणवका जप और प्रणवरूपी शिवका ध्यान करते-करते सम्पादियमें स्थित हुआ महायोगी पुरुष साक्षात् शिव ही है; इसमें संशय नहीं है । पहले अपने शरीरमें प्रणवके ऋषि, छन्द और देवता आदिका न्यास करके फिर जप आरम्भ करना चाहिये । अकारादि मातृकावर्णोंसे युक्त प्रणवका अपने अंगोंमें न्यास करके मनुष्य ऋषि हो जाता है । मन्त्रोंके दशविध*

* मन्त्रोंके दस संस्कार ये हैं—जनन, दीपन, वोधन, ताङ्न, अधिष्ठेचन, विमलीकरण, जीवन, तर्पण, गोपन और आप्यायन । इनकी विधि इस प्रकार है—

भौजपत्रर गोरोचन, कुङ्कम, चन्दनादिसे आत्माभिमुख त्रिकोण लिखे, फिर तीनों कोणोंमें छः-छः समान रेखाएँ खोचे । ऐसा करनेपर ४९ त्रिकोण कोष्ठ बनेंगे । उनमें ईशानकोष्ठसे मातृकवर्ण लिखकर देवताका आवाहन-पूजन करके मन्त्रका एक-एक वर्ण उच्चारण करके अस्त्र पर लिखे । ऐसा करनेपर 'जनन' नामक प्रथम संस्कार होगा ।

हंसमन्त्रका सम्पूर्ण करनेसे एक हजार जपद्वया मन्त्रका दूसरा 'दीपन' संस्कार होता है । यथा—हंसः रामाय नमः सोऽहम् ।

हूँ-बीज-सम्पूर्णित मन्त्रका पाँच हजार जप करनेसे 'वोधन' नामक तीसरा संस्कार होता है । यथा—हूँ रामाय नमः हूँ ।

फट-सम्पूर्णित मन्त्रका एक हजार जप करनेसे 'ताङ्न' नामक चतुर्थ संस्कार होता है । यथा—फट रामाय नमः फट ।

भूर्जपत्रर मन्त्र सिखकर 'ऐं हंसः ओं' इस मन्त्रसे जलको अधिष्ठित करे और उस अधिष्ठित जलसे अश्वत्थपत्रादिद्वारा मन्त्रका अधिषेक करे । ऐसा करनेपर 'अधिषेक' नामक पाँचवाँ संस्कार होता है ।

'ओं ज्ञां वयद्' इन वर्णोंसे सम्पूर्णित मन्त्रका एक हजार जप करनेसे 'विमलीकरण' नामक छठा संस्कार होता है यथा—ओं ज्ञां वयद् रामाय नमः वयद् ज्ञां ओं ।

स्वधा-वयद्-सम्पूर्णित भूलम्बन्त्रका एक हजार जप करनेसे 'जीवन' नामक सातवाँ संस्कार होता है । यथा—स्वधा वयद् रामाय नमः वयद् स्वधा ।

दुष्ट, जल एवं धूतके द्वाये मूलमन्त्रसे सौ वार तर्पण करना ही 'तर्पण' संस्कार है ।

हूँ-बीज-सम्पूर्णित एक हजार जप करनेसे 'गोपन' नामक नवम संस्कार होता है । यथा—हूँ रामाय नमः हूँ ।

हूँ-बीज-सम्पूर्णित एक हजार जप करनेसे 'आप्यायन' नामक दसवाँ संस्कार होता है । यथा—हूँ रामाय नमः हूँ ।

इस प्रकार संस्कृत किया हुआ मन्त्र शीर्ष सिद्धिप्रद होता है ।

संस्कार, मातृकान्यास तथा षड्घ्वशोधनैः आदिके साथ सम्पूर्ण न्यासका फल उसे प्राप्त हो जाता है। प्रवृत्ति तथा प्रवृत्ति-निवृत्तिसे मिश्रित भाववाले पुरुषोंके लिये स्थूल प्रणवका जप ही अभीष्टका साधक होता है॥ २३—२६३/२॥

क्रिया, तप और जपके योगसे शिवयोगी तीन प्रकारके होते हैं—[वे क्रमशः क्रियायोगी, तपोयोगी और जपयोगी कहलाते हैं।] जो धन आदि वैभवोंसे पूजा-सामग्रीका संचय करके हाथ आदि अंगोंसे नमस्कारादि क्रिया करते हुए इष्टदेवकी पूजामें लगा रहता है, वह 'क्रियायोगी' कहलाता है। पूजामें संलग्न रहकर जो परिमित भोजन करता हुआ बाहा इन्द्रियोंको जीतकर वशमें किये रहता है और मनको भी वशमें करके पद्धोह आदिसे दूर रहता है, वह 'तपोयोगी' कहलाता है। इन सभी सदगुणोंसे युक्त होकर जो सदा शुद्धभावसे रहता तथा समस्त काम आदि दोषोंसे रहित हो शान्तचित्तसे निरन्तर जप किया करता है, उसे महात्मा पुरुष 'जपयोगी' मानते हैं। जो मनुष्य सोलह प्रकारके उपचारोंसे शिवयोगी महात्माओंकी पूजा करता है, वह शुद्ध होकर सालोक्य आदिके क्रमसे उत्तरोत्तर उत्कृष्ट मुकिको प्राप्त कर लेता है॥ २७—३१॥

हे द्विजो! अब मैं जपयोगका वर्णन करता हूँ, आप सब लोग ध्यान देकर सुनें। तपस्या करनेवालेके लिये जपका उपदेश किया गया है; क्योंकि वह जप करते-करते अपने आपको सर्वथा शुद्ध (निष्याप) कर लेता है। हे ब्राह्मणो! पहले 'नमः' पद हो, उसके बाद चतुर्थी विभक्तिमें 'शिव' शब्द हो, तो पंचतत्त्वात्मक 'नमः शिवाय' मन्त्र होता है। इसे 'शिव-पंचाक्षर' कहते हैं। यह स्थूल प्रणवरूप है। इस पंचाक्षरके जपसे ही मनुष्य सम्पूर्ण सिद्धियोंको प्राप्त कर लेता है। पंचाक्षरमन्त्रके आदिमें औंकार लगाकर ही सदा उसका जप करना चाहिये। हे द्विजो! गुरुके मुखसे पंचाक्षरमन्त्रका उपदेश पाकर जहाँ सुखपूर्वक निवास किया जा सके, ऐसी

उत्तम भूमिपर महीनेके पूर्वपक्ष (शुक्ल)-में प्रतिपदासे आरम्भ करके कृष्णपक्षकी चतुर्दशीतक निरन्तर जप करता रहे। माघ और भादोंके महीने अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं। यह समय सब समयोंसे उत्तमोत्तम माना गया है॥ ३२—३५४/२॥

साधकको चाहिये कि वह प्रतिदिन एक बार परिमित भोजन करे, मौन रहे, इन्द्रियोंको वशमें रखे, अपने स्वामी एवं माता-पिताकी नित्य सेवा करे। इस नियमसे रहकर जप करनेवाला पुरुष एक हजार जपसे ही शुद्ध हो जाता है, अन्यथा वह ऋणी होता है। भगवान् शिवका निरन्तर चिन्तन करते हुए पंचाक्षर-मन्त्रका पाँच लाख जप करे। [जपकालमें इस प्रकार ध्यान के] कल्याणदाता भगवान् शिव कमलके आसनपर विराजमान हैं, उनका मस्तक श्रीगंगाजी तथा चन्द्रमाकी कलासे सुशोभित है, उनकी बायाँ जाँघपर आदिशक्ति भगवती उमा बैठी हैं, वहाँ खड़े हुए बड़े-बड़े गण भगवान् शिवकी शोभा बढ़ा रहे हैं, महादेवजी अपने चार हाथोंमें मृगमुद्रा, टंक तथा वर एवं अभ्यक्ती मुद्राएँ धारण किये हुए हैं। इस प्रकार सदा सबपर अनुग्रह करनेवाले भगवान् सदाशिवका बार-बार स्मरण करते हुए हृदय अथवा सूर्यमण्डलमें पहले उनकी मानसिक पूजा करके फिर पूर्वाभिमुख हो पूर्वोक्त पंचाक्षरी विद्याका जप करे। उन दिनों साधक सदा शुद्ध कर्म ही करे। जपकी समाप्तिके दिन कृष्णपक्षकी चतुर्दशीको प्रातःकाल नित्यकर्म सम्पन्न करके शुद्ध एवं सुन्दर स्थानमें [शैच-संतोषादि] नियमोंसे युक्त होकर शुद्ध हृदयसे पंचाक्षर-मन्त्रका बाहर हजार जप करे॥ ३६—४२॥

तप्सचात् सपलीक पाँच ब्राह्मणोंका, जो श्रेष्ठ एवं शिवभक्त हों, वरण करे। इनके अतिरिक्त एक श्रेष्ठ आचार्यका भी वरण करे और उसे साम्बसदाशिवका स्वरूप समझे। ईशान, तत्पुरुष, अधोर, वामदेव तथा सद्योजात—इन पाँचोंके प्रतीकस्वरूप श्रेष्ठ और शिवभक्त ब्राह्मणोंका वरण करनेके पश्चात् पूजन-सामग्रीको एकत्र

१-पद्मस्थ-शोधनका कार्य ही दीक्षाके अनारंभ है। उसमें पहले कुण्डमें या बेदीपर अस्तिनस्थापन होता है। वहाँ पद्मस्थका शोधन करके होमसे ही दीक्षा सम्पन्न होती है। विस्तार-भवसे अधिक विवरण नहीं दिया जा रहा है।

करके भगवान् शिवका पूजन आरम्भ करे। विधिपूर्वक शिवकी पूजा सम्पन्न करके होम आरम्भ करे। अपने गृहसूत्रके अनुसार मुखान्त कर्म करनेके [अर्थात् परिस्मूहन, उपलेपन, उल्लेखन, भृद्-उद्धरण और अध्युक्षण—इन पंच भू-संस्कारोंके पश्चात् वेदीपर स्वाभिमुख अग्निको स्थापित करके कुशकण्डका करनेके अनन्तर प्रज्ञलित अग्निमें आज्यभागान्त आहुति देकर] पश्चात् होमका कार्य आरम्भ करे। कपिला गायके घीसे ग्यारह, एक सौ एक अथवा एक हजार एक आहुतियाँ स्वयं ही दे अथवा विद्वान् पुरुष शिवभक्त ब्राह्मणोंसे एक सौ आठ आहुतियाँ दिलाये॥ ४३—४७ ॥

होमकर्म समाप्त होनेपर गुरुको दक्षिणाके रूपमें एक गाय और बैल देने चाहिये। ईशान आदिके प्रतीकरूप जिन पाँच ब्राह्मणोंका वरण किया गया हो, उनको ईशान आदिका ही स्वरूप समझे तथा आचार्यको साम्बसदाशिवका स्वरूप माने। इसी भावनाके साथ उन सबके चरण धोये और उनके चरणोदकसे अपने मस्तकको सीचे। ऐसा करनेसे वह साधक छत्तीस करोड़ तीर्थोंमें स्नान करनेका फल तत्काल प्राप्त कर लेता है। उन ब्राह्मणोंको भक्तिपूर्वक दशांग अन देना चाहिये। गुरुपत्नीको पराशक्ति मानकर उनका भी पूजन करे। ईशानादि-क्रमसे उन सभी ब्राह्मणोंका उत्तम अन्नसे पूजन करके अपने वैभव-विस्तारके अनुसार रुद्राक्ष, वस्त्र, बड़ा और पूआ आदि अर्पित करे। तदनन्तर दिव्यालादिको बलि देकर ब्राह्मणोंको भरपूर भोजन कराये। इसके बाद देवश्वर शिवसे प्रार्थना करके अपना जप समाप्त करे। इस प्रकार पुरश्चरण करके मनुष्य उस मन्त्रको सिद्ध कर लेता है। फिर पाँच लाख जप करनेसे उसके समस्त पापोंका नाश हो जाता है। तदनन्तर पुनः पाँच लाख जप करनेपर मनुष्य अतलसे लेकर सत्यलोकतकके लोकोंका ऐश्वर्य प्राप्त कर लेता है॥ ४८—४५ ॥

यदि अनुष्ठान पूर्ण होनेके पहले बीचमें ही साधककी मृत्यु हो जाय तो वह परलोकमें उत्तम भोग भोगनेके पश्चात् पुनः पृथ्वीपर जन्म लेकर पंचाक्षर-मन्त्रके जपका अनुष्ठान करता है। [समस्त लोकोंका

ऐश्वर्य पानेके पश्चात् मन्त्रको सिद्ध करनेवाला] वह पुरुष यदि पुनः पाँच लाख जप करे तो उसे ब्रह्माजीका सामीप्य प्राप्त होता है। पुनः पाँच लाख जप करनेसे उसे सारूप्य नामक ऐश्वर्य प्राप्त होता है। सौ लाख जप करनेसे वह साक्षात् ब्रह्माके समान हो जाता है। इस तरह कार्य-ब्रह्म (हिरण्यगर्भ)-का सायुज्य प्राप्त करके वह उस ब्रह्माका प्रलय होनेतक उस लोकमें यथेष्ट भोग भोगता है। फिर दूसरे कल्पका आरम्भ होनेपर वह ब्रह्माजीका पुत्र होता है। उस समय फिर तपस्या करके दिव्य तेजसे प्रकाशित होकर वह क्रमशः मुक्त हो जाता है॥ ४५—५८ ॥

पृथ्वी आदि कार्यस्वरूप भूतोद्वारा पातालसे लेकर सत्यलोकपर्यन्त ब्रह्माजीके चौदह लोक क्रमशः निर्मित हुए हैं। सत्यलोकसे ऊपर क्षमालोकतक जो चौदह भुवन हैं, वे भगवान् विष्णुके लोक हैं। उस क्षमालोक वाले श्रेष्ठ वैकुण्ठमें महाभोगी कार्यविष्णु कार्यलक्ष्मीसहित सबकी रक्षा करते हुए विराजमान रहते हैं। क्षमालोकसे ऊपर शुचिलोकपर्यन्त अद्वैतस भुवन स्थित है। शुचिलोकके अन्तर्गत कैलासमें प्राणियोंका संहार करनेवाले रुद्रदेव विराजमान हैं। शुचिलोकसे ऊपर अहिंसालोकपर्यन्त छप्पन भुवनोंकी स्थिति है। अहिंसालोकका आश्रय लेकर जो ज्ञान-कैलास नामक नगर शोभा पाता है, उसमें कार्यभूत महेश्वर सबको अदृश्य करके रहते हैं। अहिंसालोकके अन्तमें कालचक्रकी स्थिति है। तदनन्तर कालातीत स्थित है; जहाँ कालचक्रेश्वर नामक शिव माहिष धर्मका आश्रय लेकर सबको कालसे संयुक्त किये रहते हैं॥ ५९—६४ ॥

असत्य, अशुचि, हिंसा, निर्दयता—ये असत्य आदि चार पाद कामरूप धरण करनेवाले शिवके अंश हैं। नास्तिकतायुक्त लक्ष्मी, दुःसंग, वेदाबाह्य शब्द, क्रोधका संग, कृष्ण वर्ण—ये महामहिषके रूपवाले हैं। यहाँतक महेश्वरके विराट-स्वरूपका वर्णन किया गया। वर्हांतक लोकोंका तिरोधन अथवा लय होता है। उससे नीचे कर्मोंका भोग है और उससे ऊपर ज्ञानका भोग, उसके नीचे कर्मामाया है और उसके ऊपर ज्ञानमाया॥ ६५—६८ ॥

[अब मैं कर्ममाया और ज्ञानमायाका तात्पर्य बता रहा हूँ—] 'मा' का अर्थ है लक्ष्मी; उससे कर्मभोग यात—प्राप्त होता है, इसलिये वह माया अथवा कर्ममाया कहलाती है। इसी तरह मा अर्थात् लक्ष्मीसे ज्ञानभोग यात अर्थात् प्राप्त होता है, इसलिये उसे माया या ज्ञानमाया कहा गया है। उपर्युक्त सीमासे नीचे नश्वर भोग हैं और ऊपर नित्य भोग। उससे नीचे ही तिरोधान अथवा लय है, ऊपर तिरोधान नहीं है। वहाँसे नीचे ही कर्ममय पाशोंद्वारा बन्धन होता है। ऊपर बन्धनका सदा अभाव है। उससे नीचे ही जीव सकाम कर्मोंका अनुसरण करते हुए विभिन्न लोकों और योनियोंमें चक्कर काटते हैं। उससे ऊपरके लोकोंमें निष्काम कर्मका ही भोग बताया गया है ॥६९—७१ १/२ ॥

बिन्दुपूजामें तत्पर रहनेवाले उपासक वहाँसे नीचेके लोकोंमें ही घूमते हैं। उसके ऊपर तो निष्कामभावसे शिवलिंगकी पूजा करनेवाले उपासक ही जाते हैं। उसके नीचे शिवके अतिरिक्त अन्य देवताओंकी पूजा करनेवाले घूमते रहते हैं। जो एकमात्र शिवकी ही उपासनामें तत्पर है, वे उससे ऊपरके लोकोंमें जाते हैं। वहाँसे नीचे जीवकोटि है और ऊपर ईश्वरकोटि ॥७२—७४ ॥

नीचे संसारी जीव रहते हैं और ऊपर मुक्त लोग। प्राकृत द्रव्योंसे पूजा करनेवाले उसके नीचे रहते हैं और पौरुष द्रव्योंसे पूजा करने वाले उससे ऊपर जाते हैं। उसके नीचे शक्तिलिंग है और उसके ऊपर शिवलिंग। उसके नीचे सणुण लिंग है और उसके ऊपर निर्णुण लिंग। उसके नीचे कल्पित लिंग है और उसके ऊपर कल्पित नहीं है। उसके नीचे आधिभौतिक लिंग और उसके ऊपर आध्यात्मिक लिंग है। उसके नीचे एक सौ बारह शक्ति-लोक हैं। उसके नीचे विन्दुरूप और उसके ऊपर नादरूप है। उसके नीचे कर्मलोक है और उसके ऊपर ज्ञानलोक ॥७५—७९ १/२ ॥

इसी प्रकार उसके ऊपर मद और अहंकारका नाश करनेवाली नम्रता है, वहाँ जन्मजनित तिरोधान नहीं है। उसका निवारण किये बिना वहाँ किसीका प्रवेश सम्भव नहीं है। इस प्रकार तिरोधानका निवारण करनेसे वहाँ

ज्ञानशब्दका अर्थ ही प्रकाशित होता है। आधिभौतिक पूजा करनेवाले लोग उससे नीचेके लोकोंमें ही चक्कर काटते हैं। जो आध्यात्मिक उपासना करनेवाले हैं, वे ही उससे ऊपरको जाते हैं। इस प्रकार वहाँतक महालोकरूपी आत्मलिंगमें विभागको जानना चाहिये और प्रकृति आदि (प्रकृति, महत्, अहंकार, पंच तन्मात्राएँ) आठ बन्धोंको भी जाने। इस प्रकार सब लौकिक तथा वैदिक स्वरूपको जानना चाहिये ॥८०—८३ ॥

जो सत्य-अहिंसा आदि धर्मोंसे युक्त होकर भगवान् शिवके पूजनमें तत्पर रहते हैं, वे अधर्मरूप भैंसेपर आरूढ़ कालचक्रको पार कर जाते हैं। कालचक्रेश्वरकी सीमातक जो विराट् महेश्वरलोक बताया गया है, उससे ऊपर वृथभके आकारमें धर्मकी स्थिति है। वह ब्रह्मचर्यका मूर्तिमान् रूप है। उसके सत्य, शौच, अहिंसा और दया—ये चार पाद हैं। वह शिवलोकके आगे स्थित है। क्षमा उसके सींग हैं, शम कान हैं, वे वेदध्वनिरूपी शब्दसे विभूषित हैं। आस्तिकता उसके दोनों नेत्र हैं, निःश्वास ही उसकी श्रेष्ठ बुद्धि एवं मन है। क्रिया आदि धर्मरूपी जो वृथभ हैं, वे कारण आदिमें सर्वादा स्थित हैं—ऐसा जानना चाहिये। उस क्रियारूप वृथभाकार धर्मपर कालातीत शिव आरूढ़ होते हैं ॥८४—८७ ॥

ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी जो अपनी-अपनी आयु है, उसीको दिन कहते हैं। जहाँ धर्मरूपी वृथभकी स्थिति है, उससे ऊपर न दिन है, न रात्रि और वहाँ जन्म-मरण आदि भी नहीं है। फिर कारणस्वरूप ब्रह्माके भी कारण सत्यलोकपर्यन्त चौदह लोक स्थित हैं, जो पांचभौतिक गन्ध आदिसे परे हैं। उनकी सनातन स्थिति है। सूक्ष्म गन्ध ही उनका स्वरूप है ॥८८—८९ १/२ ॥

इसके ऊपर कारणरूप विष्णुके चौदह लोक स्थित हैं। उनसे भी ऊपर फिर कारणरूपी रुद्रके अद्वाईस लोकोंकी स्थिति मानी गयी है। फिर उनसे भी ऊपर कारणेश शिवके छप्पन लोक विद्यमान हैं। तदनन्तर शिवसम्पत्त ब्रह्मचर्यलोक है और वहाँ पाँच आवरणोंसे युक्त ज्ञानमय कैलास है; वहाँपर पाँच मण्डलों, पाँच

ब्रह्मकलाओं और आदिशक्तिसे संयुक्त आदिलिंग प्रतिष्ठित है। उसे परमात्मा शिवका शिवालय कहा गया है। वहीं पराशक्तिसे युक्त परमेश्वर शिव निवास करते हैं। वे सृष्टि, पालन, संहार, तिरोभाव और अनुग्रह—इन पाँचों कृत्योंमें प्रवीण हैं। उनका श्रीविग्रह सच्चिदानन्दस्वरूप है॥ ९०—९५॥

वे सदा ध्यानरूपी धर्ममें ही स्थित रहते हैं और सदा सबपर अनुग्रह किया करते हैं। वे स्वात्माराम हैं और समाधिरूपी आसनपर आसीन हो सुशोभित होते हैं। कर्म एवं ध्यान आदिका अनुष्ठान करनेसे क्रमशः साधनपथमें आगे बढ़नेपर उनका दर्शन साध्य होता है। नित्य-नैमित्तिक आदि कर्माण्डारा देवताओंका यजन करनेसे भगवान् शिवके समाराधन-कर्ममें मन लगता है। क्रिया आदि जो शिवसम्बन्धी कर्म हैं, उनके द्वारा शिवज्ञान सिद्ध करे। जिन्होंने शिवतत्त्वका साक्षात्कार कर लिया है अथवा जिनपर शिवकी कृपाद्विष्ट पड़ चुकी है, वे सब मुक्त ही हैं; इसमें संशय नहीं है॥ ९६—९८॥

आत्मस्वरूपसे जो स्थिति है, वही मुक्ति है। एकमात्र अपने आत्मामें रमण या आगनन्दका अनुभव करना ही मुकिका स्वरूप है। जो पुरुष क्रिया, तप, जप, ज्ञान और ध्यानरूपी धर्मोंमें भलीभाँति स्थित है, वह शिवका साक्षात्कार करके स्वात्मारामत्वस्वरूप मोक्षको भी प्राप्त कर लेता है। जैसे सूर्य अपनी किरणोंसे अशुद्धिको दूर कर देते हैं, उसी प्रकार कृपा करनेमें कुशल भगवान् शिव अपने भक्तके अज्ञानको मिटा देते हैं। अज्ञानकी निवृत्ति हो जानेपर शिवज्ञान स्वतः प्रकट हो जाता है। शिवज्ञानसे अपना विशुद्ध स्वरूप आत्मारामत्व प्राप्त होता है और आत्मारामत्वकी सम्पूर्ण सिद्धि हो जानेपर मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है॥ ९९—१०२॥

(शिव मन्त्रका) सौ लाख जप करनेसे ब्रह्मपदकी प्राप्ति होती है और फिर सौ लाख जप करनेसे विष्णुपद प्राप्त होता है॥ १०३॥

पुनः सौ लाख (शिवमन्त्रका) जप करनेसे स्त्रका पद प्राप्त होता है। उसके बाद फिर सौ लाख जप करनेपर ऐश्वर्यमय पदकी प्राप्ति हो जाती है॥ १०४॥

फिर इसी प्रकार सम्पूर्ण रूपसे जप करनेपर शिवलोकके आदिभूत अर्थात् शिवलोकके आधारभूत निर्माता कालचक्रको प्राप्त किया जा सकता है॥ १०५॥

यह कालचक्र पंचचक्रोंसे युक्त है, जो एकके पश्चात् एकमें स्थित हैं। सृष्टि और मोहसे युक्त ब्रह्मचक्र, भोग तथा मोहसे युक्त वैष्णवचक्र, कोप एवं मोहसे युक्त गौत्रचक्र, भ्रमणसे युक्त ईश्वरचक्र और ज्ञान तथा मोहसे युक्त शिवचक्र हैं। ऐसा इन पाँच चक्रोंके विषयमें बुद्धिमानोंका कहना है॥ १०६—१०७॥

पुनः दस करोड़ (शिवमन्त्रका) जप करनेपर कारणब्रह्मका पद प्राप्त होता है। तदनन्तर दस करोड़ जप करनेसे ऐश्वर्ययुक्त पदकी प्राप्ति होती है॥ १०८॥

इस प्रकार क्रमशः जप करता हुआ प्राणी महान् ओजस्वी विष्णुके पदको प्राप्ताकर पुनः उसी क्रमसे जपता हुआ महात्माओंके उस ऐश्वर्यपदको प्राप्त करता है॥ १०९॥

बिना असावधानी किये १०५ करोड़ मन्त्रोंका जप करनेके पश्चात् वह प्राणी पाँच आवरणों (पशु, पाश, माया, शक्ति, रोध)-से बाहर स्थित शिवलोक प्राप्त करता है॥ ११०॥

वहाँ (उस शिवलोकमें) ऊजसमण्डप है, नन्दीश्वरका उत्तम निवास है। तपस्यारूपी वृषभ वहाँपर दिखायी देता है॥ १११॥

वहाँपर पाँचों आवरणोंसे बाहर सद्योजात (अर्थात् तत्काल आवरणरहित हुए भगवान् शिव)-का स्थान है। पुनः चतुर्थ आवरणमें वामदेवका स्थान है॥ ११२॥

उसके पश्चात् तृतीयावरणमें अधोर शिवका, दूसरे आवरणमें साम्बशिवका मंगलमय तथा प्रथमावरणमें ईशान शिवका निवासस्थान है। उसके पश्चात् पंचम मण्डप हैं, जहाँ ध्यान और धर्मका निवास रहता है॥ ११३—११४॥

तदनन्तर चतुर्थ मण्डप है, वहाँपर चन्द्रशेखरकी मूर्तिसे युक्त भगवान् बलिनाथका वासस्थान है, जो पूर्ण अमृतको प्रदान करनेवाला है॥ ११५॥

तृतीय मण्डपमें सोमस्कन्दका परम निवासस्थान है। उसके पश्चात् द्वितीय मण्डप है, आस्तिक लोग जिसे

नृत्यमण्डप कहते हैं ॥ ११६ ॥

प्रथम मण्डपमें मूलमायाका स्थान है, वहाँपर अत्यन्त शोभा वास करती है। उसके पारे गर्भगृह है, जहाँपर शिवका लिंगस्थान है ॥ ११७ ॥

नन्दीस्थानके पश्चात् शिवके वैभवको कोई नहीं जान सकता है। नन्दीश्वर (गर्भगृहसे) बाहर रहकर शिवके पंचाक्षर मन्त्रकी उपासना करते हैं ॥ ११८ ॥

इस प्रकार गुरुपर्मारसे नन्दीश्वर और सनत्कुमारके संबादकी जानकारी मुझे हुई है। उसके पश्चात्काका परम रहस्य स्वसंवेद्य है, जिसका अनुभव स्वयं शिव करते हैं ॥ ११९ ॥

आस्तिकजनोंका कहना है कि साक्षात् शिवकी कृपासे ही शिवलोकके ऐश्वर्यको लोग जान सकते हैं, अन्यथा असम्भव है ॥ १२० ॥

इस प्रकारसे शिवका साक्षात्कार प्राप्तकर जितेन्द्रिय ब्राह्मण मुक्त हो जाते हैं अर्थात् मोक्षको प्राप्त कर लेते हैं। अब मैं अन्य क्षत्रियादि वर्णोंके विषयमें कहूँगा। उसे आदरपूर्वक आप सब सुनें ॥ १२१ ॥

यदि ब्राह्मणको आयु प्राप्त करनेकी इच्छा है तो उसे गुरुके द्वारा बताये गये उपदेशके अनुसार इस शिवके पंचाक्षरमन्त्रका विधिपूर्वक पाँच लाख जप करना चाहिये ॥ १२२ ॥

यदि स्त्री स्त्रीत्व अर्थात् स्त्रीयोनिसे मुक्त होना चाहती है तो वह भी पाँच लाख पंचाक्षर मन्त्रोंका जप करे। उन मन्त्रोंके प्रभावसे पुरुषका जन्म लेकर वह क्रमशः मुक्त हो जाती है ॥ १२३ ॥

क्षत्रिय पाँच लाख मन्त्रोंका जप करके क्षत्रियत्वको दूर कर लेता है अर्थात् क्षत्रियवर्णमें रहनेवाले गुणोंसे वह मुक्त हो जाता है। तदनन्तर पुनः पाँच लाख मन्त्रोंका जप करनेपर वह ब्राह्मण हो जाता है। फिर उतनेही मन्त्रोंके जपसे मन्त्रसिद्धि प्राप्त हो जाती है और तत्पश्चात् उसी क्रमसे पाँच लाख मन्त्रोंका जप करनेपर वह मनुष्य मुक्त हो जाता है। वैश्य पंचलक्ष मन्त्रोंका जप करनेसे अपने वैश्यत्व (गुण)-का परिवर्त्याग कर देता है। पुनः पंचलक्ष मन्त्रका जप करनेपर वह मन्त्र-क्षत्रिय कहलानेका

अधिकारी हो जाता है। उसके बाद पाँच लाख मन्त्रोंका जप करनेसे क्षत्रियत्वको दूर कर देता है। तदनन्तर पुनः पंचलक्ष मन्त्रका जप करके मन्त्र-ब्राह्मण कहलानेका अधिकारी हो जाता है। इसी प्रकार शूद्र भी मन्त्रके अन्तमें नमः शब्द लगाकर यदि २५ लाख मन्त्रोंका जप करता है तो वह शूद्र मन्त्रविप्रत्वको प्राप्त द्विज (ब्राह्मण) हो जाता है। चाहे स्त्री हो अथवा पुरुष, ब्राह्मण हो या अन्य ही कोई वर्ण हो, पंचाक्षर मन्त्रका जप करनेसे सभी शूद्र हो जाते हैं ॥ १२४—१२८ ॥

जो कामनापूर्तिके लिये आतुर है, उसे चाहिये कि वह नमः को आदि-अन्तमें लगाकर शिवमन्त्रका सदैव जप करता रहे। स्त्रियों तथा शूद्रोंके लिये मन्त्रजपका जैसा स्वरूप कहा गया है, उसीके अनुसार गुरुको भी चाहिये कि वह उन्हें निर्देश दे ॥ १२९ ॥

साधकको चाहिये कि वह पाँच लाख जप करनेके पश्चात् भगवान् शिवकी प्रसन्नताके लिये महाभियेक एवं नैवेद्य निवेदन करके शिवभक्तोंका पूजन करे ॥ १३० ॥

शिवभक्तकी पूजासे भगवान् शिव बहुत प्रसन्न होते हैं। शिव और उनके भक्तमें कोई भेद नहीं है। वह साक्षात् शिवस्वरूप ही है ॥ १३१ ॥

शिवस्वरूप मन्त्रको धारण करके वह शिव ही हो जाता है, शिवभक्तका शरीर शिवरूप ही है। अतः उसकी सेवामें तत्पर रहना चाहिये ॥ १३२ ॥

जो शिवके भक्त हैं, वे लोक और वेदकी सारी क्रियाओंको जानते हैं। जो क्रमशः जितना-जितना शिवमन्त्रका जप कर लेता है, उसके शरीरको उतना ही उतना शिवका सामीप्य प्राप्त हो जाता है, इसमें संशय नहीं है। शिवभक्त स्त्रीका रूप देवी पार्वतीका ही स्वरूप है। वह जितना मन्त्र जपती है, उसे उतना ही देवीका सांनिध्य प्राप्त होता जाता है ॥ १३३—१३४^{१/२} ॥

बुद्धिमान् व्यक्तिको शिवका पूजन करना चाहिये, इससे वह साक्षात् मन्त्ररूप हो जाता है। साधक स्वयं शिवस्वरूप होकर पराशक्तिका पूजन करे। शक्ति, वैर (मूर्ति) तथा लिंगका चित्र बनाकर अथवा मिट्ठी आदिसे इनकी आकृतिका निर्माण करके प्राणप्रतिष्ठापूर्वक निष्कपट

भावसे इनका पूजन करे ॥ १३५—१३६ ॥

शिवलिंगको शिव मानकर अपनेको शक्तिरूप समझकर, शक्तिलिंगको देवी और अपनेको शिवरूप समझकर शिवलिंगको नादरूप तथा शक्तिको बिन्दुरूप मानकर परस्पर सटे हुए शक्तिलिंग और शिवलिंगके प्रति उपप्रधान और प्रधानकी भावना रखते हुए जो शिव और शक्तिका पूजन करता है, वह मूलरूपी भावना करनेके कारण शिवरूप ही है । शिवभक्त शिवमन्त्ररूप होनेके कारण शिवके ही स्वरूप हैं ॥ १३७—१३९ ॥

जो सोलह उपचारोंसे उनकी पूजा करता है, उसे अभीष्ट वस्तुकी प्राप्ति होती है । जो शिवलिंगोपासक शिवभक्तकी सेवा आदि करके उसे आनन्द प्रदान करता है, उस विद्वानपर भगवान् शिव बड़े प्रसन्न होते हैं । पाँच, दस या सौ सप्तलीक शिवभक्तोंको बुलाकर भोजन आदिके द्वारा पल्लीसहित उनका सदैव समादर करे । धनमें, देहमें और मन्त्रमें शिवभावना रखते हुए उन्हें शिव और शक्तिका स्वरूप जानकर निष्कपटभावसे उनकी पूजा करे । ऐसा करनेवाला पुरुष शिवशक्तिस्वरूप होकर इस भूतलपर फिर जन्म नहीं लेता है ॥ १४०—१४२ ॥

शिवभक्तकी नाभिके नीचेका भाग ब्रह्मभाग तथा नाभिसे ऊपर कण्ठपर्यन्त तकका भाग विष्णुभाग और मुख शिवलिंगस्वरूप कहा गया है । मृत्युके पश्चात् (जिनका) दाहादि संस्कार हुआ हो अथवा जो दाहादि संस्कारसे रहित हों, उन पितरोंके उद्देश्यसे शिवको ही

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहितामें प्रणवयुक्त पंचाक्षर मन्त्रका माहात्म्य-वर्णन नामक सप्तरहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ १७ ॥

आदिपितर मानकर उनकी पूजा करनी चाहिये । पुनः आदिमाता शिवकी शक्तिकी पूजाकर शिवभक्तोंका पूजन करना चाहिये । ऐसा करनेवाला पुरुष मरनेके पश्चात् क्रमशः पितॄलोकको प्राप्त करता है । तदनन्तर उसे मुक्ति प्राप्त हो जाती है । दस क्रियावान् पुरुषोंसे युक्त योगियोंकी अपेक्षा एक तपोयुक्त प्राणी श्रेष्ठ है ॥ १४३—१४६ ॥

सौ तपोयुक्तों (तपस्वियों)-की अपेक्षा एक जपयुक्त जापक विशिष्ट है । सहस्र जपयुक्त जापकोंकी अपेक्षा एक शिवज्ञानीका विशेष महत्व है ॥ १४७ ॥

एक लाख शिवज्ञानीयोंसे शिवका ध्यान करनेवाला एक ध्यानी श्रेष्ठ है और करोड़ ध्यानीयोंकी अपेक्षा शिवके लिये एक समाधिस्थ श्रेष्ठ है ॥ १४८ ॥

इस प्रकार उत्तरोत्तर वैशिष्ट्य-क्रमसे की जानेवाली पूजासे प्राप्त फलमें भी विशिष्टता आ जाती है, जिसको जानना विद्वानोंके लिये भी कठिन है । इस कारणसे शिवभक्तकी महिमाको कौन मनुष्य जान सकता है । जो मनुष्य शिवशक्ति और शिवभक्तकी पूजा भक्तिपूर्वक करता है, वह शिवस्वरूप होकर सदैव कल्याणको प्राप्त करता है । जो ब्राह्मण इस वेदसम्मत अध्यायको अर्थसहित पढ़ता है, वह शिवज्ञानी होकर शिवके साथ आनन्द प्राप्त करता है । हे मुनीश्वरो ! विद्वान् पुरुषको चाहिये कि यह अध्याय वह शिवभक्तोंको सुनाये ॥ १४९—१५२ ॥

हे बुधजनो ! ऐसा करनेसे भगवान् शिवकी कृपासे उनका अनुग्रह प्राप्त हो जाता है ॥ १५३ ॥

अठारहवाँ अध्याय

बन्धन और मोक्षका विवेचन, शिवपूजाका उपदेश, लिंग आदिमें शिवपूजनका विधान, भस्मके स्वरूपका निरूपण और महत्व, शिवके भस्मधारणका रहस्य, शिव एवं गुरु शब्दकी व्युत्पत्ति तथा विघ्नशानितके उपाय और शिवधर्मका निरूपण
ऋषिगण बोले—हे सर्वज्ञोंमें श्रेष्ठ ! बन्धन और मोक्षका स्वरूप क्या है ? यह हमें बताइये ॥ १/२ ॥
सूतजी बोले—[हे महर्षियो!] मैं बन्धन और

मोक्षका स्वरूप तथा मोक्षके उपायका वर्णन करूँगा । आपलोग आदरपूर्वक सुनें । जो प्रकृति आदि आठ बन्धनोंसे बैधा हुआ है, वह जीव बद्ध कहलाता है और

जो उन आठों बन्धनोंसे छूटा हुआ है, उसे मुक्त कहते हैं। प्रकृति आदिको वशमें कर लेना मोक्ष कहलाता है। बन्धन आगन्तुक है और मोक्ष स्वतःसिद्ध है। बद्ध जीव जब बन्धनसे मुक्त हो जाता है, तब उसे मुक्त जीव कहते हैं॥ १—३॥

प्रकृति, बुद्धि (महतत्त्व), त्रिगुणात्मक अहंकार और पाँच तन्मात्राएँ—इन्हें ज्ञानी पुरुष प्रकृत्याद्यष्टक मानते हैं। प्रकृति आदि आठ तत्त्वोंके समूहसे देहकी उत्पत्ति हुई है। देहसे कर्म उत्पन्न होता है और फिर कर्मसे नूतन देहकी उत्पत्ति होती है। इस प्रकार बार-बार जन्म और कर्म होते रहते हैं॥ ४—५॥

शरीरको स्थूल, सूक्ष्म और कारणके भेदसे तीन प्रकारका जानना चाहिये। स्थूल शरीर (जाग्रत्-अवस्थामें) व्यापार करनेवाला, सूक्ष्म शरीर (जाग्रत् और स्वप्न-अवस्थाओंमें) इन्द्रिय-भोग प्रदान करनेवाला तथा कारणशरीर (सुखुपावस्थामें) आत्मानन्दकी अनुभूति करनेवाला कहा गया है। जीवको उसके प्रारब्ध-कर्मनुसार सुख-दुःख प्राप्त होते हैं। वह अपने पुण्यकर्मोंके फलस्वरूप सुख और पापकर्मोंके फलस्वरूप दुःख प्राप्त करता है। अतः कर्मपाशसे बँधा हुआ जीव अपने त्रिविध शरीरसे होनेवाले शुभाशुभ कर्मोंद्वारा सदा चक्रकी भाँति बार-बार घुमाया जाता है॥ ६—८॥

इस चक्रवृत् भ्रमणकी निवृत्तिके लिये चक्रकर्ताका स्वावन एवं आराधन करना चाहिये। प्रकृति आदि जो आठ पाश बलताये गये हैं, उनका समुदाय ही महाचक्र है और जो प्रकृतिसे परे हैं, वे परमात्मा शिव हैं। भगवान् महेश्वर ही प्रकृति आदि महाचक्रके कर्ता हैं; क्योंकि वे प्रकृतिसे परे हैं। जैसे बकायन नायक वृक्षका थाला जलको पीता और उगलता है, उसी प्रकार शिव प्रकृति आदिको अपने वशमें करके उसपर शासन करते हैं। उन्होंने सबको वशमें कर लिया है, इसीलिये वे शिव कहे गये हैं। शिव ही सर्वज्ञ, परिपूर्ण तथा निःस्पृह है॥ ९—११॥

सर्वज्ञता, तृप्ति, अनादिदोष, स्वतन्त्रता, नित्य अलुप्त शक्ति आदिसे संयुक्त होना और अपने भीतर अनन्त

शक्तियोंको धारण करना—महेश्वरके इन छः प्रकारके मानसिक ऐश्वर्योंको केवल वेद जानता है। अतः भगवान् शिवके अनुग्रहसे ही प्रकृति आदि आठों तत्त्व वशमें होते हैं। भगवान् शिवका कृपाप्रसाद ग्राप्त करनेके लिये उन्होंका पूजन करना चाहिये॥ १२—१३॥

शिव तो परिपूर्ण हैं, निःस्पृह हैं; उनकी पूजा कैसे हो सकती है? [इसका उत्तर यह है कि] भगवान् शिवके उद्देश्यसे—उनकी प्रसन्नताके लिये किसा हुआ सत्कर्म उनके कृपाप्रसादको ग्राप्त करनेवाला होता है। शिवलिंगमें, शिवकी प्रतिमामें तथा शिवभक्तजनोंमें शिवकी भावना करके उनकी प्रसन्नताके लिये पूजा करनी चाहिये। वह पूजन शरीरसे, मनसे, वाणीसे और धनसे भी किया जा सकता है। उस पूजासे प्रकृतिसे परे महेश्वर पूजकपर विशेष कृपा करते हैं; यह सत्य है॥ १४—१६॥

शिवकी कृपासे कर्म आदि सभी बन्धन अपने वशमें हो जाते हैं। कर्मसे लेकर प्रकृतिपर्यन्त सब कुछ जब वशमें हो जाता है, तब वह जीव मुक्त कहलाता है और स्वात्मारामरूपसे विराजमान होता है। परमेश्वर शिवकी कृपासे जब कर्मजनित शरीर अपने वशमें हो जाता है, तब भगवान् शिवके लोकमें निवास प्राप्त होता है; इसीको सालोक्यमुक्ति कहते हैं। जब तन्मात्राएँ वशमें हो जाती हैं, तब जीव जगद्भासाहित शिवका सामीप्य प्राप्त कर लेता है। यह सामीप्यमुक्ति है, उसके आयुध आदि और क्रिया आदि सब कुछ भगवान् शिवके समान हो जाते हैं। भगवान्का महाप्रसाद ग्राप्त होनेपर बुद्धि भी वशमें हो जाती है। बुद्धि प्रकृतिका कार्य है। उसका वशमें होना सार्विक्यमुक्ति कही गयी है। पुनः भगवान्का महान् अनुग्रह ग्राप्त होनेपर प्रकृति वशमें हो जायगी॥ १७—२१॥

उस समय भगवान् शिवका मानसिक ऐश्वर्य विना यत्नके ही ग्राप्त हो जायगा। सर्वज्ञता आदि जो शिवके ऐश्वर्य हैं, उन्हें पाकर मुक्त पुरुष अपनी आत्मामें ही विराजमान होता है। वेद और शास्त्रोंमें विश्वास रखनेवाले विद्वान् पुरुष इसीको सामुज्यमुक्ति कहते हैं। इस प्रकार लिंग आदिमें शिवकी पूजा करनेसे क्रमशः मुक्ति स्वतः

प्राप्त हो जाती है। इसलिये शिवका कृपाप्रसाद प्राप्त करनेके लिये तत्सम्बन्धी क्रिया आदिके द्वारा उन्होंका पूजन करना चाहिये। शिवक्रिया, शिवतप, शिवमन्त्र-जप, शिवज्ञान और शिवध्यानके लिये सदा उत्तरोत्तर अभ्यास बढ़ाना चाहिये। प्रतिदिन प्रातःकालसे रातको सोते समयतक और जन्मकालसे लेकर मृत्युपर्यन्त सारा समय भगवान् शिवके चिन्तनमें ही बिताना चाहिये। सदोजातादि मन्त्रों तथा नाना प्रकारके पुष्टोंसे जो शिवकी पूजा करता है, वह शिवको ही प्राप्त होगा ॥ २२—२५ ३/२ ॥

ऋषिगण बोले—हे सुत्रत! अब आप लिंग आदिमें शिवजीकी पूजाका विधान बताइये ॥ २६ ॥

सूतजी बोले—हे द्विजो! मैं लिंगोंके क्रमका यथावत् वर्णन कर रहा हूँ, आप लोग सुनिये। वह प्रणव ही समस्त अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाला प्रथम लिंग है। उसे सूक्ष्म प्रणवरूप समझिये। सूक्ष्मलिंग निष्कल होता है और स्थूललिंग सकल। पंचाक्षर मन्त्रको ही स्थूललिंग कहते हैं। उन दोनों प्रकारके लिंगोंका पूजन तप कहलाता है। वे दोनों ही लिंग साक्षात् मोक्ष देनेवाले हैं। पौरुषलिंग और प्रकृतिलिंगके रूपमें बहुत-से लिंग हैं। उन्हें भगवान् शिव ही विस्तारपूर्वक बता सकते हैं; दूसरा कोई नहीं जानता। पृथ्वीके विकारभूत जो-जो लिंग ज्ञात हैं, उन-उनको मैं आपलोगोंको बता रहा हूँ ॥ २७—३० ॥

उनमें प्रथम स्वयम्भूलिंग, दूसरा बिन्दुलिंग, तीसरा प्रतिष्ठित लिंग, चौथा चरलिंग और पांचवाँ गुरुलिंग है। देवर्षियोंकी तपस्यासे सन्तुष्ट होकर उनके समीप प्रकट होनेके लिये पृथ्वीके अन्तर्गत बीजरूपसे व्याप्त हुए भगवान् शिव वृक्षोंके अंकुरकी भाँति भूमिको भेदकर नादलिंग रूपमें व्याप्त हो जाते हैं। वे स्वतः व्यक्त हुए शिव ही स्वयं प्रकट होनेके कारण स्वयम्भू नाम धारण करते हैं। जानीजन उन्हें स्वयम्भूलिंगके रूपमें जानते हैं ॥ ३१—३३ ॥

उस स्वयम्भूलिंगकी पूजासे उपासकका ज्ञान स्वयं ही बढ़ने लगता है। सोने-चाँदी आदिके पत्रपर, भूमिपर अथवा वेदीपर अपने हाथसे लिखित जो शुद्ध प्रणव मन्त्ररूप लिंग है, उसमें तथा यन्त्रलिंगका आलेखन

करके उसमें भगवान् शिवकी प्रतिष्ठा और आवाहन करे। ऐसा बिन्दुनादमय लिंग स्थावर और जंगम दोनों ही प्रकारका होता है। इसमें शिवका दर्शन भावनामय ही है; इसमें सद्देह नहीं है। जिसको जहाँ भगवान् शंकरके प्रकट होनेका विश्वास हो, उसके लिये वही प्रकट होकर वे अभीष्ट फल प्रदान करते हैं। अपने हाथसे लिखे हुए यन्त्रमें अथवा अकृत्रिम स्थावर आदिमें भगवान् शिवका आवाहन करके सोलह उपचारोंसे उनकी पूजा करे। ऐसा करनेसे साधक स्वयं ही ऐश्वर्यको प्राप्त कर लेता है और इस साधनके अभ्याससे उसको ज्ञान भी प्राप्त हो जाता है ॥ ३४—३८ ॥

देवताओं और ऋषियोंने आत्मसिद्धिके लिये अपने हाथसे वैदिक मन्त्रोंके उच्चारणपूर्वक शुद्ध मण्डलमें शुद्ध भावनाद्वारा जिस उत्तम शिवलिंगकी स्थापना की है, उसे पौरुषलिंग कहते हैं तथा वही प्रतिष्ठित लिंग कहलाता है। उस लिंगकी पूजा करनेसे सदा पौरुष ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। महान् ब्राह्मणों और महाधनी राजाओंद्वारा किसी शिल्पीसे शिवलिंगका निर्माण कराकर मन्त्रपूर्वक जिस लिंगकी स्थापना तथा प्रतिष्ठा की गयी हो, वह प्राकृतलिंग है, वह [शिवलिंग] प्राकृत ऐश्वर्य-भोगको देनेवाला होता है। जो शक्तिशाली और नित्य होता है, उसे पौरुषलिंग कहते हैं और जो दुर्बल तथा अनित्य होता है, वह प्राकृतलिंग कहलाता है ॥ ३९—४३ ॥

लिंग, नाभि, जिह्वा, नासिकाका अग्र भाग और शिखाके क्रमसे कटि, हृदय और मस्तक तीनों स्थानोंमें जो लिंगकी भावना की गयी है, उस आध्यात्मिक लिंगको ही चरतिंग कहते हैं। पर्वतको पौरुषलिंग बताया गया है और भूतलको विद्वान् पुरुष प्राकृतलिंग मानते हैं। वृक्ष आदिको पौरुषलिंग जानना चाहिये। गुल्म आदिको प्राकृतलिंग कहा गया है। साठी नामक धान्यको प्राकृतलिंग समझना चाहिये और शालि (अगहनी) एवं गेहूँको पौरुषलिंग। अणिमा आदि आठों सिद्धियोंको देनेवाला जो ऐश्वर्य है, उसे पौरुष ऐश्वर्य जानना चाहिये। सुन्दर स्त्री तथा धन आदि विशयोंको आस्तिक पुरुष प्राकृत ऐश्वर्य कहते हैं ॥ ४४—४६ ३/३ ॥

चरलिंगोंमें सबसे प्रथम रसलिंगका वर्णन किया जाता है। रसलिंग द्वाह्याणोंको उनकी सारी अभीष्ट वस्तुओंको देनेवाला है। शुभकारक बाणलिंग क्षत्रियोंको महान् राज्यकी प्राप्ति करानेवाला है। सुवर्णलिंग वैश्योंको महाधनपतिका पद प्रदान करानेवाला है तथा सुन्दर शिललिंग शूद्रोंको महाशुद्धि देनेवाला है। स्फटिकलिंग तथा बाणलिंग सब लोगोंको उनकी समस्त कामनाएँ प्रदान करते हैं। अपना न हो तो दूसरेका स्फटिक या बाणलिंग भी पूजाके लिये निषिद्ध नहीं है। स्त्रियों, विशेषतः सधवाओंके लिये पार्थिवलिंगकी पूजाका विधान है। प्रवृत्तिमार्गमें स्थित विधवाओंके लिये स्फटिकलिंगकी पूजा बतायी गयी है। परंतु विरुद्ध विधवाओंके लिये रसलिंगकी पूजाको ही त्रेष्ठ कहा गया है। हे सुन्दरो! बचपनमें, युवावस्थामें और बुद्धायेमें भी शुद्ध स्फटिकमय शिवलिंगका पूजन स्त्रियोंको समस्त भोग प्रदान करेवाला है। गृहासङ्क स्त्रियोंके लिये पीठपूजा भूतलपर सम्पूर्ण अभीष्टको देनेवाली है॥ ४७—५३॥

प्रवृत्तिमार्गमें चलनेवाला पुरुष सुपात्र गुरुके सहयोगसे ही समस्त पूजाकर्म सम्पन्न करे। इष्टदेवका अधिषेक करनेके पश्चात् अगहनीके चावलसे बने हुए [खीर आदि पकवानोंद्वारा] नैवेद्य अर्पण करे। पूजाके अन्तर्में शिवलिंगको पथराकर घरके भीतर पृथक् सम्पुटमें स्थापित करे। जो निवृत्तिमार्ग पुरुष हैं, उनके लिये हाथपर ही शिवलिंग-पूजाका विधान है। उन्हें मिश्कादिसे प्राप्त हुए अपने भोजनको ही नैवेद्यरूपमें निवेदित करना चाहिये। निवृत्त पुरुषोंके लिये सूक्ष्मलिंग ही त्रेष्ठ बताया जाता है। वे विभूतिके द्वारा पूजन करें और विभूतिको ही नैवेद्यरूपसे निवेदित भी करें। पूजा करके उस लिंगको सदा अपने मस्तकपर धारण करें॥ ५४—५६ ३/२॥

विभूति तीन प्रकारकी बतायी गयी है— लोकानिनजनित, वेदानिनजनित और शिवानिनजनित। लोकानिनजनित या लौकिक भस्मको द्रव्योंकी शुद्धिके लिये लाकर रखे। मिट्टी, लकड़ी और लोहेके यांत्रोंकी, धान्योंकी, तिल आदि द्रव्योंकी, वस्त्र आदिकी तथा पर्युषित वस्तुओंकी शुद्धि भस्मसे होती है। कुत्ते आदिसे

दूषित हुए पात्रोंकी भी शुद्धि भस्मसे ही मानी गयी है। वस्तु-विशेषकी शुद्धिके लिये यथायोग्य सजल अथवा निर्जल भस्मका उपयोग करना चाहिये॥ ५७—६०॥

वेदानिनजनित जो भस्म है, उसको उन-उन वैदिक कर्मोंके अन्तर्में धारण करना चाहिये। मन्त्र और क्रियासे जनित जो होमकर्म है, वह अनिमें भस्मका रूप धारण करता है। उस भस्मको धारण करनेसे वह कर्म आत्मामें आरोपित हो जाता है। अघोर-मूर्तिधारी शिवका जो अपना मन्त्र है, उसे पढ़कर बेलकी लकड़ीको जलाये। उस मन्त्रसे अभिमन्त्रित अग्निको शिवाग्नि कहा गया है। उसके द्वारा जले हुए काष्ठका जो भस्म है, वह शिवाग्निनजनित है। कपिला गायके गोबर अथवा गायमात्रके गोबरको तथा शमी, पीपल, पलाश, बट, अमलतास और बिल्व—इनकी लकड़ियोंको शिवाग्निसे जलाये। वह शुद्ध भस्म शिवाग्निनजनित माना गया है अथवा कुशकी अनिमें शिवमन्त्रके उच्चारणपूर्वक काष्ठको जलाये। फिर उस भस्मको कपड़ेसे अच्छी तरह छानकर नये घड़ेमें भरकर रख दे। उसे समय-समयपर अपनी कान्ति या शोभाकी वृद्धिके लिये धारण करे। ऐसा करनेवाला पुरुष सम्मानित एवं पूजित होता है॥ ६१—६५ ३/२॥

पूर्वकालमें भगवान् शिवने भस्म शब्दका ऐसा ही अर्थ प्रकट किया था। जैसे राजा अपने राज्यमें सारभूत करको ग्रहण करता है, जैसे मनुष्य सत्य आदिको जलाकर (पकाकर) उसका सार ग्रहण करते हैं तथा जैसे जटरानल नाना प्रकारके भक्ष्य, भोज्य आदि पदार्थोंको भारी मात्रामें ग्रहण करके उसे जलाकर सारतर वस्तु ग्रहण करता और उस सारतर वस्तुसे स्वदेहका पोषण करता है, उसी प्रकार प्रपञ्चकर्ता परमेश्वर शिवने भी अपनेमें आधेय रूपसे विद्यमान प्रपञ्चको जलाकर भस्मरूपसे उसके सारतत्त्वको ग्रहण किया है। प्रपञ्चको दाध करके शिवने उसके भस्मको अपने शरीरमें लगाया है। उन्होंने विभूति (भस्म) पोतनेके बहाने जगत्के सारको ही ग्रहण किया है॥ ६६—७०॥

शिवने अपने शरीरमें अपने लिये रत्नस्वरूप भस्मको इस प्रकार स्थापित किया है—आकाशके सारतत्त्वसे केश, वायुके सारतत्त्वसे मुख, अग्निके सारतत्त्वसे हृदय,

जलके सारतत्त्वसे कटिभाग और पृथ्वीके सारतत्त्वसे बुटनेको धारण किया है। इसी तरह उनके सारे अंग विभिन्न वस्तुओंके साररूप हैं ॥ ७१—७२ ॥

महेश्वरने अपने ललाटके मध्यमें तिलकरूपसे जो त्रिपुण्ड्र धारण किया है, वह ब्रह्मा, विष्णु और ऋद्रका सारतत्त्व है। वे इन सब वस्तुओंको जगत्के अभ्युदयका हेतु मानते हैं। इन भगवान् शिवने ही प्रपंचके सार-सर्वस्वको अपने वशमें किया है। अतः इन्हें अपने वशमें करनेवाला दूसरा कोई नहीं है, इसीलिये वे शिव कहे जाते हैं। जैसे समस्त मृगोंका हिंसक मृग (पशु) सिंह कहलाता है और उसकी हिंसा करनेवाला दूसरा कोई मृग नहीं है, अतएव उसे सिंह कहा गया है ॥ ७३—७५ ॥

शकारका अर्थ है नित्यसुख एवं आनन्द। इकारको पुरुष और वकारको अमृतस्वरूपा शक्ति कहा गया है। इन सबका सम्मिलित रूप ही शिव कहलाता है। अतः इस रूपमें भगवान् शिवको अपनी आत्मा मानकर उनकी पूजा करनी चाहिये। [साधक] पहले अपने अंगोंमें भस्म लगाये, फिर ललाटमें उत्तम त्रिपुण्ड्र धारण करे। पूजाकालमें सजल भस्मका उपयोग होता है और द्रव्यशुद्धिके लिये निर्जल भस्मका ॥ ७६—७८ ॥

दिन हो अथवा रात्रि, नारी हो या पुरुष; पूजा करनेके लिये उसे भस्म जलसहित ही त्रिपुण्ड्ररूपमें (ललाटपर) धारण करना चाहिये। जलभिन्नत भस्मको त्रिपुण्ड्ररूपमें धारणकर जो व्यक्ति शिवकी पूजा करता है, उसे सांग शिवकी पूजाका फल तुरंत प्राप्त होता है, यह सुनिश्चित है। जो (प्राणी) शिवमन्त्रके द्वारा भस्मको धारण करता है, वह सभी (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास) आश्रमोंमें श्रेष्ठ होता है। उसे शिवाश्रमी कहा जाता है; क्योंकि वह एकमात्र शिवमें ही निष्ठा रखनेवालेको न तो अशीचका दोष लगता है और न तो सूतकका। ललाटके अग्रभागमें अपने हाथसे या गुरुके हाथसे इतेवें भस्म या मिट्टीसे तिलक लगाना चाहिये, यह शिवभक्तका लक्षण है ॥ ७९—८२ ॥

जो गुणोंका रोध करता है, वह गुरु है—यह 'गुरु' शब्दका विग्रह कहा गया है। गुणातीत परम शिव राजस आदि सविकार गुणोंका अवरोध करते हैं—दूर हटाते हैं, इसीलिये वे सबके गुरुरूपका आश्रय लेकर स्थित हैं। गुरु विश्वासी शिष्योंके तीनों गुणोंको पहले दूर करके उन्हें शिवतत्त्वका बोध कराते हैं, इसीलिये गुरु कहलाते हैं ॥ ८३—८५ ॥

अतः बुद्धिमान् शिष्यको उन गुरुके शरीरको गुरुलिंग समझना चाहिये। गुरुजीकी सेवा-शुश्रूषा ही गुरुलिंगकी पूजा होती है। शरीर, मन और वाणीसे की गयी गुरुसेवासे शास्त्रज्ञान प्राप्त होता है। अपनी शक्तिसे शक्त्य अथवा अशक्त्य जिस बातका भी आदेश गुरुने दिया हो, उसका पालन प्राण और धन लगाकर पवित्रात्मा शिष्य करता है, इसीलिये इस प्रकार अनुशासित रहनेवालेको शिष्य कहा जाता है ॥ ८६—८८ ॥

सुशील शिष्यको शरीर-धारणके सभी साधन गुरुको अर्पित करके तथा अन्नका पहला पाक उन्हें समर्पित करके उनकी आज्ञा लेकर भोजन करना चाहिये। शिष्यको निरन्तर गुरुके सान्निध्यके कारण पुत्र कहा जाता है। जिह्वारूप लिंगसे मन्त्ररूपी शुक्रका कानरूपी योनिमें आधान करके जो पुत्र उत्पन्न होता है, उसे मन्त्रपुत्र कहते हैं। उसे अपने पितास्वरूप गुरुकी सेवा करनी ही चाहिये। शरीरको उत्पन्न करनेवाला गुरुरूप पिता तो संसारप्रपञ्चमें पुत्रको दुखोता है। ज्ञान देनेवाला गुरुरूप पिता संसारसागरसे पार कर देता है। इन दोनों पिताओंके अनन्तरको जानकर गुरुरूप पिताकी अपने कमाये धनसे तथा अपने शरीरसे विशेष सेवा-पूजा करनी चाहिये। पैरसे केशपर्यन्त जो गुरुके शरीरके अंग हैं, उनकी भिन्न-भिन्न प्रकारसे यथा—स्वर्य अर्जित धनके द्वारा उपयोगकी सामग्री प्राप्त कराकर, अपने हाथोंसे पैर दबाकर, स्तान-अभिषेक आदि कराकर तथा नैवेद्य-भोजनादि देकर पूजा करनी चाहिये ॥ ८९—९४ ॥

गुरुकी पूजा ही परमात्मा शिवकी पूजा है। गुरुके उपयोगसे वचा हुआ सारा पदार्थ आत्मशुद्धि करनेवाला होता है ॥ ९५ ॥

हे द्विजो! गुरुका शेष, जल तथा अन आदिसे बना

हुआ शिवोच्छिष्ट शिवभक्तों और शिष्योंके लिये ग्राह्य तथा भोज्य है। गुरुकी आज्ञाके बिना उपयोगमें लाया हुआ सब कुछ वैसा ही है, जैसे चोरी करके लायी हुई वस्तुका उपयोग करता है। गुरुसे भी विशेष ज्ञानवान् पुरुष भिल जाय, तो उसे भी यत्नपूर्वक गुरु बना लेना चाहिये। अज्ञानरूपी बन्धनसे छूटना ही जीवमात्रके लिये साध्य पुरुषात्म है। अतः जो विशेष ज्ञानवान् है, वही जीवको उस बन्धनसे छूटा सकता है ॥ १६—१७३/२ ॥

कर्मकी सांगोपांग पूर्तिके लिये पहले विघ्नशान्ति करनी चाहिये। निविघ्नतापूर्वक तथा सांग सम्पन्न हुआ कार्य ही सफल होता है। इसलिये सभी कर्मोंके प्रारम्भमें बुद्धिमान् व्यक्तिको विघ्नविनाशक गणपतिका पूजन करना चाहिये। सभी बाधाओंको दूर करनेके लिये विद्वान् व्यक्तिको सभी देवताओंकी पूजा करनी चाहिये ॥ १८—१९३/२ ॥

ज्वर आदि ग्रन्थिरोग आध्यात्मिक बाधा कही जाती है। पिशाच और सियार आदिका दीखना, बाँबीका जमीनपर उठ आना, अकस्मात् छिपकली आदि जन्मुओंका गिरना, घरमें कच्छप, साँप, दुष्ट स्त्रीका दीखना, वृक्ष, नारी और गौ आदिकी प्रसूतिका दर्शन होना आगामी दुःखका संकेत होता है। अतः यह आधिधैतिक बाधा मानी जाती है। किसी अपवित्र वस्तुका गिरना, बिजली गिरना, महामारी, ज्वरमारी, हैजा, गोमारी, मसूरिका (एक प्रकारका शीतला रोग), जन्मनक्षत्रपर ग्रहण, संक्रान्ति, अपनी राशिमें अनेक ग्रहोंका योग होना तथा दुःखनदर्शन आदि आधिदैविक बाधा कही जाती है ॥ १००—१०४३/२ ॥

शव, चाण्डाल और पतितका स्पर्श अथवा इनका घरके भीतर आना भावी दुःखका सूचक होता है। घरके भीतर आना भावी दुःखका सूचक होता है। बुद्धिमान् व्यक्तिको चाहिये कि उस दोषकी शान्तिके लिये शान्तियज्ञ करे। किसी मन्दिर, गोशाला, यज्ञशाला, अथवा घरके ऊंगामें जहाँ दो हाथपर ऊँकी जमीन हो, उसे अच्छी तरह साफ करके उसपर एक भार धान रखकर उसे फैला दे। उसके बीचमें कमल बनाये तथा कोणसंहित आंतों दिशाओंमें भी कमल बना दे। फिर प्रधान कलशमें सूत्र बाँधकर तथा गुण्डुलकी धूप दिखाकर

उसे बीचमें तथा दिशाओंमें बनाये गये कमलोंपर अन्य आठ कलश स्थापित कर दे ॥ १०५—१०९ ॥

आठ कलशोंमें कमल, आग्रपल्लव, कुशा डालकर [गन्ध आदि] पंचद्रव्योंसे युक्त मन्त्रपूत जलसे उन्हें भरे। उन सप्त कलशोंमें नीलम आदि नवरत्नोंको क्रमशः डालना चाहिये। तत्पश्चात् बुद्धिमान् यजमान कर्मकाण्डको जानेवाले सपलीक आचार्यका वरण करे। भगवान् विष्णुकी स्वर्णप्रतिमा तथा इन्द्रादि देवताओंकी भी प्रतिमाएँ बनाकर उन कलशोंमें छोड़े। पूर्णपात्रसे ढके मध्यकलशपर भगवान् विष्णुका आवाहन करके उनकी पूजा करे। पूर्व दिशासे प्रारम्भ करके सभी दिशाओंमें मन्त्रानुसार इन्द्रादिका क्रमशः पूजन करना चाहिये। उनके नामोंमें चतुर्थी विभक्तिसंहित नमःका प्रयोग करते हुए उनका पूजन करना चाहिये ॥ ११०—११३ ॥

आवाहनादि सारे कार्य आचार्यद्वारा सम्पन्न करये तथा आचार्य और ऋत्विजोंसहित उन देवताओंके मन्त्रोंको सौ-सौ बार जपे। कलशोंकी पश्चिम दिशामें जपके बाद होम करना चाहिये। हे विद्वज्ञो! वह जपहोम करोड़, लाख, हजार अथवा १०८ की संख्यामें हो सकता है। इस विधिसे एक दिन, नौ दिन अथवा चालीस दिनोंमें देश-कालकी व्यवस्थाके अनुसार [शान्तियज्ञ] यथोचित रूपमें सम्पन्न करे ॥ ११४—११६ ॥

शान्तिके लिये शमी तथा वृत्ति (रोजगार)-के लिये पलाशकी समिधासे, अन्न, घृत तथा [सुगन्धित] द्रव्योंसे उन देवताओंके नाम अथवा मन्त्रोंसे हवन करना चाहिये। प्रारम्भमें जिस द्रव्यका उपयोग किया हो, अन्ततक उसीका प्रयोग करते रहना चाहिये। अन्तिम दिन पुण्याहवाचन कराकर कलशोंके जलसे प्रोक्षण करना चाहिये। तत्पश्चात् आहुतिकी संख्याके बराबर ब्राह्मणोंको भोजन कराये। हे विद्वानो! आचार्य और ऋत्विजोंको हविव्यक्त करना चाहिये ॥ ११७—११९ ॥

सूर्य आदि नवग्रहोंका होमके अन्तमें पूजन करना चाहिये। ऋत्विजोंको क्रमानुसार नवरत्नोंकी दक्षिणा देनी चाहिये। तत्पश्चात् दशदान करे और उसके बाद भूयसीदान करना चाहिये। बालक, यज्ञोपवीती, गृहस्थाश्रमी

और वानप्रस्थियोंको धनका दान करना चाहिये। तत्पश्चात् कन्या, सधवा और विधवा स्त्रियोंको देनेके अनन्तर बच्ची हुई तथा यज्ञमें बच्ची हुई सारी सामग्री आचार्यको समर्पित कर देनी चाहिये ॥ १२०—१२२ ॥

उत्पात, महामारी और दुःखोंके स्वामी यमराज माने जाते हैं। इसलिये यमराजकी प्रसन्नताके लिये कालप्रतिमाका दान करना चाहिये। सौ निष्क या दस निष्कके परिमाणकी पाश और अंकुश धारण की हुई पुरुषके आकारकी स्वर्णप्रतिमा बनाये। उस स्वर्णप्रतिमाका दक्षिणासहित दान करना चाहिये। उसके बाद पूर्णायु प्राप्त करनेहेतु तिलका दान करना चाहिये। रोगनिवारणके लिये घृतमें अपनी परछाई देखकर दान करना चाहिये। हजार ब्राह्मणोंको भोजन करना चाहिये, धनभावमें सौ अथवा यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये ॥ १२३—१२६ ॥

भूत आदिकी शान्तिके लिये भैरवकी महापूजा करे। अन्तमें भगवान् शिवका महाभिषेक और नैवेद्य समर्पित करके ब्राह्मणोंको भूरिभोजन कराना चाहिये ॥ १२७—१२८ ॥

इस प्रकार यज्ञ सम्पन्न करनेसे दोषोंकी शान्ति हो जाती है। इस शान्तियज्ञका प्रतिवर्ष फग्ल्युनमासमें आयोजन करना चाहिये। अशुभ दर्शन होनेपर तुरंत अथवा एक महीनेके भीतर यज्ञका आयोजन करना चाहिये। महापाप हो जाय, तो भैरवकी पूजा करनी चाहिये। महाव्याधि हो जाय, तो यज्ञका पुनः संकल्प लेकर उस सम्पन्न करना चाहिये। अकिञ्चन दरिद्र व्यक्ति तो केवल दीपदान कर दे। उतना भी न हो सके, तो स्नान करके कुछ दान कर दे। एक सौ आठ, एक हजार, दस हजार, एक लाख या एक करोड़ मन्त्रोंसे भगवान् सूर्यको नमस्कार करे। इस नमस्कारात्मक यज्ञसे सभी देवता प्रसन्न हो जाते हैं ॥ १२९—१३३ ॥

भगवान् शिवकी इस प्रकार प्रार्थना करे—मेरी बुद्धि आपके ज्योतिर्मय पूर्णस्वरूपमें लगी है। मुझमें जो अहंता थी, वह आपके दर्शनसे नष्ट हो गयी है। मैं अपनी देहसे आपको प्रणाम करता हूँ। हे प्रभो! आप महान् हैं। आप पूर्ण हैं और मेरा स्वरूप भी आप ही हैं, तो भी इस समय मैं

आपका दास हूँ। इस प्रकार यथायोग्य नमस्कारपूर्वक स्वात्मयज्ञ करना चाहिये। तत्पश्चात् भगवान् शिवको नैवेद्य देकर ताम्बूल समर्पित करना चाहिये ॥ १३४—१३६ ॥

तब स्वयं १०८ बार शिवकी प्रदक्षिणा करनी चाहिये। एक हजार, दस हजार, एक लाख या करोड़ प्रदक्षिणा दूसरोंके द्वारा करायी जा सकती है। शिवकी प्रदक्षिणासे सारे पापोंका तत्क्षण नाश हो जाता है। दुःखका मूल व्याधि है और व्याधिका मूल पापमें होता है। धर्माचरणसे ही पापोंका नाश बताया गया है। भगवान् शिवके उद्देश्यसे किया गया धर्माचरण पापोंका नाश करनेमें समर्थ होता है ॥ १३७—१३९ ॥

शिवके धर्मामें प्रदक्षिणाको प्रधान कहा गया है। क्रियासे जपरूप होकर प्रणव ही प्रदक्षिणा बन जाता है। जन्म और मरणका द्वन्द्व ही मायाचक्र कहा गया है। शिवका मायाचक्र ही बलिपीठसे आरम्भ करके प्रदक्षिणाके क्रमसे एक पैरके पीछे दूसरा पैर रखते हुए बलिपीठमें पुनः प्रवेश करना चाहिये। तत्पश्चात् नमस्कार करना चाहिये। इसे प्रदक्षिणा कहा जाता है। बलिपीठसे बाहर निकलना जन्म प्राप्त होना और नमस्कार करना ही आत्मसमर्पण है ॥ १४०—१४३ ॥

जन्म और मरणरूप द्वन्द्व भगवान् शिवकी मायासे प्राप्त है। जो इन दोनोंको शिवकी मायाको ही अर्पित कर देता है, वह फिर शरीरके बन्धनमें नहीं पड़ता। जबतक शरीर रहता है, तबतक जो क्रियाके ही अधीन है, वह जीव बद्ध कहलाता है। स्थूल, सूक्ष्म और कारण—तीनों शरीरोंको वशमें कर लेनेपर जीवका मोक्ष हो जाता है, ऐसा ज्ञानी पुरुषोंका कथन है। मायाचक्रके निर्माता भगवान् शिव ही परम कारण हैं। वे अपनी मायाके दिये हुए द्वन्द्वका स्वयं ही परिमार्जन करते हैं। अतः शिवके द्वारा कल्पित हुआ द्वन्द्व उन्हींको समर्पित कर देना चाहिये ॥ १४४—१४६ ॥

हे विद्वानो! प्रदक्षिणा और नमस्कार शिवको अविप्रिय हैं, ऐसा जानना चाहिये। भगवान् शिवकी प्रदक्षिणा, नमस्कार और षोडशोपचार पूजन अत्यन्त फलदायी होता है। ऐसा कोई पाप इस पृथ्वीपर नहीं

है, जो शिवप्रदक्षिणासे नष्ट न हो सके। इसलिये प्रदक्षिणाका आश्रय लेकर सभी पापोंका नाश कर लेना चाहिये ॥ १४७—१४९ ॥

जो शिवकी पूजामें तत्पर हो, वह मौन रहे, सत्य आदि गुणोंसे संयुक्त हो तथा क्रिया, जप, तप, ज्ञान और ध्यानमेंसे एक-एकका अनुष्ठान करता रहे। ऐश्वर्य, दिव्य शरीरकी प्राप्ति, ज्ञानका उदय, अज्ञानका निवारण और भगवान् शिवके सामीप्यका लाभ—ये क्रमशः क्रिया आदिके फल हैं। निष्काम कर्म करतेर अज्ञानका निवारण हो जानेके कारण शिवभक्त पुरुष उसके बधोक्त फलको पाता है। शिवभक्त पुरुष देश, काल, शरीर और धनके अनुसार यथायोग्य क्रिया आदिका अनुष्ठान करे ॥ १५०—१५३ ॥

न्यायोपार्जित उत्तम धनसे निर्वाह करते हुए विद्वान् पुरुष शिवके स्थानमें निवास करे। जीवहिंसा आदिसे रहित और अत्यन्त क्लेशशून्य जीवन बिताते हुए पंचाक्षर-मन्त्रके जपसे अधिमन्त्रित अन और जलको सुखस्वरूप माना गया है अथवा यह भी कहते हैं कि दरिद्र पुरुषके लिये भिक्षासे प्राप्त हुआ अन ज्ञान

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहिताके साध्यसाधनखण्डमें शिवलिङ्गके माहात्म्यका वर्णन नामक अठारहबाँ अध्याय यूर्ण हुआ ॥ १८ ॥

उनीसवाँ अध्याय

पार्थिव शिवलिंगके पूजनका माहात्म्य

ऋषिविगण बोले—हे सूतजी! आप चिरंजीवी हों। आप धन्य हैं, जो परम शिवभक्त हैं। आपने शुभ फलको देनेवाली शिवलिंगकी महिमा सम्पूर्ण प्रकारसे बतायी। अब आप व्यासजीद्वारा वर्णित भगवान् शिवके सर्वोत्कृष्ट पार्थिव लिंगकी महिमाका वर्णन करें ॥ १-२ ॥

सूतजी बोले—हे ऋषियो! मैं शिवके पार्थिव लिंगकी महिमा बता रहा हूँ, आप लोग भक्ति और आदरसंहित इसका श्रवण करें। हे द्विजो! अभीतक बताये हुए सभी शिवलिंगोंमें पार्थिव लिंग सर्वोत्तम है। उसकी पूजा करनेसे अनेक भक्तोंको सिद्धि प्राप्त हुई है ॥ ३-४ ॥

* पृष्ठी, जल, तेज, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा तथा यज्ञमान—ये शिवकी आठ मूर्तियाँ हैं।

देनेवाला होता है, शिवभक्तको भिक्षान् प्राप्त हो, तो वह शिवभक्तिको बढ़ानेवाला होता है। शिवयोगी पुरुष भिक्षान्को शम्भुसत्र कहते हैं। जिस किसी भी उपायसे जहाँ-कहीं भी भूतलपर शुद्ध अन्का भोजन करते हुए सदा मौनभावसे रहे और अपने साधनका रहस्य किसीपर प्रकट न करे। भक्तोंके समक्ष ही शिवके माहात्म्यको प्रकाशित करे। शिवमन्त्रके रहस्यको भगवान् शिव ही जानते हैं, दूसरा कोई नहीं जान पाता ॥ १५४—१५८ ॥

शिवभक्तको सदा शिवलिंगके आश्रित होकर वास करना चाहिये। हे ब्राह्मणो! शिवलिंगाश्रयके प्रभावसे वह भक्त भी शिवरूप ही हो जाता है। चरलिंगकी पूजा करनेसे वह क्रमशः अवश्य ही मुक्त हो जाता है। महर्षि व्यासने पूर्वकालमें जो कहा था और मैंने जैसा सुना था, उस सब साध्य और साधनका संक्षेपमें मैंने वर्णन कर दिया। आप सबका कल्याण हो और भगवान् शिवमें आपको दृढ़ भक्ति बनी रहे। जो मनुष्य इस अध्यायका पाठ करता है अथवा जो इसे सुनता है, हे विज्ञानो! वह भगवान् शिवकी कृपासे शिवज्ञानको प्राप्त कर लेता है ॥ १५९—१६२ ॥

हे ब्राह्मणो! ब्रह्मा, विष्णु, प्रजापति तथा अनेक ऋषियोंने पार्थिव लिंगकी पूजा करके अपना सम्पूर्ण अभीष्ट प्राप्त किया है। देव, असुर, मनुष्य, गन्धर्व, नाग, राक्षसगण और अन्य प्राणियोंने भी उसकी पूजा करके परम सिद्धि प्राप्त की है ॥ ५-६ ॥

सत्ययुगमें मणिलिंग, त्रेतायुगमें स्वर्णलिंग, द्वापरयुगमें पारदलिंग और कलियुगमें पार्थिवलिंगको श्रेष्ठ कहा गया है। भगवान् शिवकी सभी आठ* मूर्तियोंमें पार्थिव मूर्ति श्रेष्ठ है। किसी अन्यद्वारा न पूजी हुई (नवनिर्मित) पार्थिव मूर्तिकी पूजा करनेसे तपस्यासे भी अधिक फल

मिलता है ॥ ७-८ ॥

जैसे सभी देवताओंमें शंकर ज्येष्ठ और श्रेष्ठ कहे जाते हैं, उसी प्रकार सभी लिंगमूर्तियोंमें पार्थिवलिंग श्रेष्ठ कहा जाता है। जैसे सभी नदियोंमें गंगा ज्येष्ठ और श्रेष्ठ कही जाती है, वैसे ही सभी लिंगमूर्तियोंमें पार्थिव लिंग श्रेष्ठ कहा जाता है। जैसे सभी मन्त्रोंमें प्रणव (ॐ) महान् कहा गया है, उसी प्रकार शिवका यह पार्थिवलिंग श्रेष्ठ, आराध्य तथा पूजनीय होता है। जैसे सभी वर्णोंमें ब्राह्मण श्रेष्ठ कहा जाता है, उसी प्रकार सभी लिंगमूर्तियोंमें पार्थिवलिंग श्रेष्ठ कहा जाता है। जैसे सभी पुरियोंमें काशीको श्रेष्ठतम कहा गया है, वैसे ही सभी शिवलिंगोंमें पार्थिवलिंग श्रेष्ठ कहा जाता है। जैसे सभी ग्रन्थोंमें शिवगतिका ब्रत सर्वोपरि है, उसी प्रकार सभी शिवलिंगोंमें पार्थिवलिंग सर्वश्रेष्ठ कहा जाता है। जैसे सभी देवियोंमें शैवी शक्ति प्रधान मानी जाती है, उसी प्रकार सभी शिवलिंगोंमें पार्थिवलिंग प्रधान माना जाता है ॥ ९-१५ ॥

जो पार्थिवलिंगका निर्माण करनेके बाद किसी अन्य देवताकी पूजा करता है, उसकी वह पूजा तथा स्नान-दान अदिकी क्रियाएँ व्यर्थ हो जाती हैं। पार्थिव-पूजन अत्यन्त पुण्यदायी तथा सब प्रकारसे धन्य करनेवाला, दीर्घायुष्य देनेवाला है। यह तुष्टि, पुष्टि और लक्ष्मी प्रदान करनेवाला है, अतः श्रेष्ठ साधकोंको पूजन अवश्य करना चाहिये ॥ २६-२७ ॥

उपलब्ध उपचारोंसे भक्ति-श्रद्धापूर्वक पार्थिव लिंगका पूजन करना चाहिये; यह सभी कामनाओंकी सिद्धि देनेवाला है। जो सुन्दर वेदीसहित पार्थिव लिंगका निर्माण करके उसकी पूजा करता है, वह इस लोकमें धन-धान्यसे सम्पन्न होकर अन्तमें रुद्धलोकको प्राप्त करता है। जो पार्थिवलिंगका निर्माण करके बिल्वपत्रोंसे ग्यारह वर्षतक उसका त्रिकाल पूजन करता है, उसके पुण्यफलको सुनिये। वह अपने इसी शरीरसे रुद्धलोकमें प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। उसके दर्शन और स्पर्शसे मनुष्योंके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। वह जीवनमुक्त ज्ञानी और शिवस्वरूप है; इसमें संशय नहीं है। उसके दर्शनमात्रसे भोग और मोक्षकी प्राप्ति होती है ॥ २८-२२ ॥

जो पार्थिव शिवलिंगका निर्माण करके जीवनपर्यन्त नित्य उसका पूजन करता है, वह शिवलोक प्राप्त करता है। वह असंख्य वर्षोंतक भगवान् शिवके सानिध्यमें शिवलोकमें वास करता है और कोई कामना शेष रहनेपर वह भारतवर्षमें सम्राट् बनता है। जो निष्कामभावसे नित्य उत्तम पार्थिवलिंगका पूजन करता है, वह सदाके लिये शिवलोकमें वास करता है और शिवसायुज्यको प्राप्त कर लेता है ॥ २३—२५ ॥

यदि ब्राह्मण पार्थिव शिवलिंगका पूजन नहीं करता है, तो वह अत्यन्त दारुण शूलप्रोत नामक घोर नरकमें जाता है। किसी भी विधिसे सुन्दर पार्थिवलिंगका निर्माण करना चाहिये, किंतु उसमें पंचसूत्रविधान नहीं करना चाहिये ॥ २६-२७ ॥

उसे अखण्ड रूपमें बनाना चाहिये, खण्डितरूपमें नहीं। खण्डित लिंगका निर्माण करनेवाला पूजाका फल नहीं प्राप्त करता है। मणिलिंग, स्वर्णलिंग, पारदलिंग, सफटिकलिंग, पुष्परागलिंग और पार्थिवलिंगको अखण्ड ही बनाना चाहिये ॥ २८-२९ ॥

अखण्ड लिंग चरलिंग होता है और दो खण्डवाला अचरलिंग कहा गया है। इस प्रकार चर और अचर लिंगका यह खण्ड-अखण्ड विधान कहा गया है। स्थावरलिंगमें वेदिका भगवती महाविद्याका रूप है और लिंग भगवान् महेश्वरका स्वरूप है। इसलिये स्थावर (अचर)-लिंगोंमें वेदिकायुक्त द्विखण्ड लिंग ही श्रेष्ठ माना गया है ॥ ३०-३१ ॥

द्विखण्ड (वेदिकायुक्त) स्थावर लिंगका विधानपूर्वक निर्माण करना चाहिये। शिवसिद्धान्तके जानेवालोंने अखण्ड लिंगको जंगम (चर)-लिंग माना है। अज्ञानतावश ही कुछ लोग चरलिंगको दो खण्डोंमें (वेदिका और लिंग) बना लेते हैं, रास्तोंको जानेवाले सिद्धान्तमर्त्त मुनिजन ऐसा नहीं करते। जो मूळजन अचरलिंगको अखण्ड तथा चरलिंगको द्विखण्ड रूपमें बनाते हैं, उन्हें शिवपूजाका फल नहीं प्राप्त होता ॥ ३२-३४ ॥

इसलिये अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक शास्त्रोक्तविधिसे चरलिंगको अखण्ड तथा अचरलिंगको द्विखण्ड बनाना

चाहिये। अखण्ड चरलिंगमें की गयी पूजासे सम्पूर्ण फलकी प्राप्ति होती है। द्विखण्ड चरलिंगकी पूजा महान् अनिष्टकर कही गयी है। उसी प्रकार अखण्ड

अचरलिंगकी पूजासे कामना सिद्ध नहीं होती; उससे तो अनिष्ट प्राप्त होता है—ऐसा शास्रज्ञ विद्वानोंने कहा है॥ ३५—३७॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहिताके साध्यसाधनखण्डमें पार्थिव शिवलिंगके पूजनका माहात्म्यवर्णन नामक उनीसवाँ अध्याय यूर्ण हुआ॥ ११॥

बीसवाँ अध्याय

पार्थिव शिवलिंगके निर्माणकी रीति तथा वेद-मन्त्रोद्घारा उसके पूजनकी विस्तृत एवं संक्षिप्त विधिका वर्णन

सूतजी बोले—हे महर्षियो! अब मैं वैदिक कर्मके प्रति श्रद्धा-भक्ति रखनेवाले लोगोंके लिये वेदोक्त मार्गसे ही पार्थिव-पूजाकी पद्धतिका वर्णन करता हूँ। यह पूजा भोग और मोक्ष दोनोंको देनेवाली है। आह्वानसूत्रोंमें बतायी हुई विधिके अनुसार स्नान और सन्ध्योपासना करके पहले ब्रह्मचर्ज करे। तत्पश्चात् देवताओं, ऋषियों, सनकादि मनुष्यों और पितरोंका तर्पण करे। मनुष्यको चाहिये कि अपनी रुचिके अनुसार सम्पूर्ण नित्यकर्मको पूर्ण करके शिवस्मरणपूर्वक भस्म तथा रुद्राक्ष धारण करे। तत्पश्चात् सम्पूर्ण मनोवाङ्छित फलकी सिद्धिके लिये ऊँची भक्तिभावनाके साथ उत्तम पार्थिव लिंगकी वेदोक्त विधिसे भलीभांति पूजा करे॥ १—४॥

नदी या तालाबके किनारे, पर्वतपर, वनमें, शिवलयमें अथवा और किसी पवित्र स्थानमें पार्थिव-पूजा करनेका विधान है। हे ब्राह्मणो! शुद्ध स्थानसे निकाली हुई मिट्टीको यत्नपूर्वक लाकर बड़ी सावधानीके साथ शिवलिंगका निर्माण करे। ब्राह्मणके लिये श्वेत, क्षत्रियके लिये लाल, वैश्यके लिये पीली और शुद्धके लिये काली मिट्टीसे शिवलिंग बनानेका विधान है अथवा जहाँ जो मिट्टी मिल जाय, उसीसे शिवलिंग बनाये॥ ५—७॥

शिवलिंग बनानेके लिये प्रयत्नपूर्वक मिट्टीका संग्रह करके उस शुभ मृत्तिकाको अत्यन्त शुद्ध स्थानमें रखे। फिर उसकी शुद्धि करके जलसे सानकर पिण्ड बना ले और वेदोक्त मार्गसे धीरे-धीरे सुन्दर पार्थिव लिंगकी रचना करे। तत्पश्चात् भोग और मोक्षरूप फलकी प्राप्तिके लिये भक्तिपूर्वक उसका पूजन करे। उस पार्थिवलिंगके पूजनकी जो विधि है, उसे मैं विधानपूर्वक बता रहा हूँ, आप लोग सुनिये॥ ८—१०॥

‘ॐ नमः शिवाय’ इस मन्त्रका उच्चारण करते हुए समस्त पूजन-सामग्रीका प्रोक्षण करे—उसपर जल छिड़के। इसके बाद ‘भूरसि’^१ इत्यादि मन्त्रसे क्षेत्रसिद्धि करे॥ ११॥

फिर ‘आपो अस्मान्’^२ इस मन्त्रसे जलका संस्कार करे। इसके बाद ‘नमस्ते रुद्रो’^३ इस मन्त्रसे स्फटिकावन्ध (स्फटिक शिलाका घेरा) बनानेकी बात कही गयी है। ‘नमः शम्भवाय’^४ इस मन्त्रसे क्षेत्रशुद्धि और पंचामृतका प्रोक्षण करे। तत्पश्चात् शिवभक्त पुरुष ‘नमः’ पूर्वक ‘नीलग्रीवाय’^५ मन्त्रसे शिवलिंगकी उत्तम प्रतिष्ठा करे। इसके बाद वैदिक रीतिसे पूजन-कर्म करनेवाला उपासक भक्तिपूर्वक ‘एतत्ते

१. भूरसि भूरिस्तीवित्तिसि विष्वधाय विष्वस्य भूवनस्य धर्त्तीं। पूर्विवी यच्च पूर्विवी दृ॒ ह पूर्विवी मा हि॒ सी॑।

२. आपो अस्मान् मातः शुचयन्तु श्रुतेन नो शूत्वः पुनर्नु। विवेच्य हि यस्ति प्रवहन्ति देवोऽदिदायः शुचिरा पूत एवि। दीक्षात्प्रसादानूर्मि तां त्वा शिवावां शाम्यां परि दधे धर्मं वर्षं पुष्यन्। (यजु० ४।२)

३. नमस्ते रुद्र मन्त्रव दतो त इवते नमः। याहुभ्युमुत ते नमः। (यजु० १६।१)

४. नमः शम्भवाय च मयोभ्यवाय च नमः। रोकरय च मयस्करय च नमः। शिवाय च शिवतय च। (यजु० १६।४)

५. नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षय मोदुये। अयो ये अस्य सत्त्वानोऽहं तेष्योऽकरं नमः। (यजु० १६।८)

रुद्रवात०^{१३} इस मन्त्रसे रमणीय आसन दे। 'मा नो महान्तम्०^{१४} इस मन्त्रसे आवाहन करे, 'या ते रुद्र०^{१५} इस मन्त्रसे भगवान् शिवको आसनपर समासीन करे। 'वामिषु०^{१६} इस मन्त्रसे शिवके अंगोंमें न्यास करे। 'अध्यवोचत्०^{१७} इस मन्त्रसे प्रेमपूर्वक अधिवासन करे। 'असौ यस्तामो०^{१८} इस मन्त्रसे शिवलिंगमें इष्टदेवता शिवका न्यास करे। 'असौ योउवसर्पति०^{१९} इस मन्त्रसे उपसर्पण (देवताके समीप गमन) करे। इसके बाद 'नमोऽस्तु नीलग्रीवाय०^{२०} इस मन्त्रसे इष्टदेवको पाद्य समर्पित करे। 'रुद्रग्रायत्री०^{२१} से अर्थ दे। 'त्र्यम्बकं०^{२०} मन्त्रसे आचमन कराये। 'पयः पृथिव्याम०^{२२} इस मन्त्रसे दुर्घटस्नान कराये। 'दधिक्राव्यो०^{२३} इस मन्त्रसे दधिस्नान कराये। 'घृते घृतपावा०^{२४} इस मन्त्रसे

घृतस्नान कराये। 'मधु वाता०^{२५}, 'मधु नक्ते०^{२६}, 'मधुमान्नो०^{२७}—इन तीन ऋचाओंसे मधुस्नान और शर्करा-स्नान कराये। इन दुर्घट आदि पाँच वस्तुओंको पंचामृत कहते हैं अथवा पाद्यसमर्पणके लिये कहे गये 'नमोऽस्तु नीलग्रीवाय०' इत्यादि मन्त्रद्वारा पंचामृतसे स्नान कराये। तदनन्तर 'मा नस्तोके०^{२८} इस मन्त्रसे प्रेमपूर्वक भगवान् शिवको कटिबन्ध (करधनी) अर्पित करे। 'नमो धृष्णवे०^{२९} इस मन्त्रका उच्चारण करके आराध्य देवताको उत्तरीय धारण कराये। 'या ते हेति०^{२०} इत्यादि चार ऋचाओंको पढ़कर वेदज्ञ भक्त प्रेमसे विधिपूर्वक भगवान् शिवके लिये वस्त्र [एवं यज्ञोपवीत] समर्पित करे। इसके बाद 'नमः शवभ्य०^{२०} इत्यादि मन्त्रको पढ़कर शुद्ध बुद्धिवाला भक्त पुरुष

१. एतते रुद्रवासं तेन परो मूजवतोऽतीहि। अवतथन्वा पिनाकावसः कृतिवासा अहिंसनः शिवोऽतीहि। (यजु० ३।६२)
२. मा नो महान्तमु या नो अर्पके या न उक्तिम्। मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियासत्त्वो रुद्र रीतिः। (यजु० १६।१५)
३. या ते रुद्र शिवा तनूयोरुद्रापाकाशिनी। तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिश-ताभि चाकशीहि। (यजु० १६।२)
४. वामिषु गिरिशन हस्ते विभर्वस्त्रे। शिवा गिरित्र तां कुरु मा हिंसीः पुरुषं जगत्। (यजु० १६।३)
५. अध्यवोचदधिवका प्रथमो देवो भिषक्। अहारं चर्वाक्यभ्यन्तरस्त्रेषु यातुश्चान्नाऽधरावीः परा सुव। (यजु० १६।५)
६. असौ यस्तामो अरुण उत वधुः सुमङ्गलः। ये चैनः रुद्र अभितो दिशु त्रिताः सहस्रोऽवैष्णवेऽहेऽईमहे। (यजु० १६।६)
७. असौ योउवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः। उदीनं गोपा अदृश्नदृश्ननुद्दर्हार्यः स दृष्टे मृडयाति नः। (यजु० १६।७)
८. यह मन्त्र पहले दिया जा चुका है।
९. तत्पुराया विद्यहे महादेवाय थीमहि तनो रुद्रः प्रचोदयत।
१०. त्र्यम्बकं यजामहे सुगच्छं पुरुषवर्धनम्। उर्वारुक्मिय यन्त्रान्वृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। त्र्यम्बकं यजामहे सुगच्छं पतिवेदनम्। उर्वारुक्मिय वन्मनादिदो मुक्षीय मामृतः। (यजु० ३।६०)
११. पयः पृथिव्यां पय ओपर्धीपु पयो दिव्यन्तरिष्ठे पयो धा:। पयस्वतोः प्रदिशः सन्तु महाय। (यजु० १८।३६)
१२. दधिक्राव्यो अकारिपे जियोरस्त्व वाजिनः। सुरभि नो मुखा करत्पण आशूष्पि तारिषत्। (यजु० २३।२२)
१३. धूं धूं धृतपावानः। पिवत वसां वसापावानः। पिवतान्तरिष्ठस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रदिशा आदिशो विदिशा उदिशो दिशः स्वाहा। (यजु० ६।१९)
१४. मधु वाता ऋतायते मधु ऋतिन्ति सिन्धवः। माण्डीर्नः सन्त्वोपधीः। (यजु० १३।२७)
१५. मधु नक्तमुपेषो मधुमत्पार्थिवः रजः। मधु द्वारस्तु नः पिता। (यजु० १३।२८)
१६. मधुमान्नो बन्स्तपिर्मधुमारं अस्तु सूर्यः। माण्डीर्नो भवन्तु नः। (यजु० १३।२९)
१७. मा नस्तोके तनये मा न अयुषि मा नो गोपु मा नो अस्वेषु रीतिः। मा नो वीरान् रुद्र भामिनो वधीहविष्यन्तः सदमित् त्वा हवामहे। (यजु० १६।१६)
१८. नमो धृष्णे च प्रमुशाय च नमो निषिङ्गे चेषुषिमते च नमस्तीर्णेष्वे चायुधिने च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च। (यजु० १६।३६)
१९. या ते हेतीम्बुद्धम हस्ते वधुव ते धनुः। तयास्यान्विष्वतस्त्वमयश्या परि भुज (११)। परि ते धन्वनो हेतिरस्यान्वङ्गु विश्वतः। अयो य इषुधिस्त्वारे अस्मन्ति धेति ह तम् (१२)। अवतथ धनुष्वदः सहस्राक्ष शतपुष्पे। निषिर्य रस्त्वानो मुखा शिवो नः सुमना भव (१३)। नमस्त आयुधपानताताय धृष्णाते। उभायामुत ते नमो वाहुभ्यो तत्व धन्वने (१४)। (यजु० १६)
२०. नमः शवभ्यः शवपतिभृत्य च नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च। (यजु० १६।२८)

भगवान्को प्रेमपूर्वक गन्थ (सुगच्छित चन्दन एवं रोली) चढ़ाये। 'नमस्तक्षभ्यो'१३ इस मन्त्रसे अक्षत अर्पित करे। 'नमः पार्याय०'१४ इस मन्त्रसे फूल चढ़ाये। 'नमः कपर्दिने च०'१५ इत्यादि मन्त्रसे विधिपूर्वक धूप दे। 'नम आशावे०'१६ इस ऋचासे शास्त्रोक विधिके अनुसार दीप निवेदित करे। तत्पश्चात् [हाथ धोकर] 'नमो ज्येष्ठाय०'१७ इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है। 'इमा रुद्राय०'१८ इस ऋचासे फल समर्पण करे। फिर 'नमो द्रव्याय०'१९ इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है। 'इमा रुद्राय०'२० इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है।

'इमा रुद्राय०'२१ इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है। 'इमा रुद्राय०'२२ इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है। 'इमा रुद्राय०'२३ इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है। 'इमा रुद्राय०'२४ इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है। 'इमा रुद्राय०'२५ इस मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य अर्पित करे। फिर पूर्वोक्त ऋष्मक मन्त्रसे आचमन कराये—ऐसा कहा गया है।

१. नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मरिभ्यश्च वो नमो नमो नियादेभ्यः पुञ्जिष्टेभ्यश्च वो नमो नमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः। (यजु० १६। २७)

२. नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतारायाय चोत्तरायाय च नमस्तीर्याय च कूल्याय च नमः शब्द्याय च फैन्याय च। (यजु० १६। ४२)

३. नमः पर्णाय च पर्णशदाय च नम उद्यारायाय चाभिन्नते च नम आधिविदे च प्रखिदते च नम इमुकृद्यो धूष्कृद्यश्च वो नमो नमो विकिरिकेभ्यो नमो विकिरितेभ्यः। (यजु० १६। ४६)

४. नमः कपर्दिने च व्युत्पत्तेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशाय च शिरिशाय च नमो गोदुष्माय चेषुपते च। (यजु० १६। २९)

५. नम आपावे चाविराय च नमः शोभ्राय च शोभ्राय च नम ऊर्माय चावस्तवन्याय च नमो नातेयाय च द्वौप्याय च। (यजु० १६। ३१)

६. नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगलभाय च नमो जबन्याय च बुद्ध्याय च। (यजु० १६। ३२)

७. इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहे मतोः। यथा शमसद द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टे ग्रामे अस्तिननातुरम्। (यजु० १६। ४८)

८. नमो द्रव्याय च गोप्त्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो इदव्याय च निवेष्याय च नमः काट्याय च गहरेष्टाय च। (यजु० १६। ४०)

९. हरिष्यगर्भः समर्वताग्रे भूतस्य जातः परिरक आसीत्। स दाधा पूर्णिवीं द्यामुरेषो कस्यै देवाय हविया विधेम। (यजु० १३। ४)

१०. देवस्य तत्त्वा सवितुः प्रसवेष्यविनोर्वाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्विष्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाधि पित्त्वामि। (यजु० २०। ३)

११. एष ते रुद्र भागः सह स्वलाभिक्यवा ते जुहुस्त स्वाहा। एष ते रुद्र भाग आशुस्ते पर्यः॥ (यजु० ३। ५७)

१२. यतो यतः समाहसे ततो नो अभ्यु कुरु। शो नः कुरु प्रजायोऽभयः॥ (यजु० ३। २३)

१३. नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो रथभ्यो अरथेभ्यश्च वो नमो नमः। शतुभ्यः संग्रहीतभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्यो अभकेभ्यश्च वो नमः॥ (यजु० १६। २६)

१४. नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सीमभेदीभ्य एव च। नमो ग्राहस्तुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥ (गोपमतीविदा)

१५. यजु० वेदका वह अंस, जिसमें रुद्रके सी या डससे अधिक नम आये हैं और उनके द्वारा लक्षदेवकी स्तुति की गयी है। (देखिये यजु० अस्याय १६)

गातु०^१ इत्यादि मन्त्रसे भगवान् शंकरका विसर्जन करे। इस प्रकार शिवपूजाकी वैदिक विधिका विस्तारसे प्रतिपादन किया गया ॥ १२—३७५/२ ॥

[हे महर्षियो!] अब संक्षेपमें पार्थिवपूजनकी वैदिक विधिको सुनें। 'सद्योजातम्०^२' इस ऋचासे पार्थिवलिंग बनानेके लिये मिट्टी ले आये। 'वामदेवायाऽ०^३' मन्त्र पढ़कर उसमें जल डाले। [जब मिट्टी सनकर तैयार हो जाय, तब] 'अधोरो०^४' मन्त्रसे लिंग निर्माण करे। फिर 'तत्पुरुषायाऽ०^५' इस मन्त्रसे उसमें भगवान् शिवका विधिवत् आवाहन करे। तदनन्तर 'ईशान०^६' मन्त्रसे भगवान् शिवको चेदीपर स्थापित करे। इनके सिवाय अन्य सब विधानोंको भी शुद्ध बुद्धिवाला उपासक संक्षेपसे ही सम्पन्न करे। इसके बाद विद्वान् पुरुष पंचाक्षर मन्त्रसे अथवा गुरुके द्वारा दिये हुए अन्य किसी शिवसम्बन्धी मन्त्रसे सोलह उपचारोंद्वारा विधिवत् पूजन करे अथवा—'भवाय भवनाशाय प्रहादेवाय धीमहि। उग्राय उग्रनाशाय शर्वाय शशिमौलिने ॥'

—इस मन्त्रद्वारा विद्वान् उपासक भगवान् शंकरकी पूजा करे। वह भ्रम छोड़कर उत्तम भक्तिसे शिवकी आराधना करे; क्योंकि भगवान् शिव भक्तिसे ही [मनोवांछित] फल देते हैं ॥ ३८—४४ ॥

हे ब्राह्मणो! यह जो वैदिक विधिसे पूजनका क्रम बताया गया है, इसका पूर्णरूपसे आदर करता हुआ मैं पूजाकी एक दूसरी विधि भी बता रहा हूँ, जो उत्तम होनेके साथ ही सर्वसाधारणके लिये उपयोगी है। हे मुनिवरो! पार्थिवलिंगकी पूजा भगवान् शिवके नामोंसे बतायी गयी है। वह पूजा सम्पूर्ण अभीष्टोंको देनेवाली है, मैं उसे बताता हूँ सुनो! हर, महेश्वर, शम्भु, शूलपाणि, पिनाकधृक्, शिव, पशुपति और महादेव—[ये क्रमशः शिवके आठ

नाम कहे गये हैं ।] इनमेंसे प्रथम नामके द्वारा अर्थात् 'ॐ हराय नमः' का उच्चारण करके पार्थिवलिंग बनानेके लिये मिट्टी लाये। दूसरे नाम अर्थात् 'ॐ महेश्वराय नमः' का उच्चारण करके लिंगनिर्माण करे। फिर 'ॐ शम्भवे नमः' बोलकर उस पार्थिवलिंगकी प्रतिष्ठा करे। तत्पश्चात् 'ॐ शूलपाणये नमः' कहकर उस पार्थिवलिंगमें भगवान् शिवका आवाहन करे। 'ॐ पिनाकधृवे नमः' कहकर उस शिवलिंगको नहलाये। 'ॐ शिवाय नमः' बोलकर उसकी पूजा करे। फिर 'ॐ पशुपतये नमः' कहकर क्षमा-प्रार्थना करे और अन्तमें 'ॐ महादेवाय नमः' कहकर आराध्यदेवका विसर्जन कर दे। इस प्रकार प्रत्येक नामके आदिमें 'ॐ' कार और अन्तमें चतुर्थी विभक्तिके साथ 'नमः' पद लगाकर बड़े आनन्द और भक्तिभावसे [पूजनसम्बन्धी] सारे कार्य करने चाहिये ॥ ४५—४१ ॥

षडक्षरमन्त्रसे अंगन्यास और करन्यासकी विधि भलीभौति सम्पन्न करके नीचे लिखे अनुसार ध्यान करे—

कैलास पर्वतपर एक सुन्दर सिंहासनके मध्यभागमें विराजमान, सनन्द आदि भक्तोंसे पूजित, भक्तोंके दुःखरूप दावानलको नष्ट कर देनेवाले, अप्रमेय, उमाके साथ समासीन तथा विश्वके भूषणस्वरूप भगवान् शिवका विनान करना चाहिये। भगवान् महेश्वरका प्रतिदिन इस प्रकार ध्यान करे—उनकी अंगकान्ति चाँदीके पर्वतकी भौति गौर है, वे अपने मस्तकपर मनोहर चन्द्रमाका मुकुट धारण करते हैं, रूपोंके आभूषण धारण करनेसे उनका श्रीअंग और भी उद्घासित हो उठा है, उनके चार हाथोंमें क्रमशः परशु, मूगमुद्रा, वर एवं अभ्यमुद्रा सुशोभित हैं, वे सदा प्रसन्न रहते हैं। कमलके आसनपर बैठे हुए हैं, देवतालोग चारों ओर खड़े होकर उनकी स्तुति कर रहे हैं,

१. देवा गातुविदो गातु वित्ता गातुमिति । मनसस्त इम देव यज्ञः स्वाहा वाते धः ॥ (यजु० ८।२१)

२. सद्योजातं प्रश्वामि सद्योजाताय वै नमो नमः । भवे भवे नतिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥

३. ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः । व्रीष्टाय नमो रुद्राय नमः । कलाय नमः । कलाविकाणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः । सर्वभूतदमनाय नमो भूतेनामाय नमः ।

४. ॐ अधोरोऽव श्वेषोऽप्यो श्वेषोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वशेषेभ्यो नमस्तु रुद्रप्रपेभ्यः ।

५. ॐ तत्पुरुषाय विष्णवे महादेवाय धीमहि तनो रुद्रः प्रचोदयात् ।

६. ॐ ईशानः । सर्वभूतानामीशवः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्माणोऽधिपतिर्ब्रह्माणा शिवो मेऽस्तु सदा शिवोम् ॥

उन्होंने वस्त्रके रूपमें व्याप्रचर्म धारण कर रखा है, वे इस विश्वके आदि हैं, बीज (कारण)-रूप हैं, सबका समस्त भय हर लेनेवाले हैं, उनके पाँच मुख हैं और प्रत्येक मुखमण्डलमें तीन-तीन नेत्र हैं* ॥ ५०—५२ ॥

इस प्रकार ध्यान करके तथा उत्तम पार्थिवलिंगका पूजन करके गुरुके दिये हुए पंचाक्षरमन्त्रका विधिपूर्वक जप करे। हे विद्वरो! विद्वान् पुरुषको चाहिये कि वह देवेश्वर शिवको प्रणाम करते हुए नाना प्रकारकी स्तुतियोंद्वारा उनका स्तवन करे तथा शतरुद्रिय (यजु० १६वें अध्यायके मन्त्रों)-का पाठ करे। तत्पश्चात् अंजलिमें अक्षत और फूल लेकर उत्तम भक्तिभावसे निम्नांकित मन्त्रोंको पढ़ते हुए प्रेम और प्रसन्नताके साथ भगवान् शंकरसे इस प्रकार प्रार्थना करे— ॥ ५३—५५ ॥

'सबको सुख देनेवाले हे कृपानिधान! हे भूतनाथ! हे शिव! मैं आपका हूँ, आपके गुणोंमें ही मेरे प्राण बसते हैं अथवा आपके गुण ही मेरे प्राण—मेरे जीवनसंवर्स्य हैं, मेरा चित्त सदा आपके ही चिन्तनमें लगा हुआ है— यह जानकर मुझपर प्रसन्न होइये, कृपा कीजिये। हे शंकर! मैंने अनजानमें अथवा जानबूझकर यदि कभी आपका जप और पूजन आदि किया हो, तो आपकी कृपासे वह सफल हो जाय। हे गौरीनाथ! मैं इस समय महान् पापी हूँ और आप सदासे ही परम महान् पतितपावन हैं—इस बातका विचार करके आप जैसा

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहिताके साम्बन्धसम्बन्धमें पार्थिव शिवलिंगके पूजनकी विधिका वर्णन नामक वीसवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ २० ॥

चाहें, वैसा करें। हे महादेव! हे सदाशिव! वेदों, पुराणों, नाना प्रकारके शास्त्रीय सिद्धान्तों और विभिन्न महर्षियोंने भी अबतक आपको पूर्णरूपसे नहीं जाना है, तो फिर मैं कैसे जान सकता हूँ। हे महेश्वर! मैं जैसा हूँ, वैसा ही, उसी रूपमें सम्पूर्ण भावसे आपका हूँ, आपके आश्रित हूँ, इसलिये आपसे रक्षा पानेके योग्य हूँ। हे परमेश्वर! आप मुझपर प्रसन्न होइये'। हे मुने! इस प्रकार प्रार्थना करके हाथमें लिये हुए अक्षत और पुष्टको भगवान् शिवके ऊपर चढ़ाकर उन शम्भुदेवको भक्तिभावसे विधिपूर्वक साष्ट्यांग प्रणाम करे। तदनन्तर शुद्ध बुद्धिवाला उपासक शास्त्रोक विधिसे इष्टदेवकी परिक्रमा करे। फिर श्रद्धापूर्वक स्तुतियोंद्वारा देवेश्वर शिवकी स्तुति करे। इसके बाद गला बजाकर (गलेसे अव्यक्त शब्दका उच्चारण करके) पवित्र एवं विनीत चित्तवाला साधक भगवान्को प्रणाम करे। फिर आदरपूर्वक विज्ञप्ति करे और उसके बाद विसर्जन करे ॥ ५६—६३ ॥

हे मुनिवरो! इस प्रकार विधिपूर्वक पार्थिवपूजा बतायी गयी, जो भोग और मोक्ष देनेवाली तथा भगवान् शिवके प्रति भक्तिभावको बढ़ानेवाली है। जो मनुष्य इस अध्यायका शुद्धचित्तसे पाठ अथवा श्रवण करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर सभी कामनाओंको प्राप्त करता है। यह उत्तम कथा दीर्घायुष्य, आरोग्य, यश, स्वर्ग, पुन्र-पौत्र आदि सभी सुखोंको प्रदान करनेवाली है ॥ ६४—६६ ॥

इक्कीसवाँ अध्याय

कामनाभेदसे पार्थिवलिंगके पूजनका विधान

ऋषिगण बोले—हे व्यासशिष्य सूतजी! हे महाभाग! आपको नमस्कार है। हे तात! आपने अच्छी प्रकारसे पार्थिवाचार्नकी विधि बतायी। अब सकाम पूजनमें मनोवांछित पदार्थके अनुसार कितनी संख्यामें

पार्थिव लिंगोंके पूजनकी विधि है, हे दीनवत्सल! इसे कृपापूर्वक बताइये ॥ १—२ ॥

सूतजी बोले—हे ऋषियो! आप सब लोग पार्थिव-पूजनकी विधिका श्रवण करें, जिसका अनुष्ठान

* ध्यायेन्तरं महेश्वर रजतगिरिनिमं चालचन्द्रार्दर्शं रत्नाकर्णीज्वलालं परगुणवार्भातिवस्ते प्रसन्नम्। पदासीनं समनात्सुतमपार्णवाङ्ग्रीष्मकारं वसान विश्वार्ण विश्ववोर्ज निदित्यभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥ (विद्येश्वरसंहिता २० ५२)

करनेसे मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है। पार्थिवलिंगोंके पूजनको छोड़कर जो लोग अन्य देवोंके यजनमें लगे रहते हैं, उनकी वह पूजा, तप तथा दानादि व्यर्थ हो जाता है॥ ३-४॥

अब मैं कामनाके अनुसार पार्थिवलिंगोंकी संख्या बताता हूँ, हे मुनिश्रेष्ठ! अधिक संख्यामें अर्चन तो निश्चय ही फलदायी होता है। प्रथम आवाहन, तब प्रतिष्ठा, तदनन्तर सभी लिंगोंका पूजन अलग-अलग करना चाहिये। लिंगोंका आकार तो एक समान ही रखना चाहिये॥ ५-६॥

विद्याप्राप्तिकी कामनासे पुरुष भक्तिपूर्वक एक हजार पार्थिव शिवलिंगोंका पूजन करे। इससे निश्चय ही उस फलको प्राप्ति हो जाती है। धन चाहनेवाले पुरुषको उसके आधे (पाँच सौ), पुत्र चाहनेवालेको ढेढ़ हजार और वस्त्रोंकी आकांक्षावालेको पाँच सौ शिवलिंगोंका पूजन करना चाहिये॥ ७-८॥

मोक्षकी कामनावाले व्यक्तिको एक करोड़, भूमिकी अभिलाषावालेको एक हजार, दयाप्राप्तिकी इच्छावालेको तीन हजार और तीर्थटनकी इच्छावालेको दो हजार शिवलिंगोंकी पूजा करनी चाहिये। मित्रप्राप्तिकी इच्छावालेको तीन हजार तथा अभिचार कर्मोंमें पाँच सौसे लेकर एक हजारतक पार्थिव शिवलिंगोंके पूजनकी विधि है। (कारागार आदिके) बन्धनसे छुटकारेकी इच्छासे ढेढ़ हजार तथा राजभयसे मुक्तिकी इच्छासे पाँच सौ शिवलिंगोंका पूजन बुद्धिमानोंको जानना चाहिये॥ ९-१२॥

चोर आदिके संकटसे बचनेके लिये दो सौ और डाकिनी आदिके भयसे मुक्तिहेतु पाँच सौ पार्थिव शिवलिंगोंका पूजन बताया गया है। दरिद्रतासे छुटकारेके लिये पाँच हजार और सभी कामनाओंकी सिद्धिके लिये दस हजार पार्थिव शिवलिंगोंका पूजन करना चाहिये। हे मुनिश्रेष्ठ! अब मैं नित्यपूजनविधि बताता हूँ, आप लोग सुनें॥ १३-१४॥

एक पार्थिवलिंगका नित्य पूजन पापोंका नाश करनेवाला और दो लिंगोंका पूजन अर्थकी सिद्धि करनेवाला

बताया गया है। तीन लिंगोंका पूजन सभी कामनाओंकी सिद्धिका मुख्य हेतु कहा गया है। पूर्वमें बतायी गयी संख्याविधियें भी उत्तरोत्तर संख्या अधिक फलदायिनी होती हैं। अन्य मुनियोंके मतसे संख्याका जो अन्तर है, वह भी अब बताता हूँ॥ १५-१६॥

बुद्धिमान् मनुष्य दस हजार पार्थिव शिवलिंगोंका अर्चन करके महान् राजभयसे भी मुक्त होकर निर्भय हो जाता है। कारागार आदिसे छुटनेके लिये दस हजार लिंगोंका अर्चन करना चाहिये और डाकिनी आदिके भयसे छुटनेके लिये सात हजार लिंगार्चन करना चाहिये॥ १७-१८॥

पुत्रहीन पुरुष पचपन हजार लिंगार्चन करे, कन्या-सन्तानकी प्राप्ति दस हजार लिंगार्चनसे हो जाती है। दस हजार लिंगार्चनसे विष्णु आदि देवोंके समान ऐश्वर्य प्राप्त हो जाता है। दस लाख शिवलिंगार्चनसे अतुल सम्पत्ति प्राप्त हो जाती है॥ १९-२०॥

जो मनुष्य पृथ्वीपर एक करोड़ शिवलिंगोंका अर्चन कर लेता है, वह तो शिवरूप ही हो जाता है; इसमें सन्देह नहीं करना चाहिये। पार्थिवपूजा करोड़ों यज्ञोंका फल प्रदान करनेवाली है। इसलिये सकाम भक्तोंके लिये यह भोग और मोक्ष दोनों प्रदान करती है। जिस मनुष्यका समय रोज बिना लिंगार्चनके व्यतीत होता है, उस दुराचारी तथा दुष्टात्मा व्यक्तिकी महान् हानि होती है॥ २१-२३॥

एक ओर सारे दान, विविध व्रत, तीर्थ, नियम और यज्ञ हैं तथा उनके समकक्ष दूसरी ओर पार्थिव शिवलिंगका पूजन माना गया है। कलियुगमें तो जैसा त्रेष्ठ लिंगार्चन दिखायी देता है, वैसा अन्य कोई साधन नहीं है—यह समस्त शास्त्रोंका निश्चित सिद्धान्त है। शिवलिंग भोग और मोक्ष देनेवाला तथा विविध आपदाओंका निवारण करनेवाला है। इसका नित्य अर्चन करके मनुष्य शिवसायुज्य प्राप्त कर लेता है॥ २४-२६॥

महर्षियोंको शिवनाममय इस लिंगकी नित्य पूजा करनी चाहिये। यह सभी लिंगोंमें त्रेष्ठ है, अतः विधानपूर्वक इसकी पूजा करनी चाहिये। हे मुनिवरो!

परिमाणके अनुसार लिंग तीन प्रकारके कहे गये हैं— उत्तम, मध्यम और अधम । उसे आपलोग सुनें; मैं बताता हूँ । जो चार अङ्गुल ऊँचा और देखनेमें सुन्दर हो तथा वेदीसे युक्त हो, उस शिवलिंगको शास्त्रज्ञ महर्षियोंने उत्तम कहा है । उससे आधा मध्यम और उससे भी आधा अधम माना गया है । इस तरह तीन प्रकारके शिवलिंग कहे गये हैं, जो उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं ॥ २७—३० ॥

जो भक्ति तथा श्रद्धासे युक्त होकर अनेक लिंगोंकी मनसे नित्य पूजा करता है, वह मनोर्वाञ्छित कामनाओंकी प्राप्ति कर लेता है ॥ ३१ ॥

चारों वेदोंमें लिंगार्चनसे बढ़कर कोई पुण्य नहीं है; सभी शास्त्रोंका भी यह निर्णय है ॥ ३२ ॥

विद्वान्को चाहिये कि इस समस्त कर्म-प्रपञ्चका त्याग करके परम भक्तिके साथ एकमात्र शिवलिंगका विधिवत् पूजन करे ॥ ३३ ॥

केवल शिवलिंगकी पूजा हो जानेपर समग्र चराचर जगतकी पूजा हो जाती है । संसार-सागरमें इबे हुए लोगोंके तरनेका अन्य कोई भी साधन नहीं है ॥ ३४ ॥

अज्ञानरूपी अन्यकारसे अन्ये हुए तथा विषय-वासनाओंमें असक्त चित्तवाले लोगोंके लिये इस जगत्में [भवसागरसे पार होनेहेतु] लिंगार्चनके अतिरिक्त अन्य कोई नौका नहीं है ॥ ३५ ॥

ब्रह्म-विष्णु आदि देवता, मुनिगण, यक्ष, रक्षस, गन्धर्व, चारण, सिद्धजन, दैत्य, दानव, शेष आदि नाग, गरुड़ आदि पक्षी, प्रजापति, मनु, किन्नर और मानव समस्त अर्थसिद्धि प्रदान करनेवाले शिवलिंगकी महान् भक्तिके साथ पूजा करके अपने मनमें स्थित उन-उन समस्त अभीष्ट कामनाओंको प्राप्त कर चुके हैं ॥ ३६—३८ ॥

ब्राह्मण, धन्त्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा विलोम संकर—कोई भी क्यों न हो, वह अपने अधिकारके अनुसार वैदिक अथवा तात्त्विक मन्त्रसे सदा आदरपूर्वक शिवलिंगकी पूजा करे । हे ब्राह्मणो ! हे महर्षियो ! अधिक कहनेसे क्या लाभ ! शिवलिंगका पूजन करनेमें स्त्रियोंका तथा अन्य सब लोगोंका भी अधिकार है ॥ ३९—४० ॥

द्विजोंके लिये वैदिक पद्धतिसे ही शिवलिंगकी पूजा

श्रेष्ठ है, परंतु अन्य लोगोंके लिये वैदिक मार्गसे पूजा करनेकी सम्पत्ति नहीं है । वेदज्ञ द्विजोंको वैदिक मार्गसे ही पूजन करना चाहिये, अन्य मार्गसे नहीं—यह भगवान् शिवका कथन है । दधीचि, गौतम आदिके शापसे जिनका चित दग्ध हो गया है, उन द्विजोंकी वैदिक कर्ममें श्रद्धा नहीं होती । जो मनुष्य वेदों तथा स्मृतियोंमें कहे हुए सत्कर्मोंकी अवहेलना करके दूसरे कर्मको करने लगता है, उसका मनोरथ कभी सफल नहीं होता ॥ ४१—४४ ॥

इस प्रकार विधिपूर्वक भगवान् शंकरका नैवेद्यान्त पूजन करके उनकी त्रिभुवनमयी आठ मूर्तियोंका भी वहीं पूजन करे । पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा तथा यजमान—ये भगवान् शंकरकी आठ मूर्तियाँ कही गयी हैं । इन मूर्तियोंके साथ-साथ शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, ईश्वर, महादेव तथा पशुपति—इन नामोंकी भी अर्चना करे । तदनन्तर चन्दन, अक्षत और बिल्वपत्र लेकर वहाँ ईशान आदिके क्रमसे भगवान् शिवके परिवारका उत्तम भक्तिभावसे पूजन करे । ईशान, नन्दी, चण्ड, महाकाल, भृंगी, वृष, स्कन्द, कपर्दीश्वर, सोम तथा शुक्र—ये दस शिवके परिवार हैं, [जो क्रमशः ईशान आदि दसों दिशाओंमें पूजनीय हैं ।] तत्पश्चात् भगवान् शिवके समक्ष वीरभद्रका और पीछे कीर्तिमुखका पूजन करके विधिपूर्वक ग्यारह रुद्रोंकी पूजा करे ॥ ४५—५० ॥

इसके बाद पंचाक्षर-मन्त्रका जप करके शतरुद्धियका पाठ तथा नाना प्रकारकी स्तुतियाँ करके शिवपंचांगका पाठ करे । तत्पश्चात् परिक्रमा और नमस्कार करके शिवलिंगका विसर्जन करे । इस प्रकार मैंने शिवपूजनकी सम्पूर्ण विधिका आदरपूर्वक वर्णन किया । गत्रिमें देवकार्यके सदा उत्तराभिमुख होकर ही करना चाहिये । इसी प्रकार शिवपूजन भी पवित्र भावसे सदा उत्तराभिमुख होकर ही करना उचित है । जहाँ शिवलिंग स्थापित हो, उससे पूर्व दिशाका आश्रय लेकर बैठना या खड़ा नहीं होना चाहिये; क्योंकि वह दिशा भगवान् शिवके आगे या सामने पड़ती है (इष्टदेवका सामना रोकना ठीक नहीं है) । शिवलिंगसे उत्तर दिशामें भी न बैठें; क्योंकि उधर भगवान् शंकरका वायांग है, जिसमें शक्तिस्वरूपा देवी

उमा विराजमान हैं। पूजकको शिवलिंगसे पश्चिम दिशामें भी नहीं बैठना चाहिये; क्योंकि वह आराध्यदेवका पृष्ठभाग है (पीछेकी ओरसे पूजा करना उचित नहीं है) अतः अवशिष्ट दक्षिण दिशा ही ग्राह है, उसीका आश्रय लेना चाहिये। [तात्पर्य यह कि शिवलिंगसे दक्षिण दिशामें उत्तराभिमुख होकर बैठे और पूजा करे।]

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विवेदाभ्यरसहिताके साध्यसाधनखण्डमें पार्थिव-पूजन-वर्णन नामक इककीसवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ २१ ॥

बाईसवाँ अध्याय

शिव-नैवेद्य-भक्षणका निर्णय एवं बिल्वपत्रका माहात्म्य

ऋषिगण बोले—हे महापुने! हमने पहले सुना है कि भगवान् शिवको अर्पित किया गया नैवेद्य अग्राह्य होता है, अतएव नैवेद्यके विषयमें निर्णय और बिल्वपत्रका माहात्म्य भी कहिये ॥ १ ॥

सूतजी बोले—हे मुनियो! अब आप सब सावधानीसे सुनें। मैं प्रेमपूर्वक सब कुछ कह रहा हूँ। आप लोग शिवव्रत धारण करनेवाले हैं, अतः आपलोग धन्य हैं ॥ २ ॥

जो शिवका भक्त, पवित्र, शुद्ध, सद्ब्रती तथा दृढ़निश्चयी है, उसे शिवनैवेद्य अवश्य ग्रहण करना चाहिये और अग्राह्य भावनाका त्याग कर देना चाहिये ॥ ३ ॥

शिवनैवेद्यको देखनेमात्रसे ही सभी पाप दूर हो जाते हैं और शिवका नैवेद्य खानेसे तो करोड़ों पुण्य स्वतः आ जाते हैं ॥ ४ ॥

हजार यज्ञोंकी बात कौन कहे, अर्बुद यज्ञ करनेसे भी वह पुण्य प्राप्त नहीं हो पाता है, जो शिवनैवेद्य खानेसे प्राप्त हो जाता है। शिवका नैवेद्य खानेसे तो शिवसायुज्यकी प्राप्ति भी हो जाती है ॥ ५ ॥

जिस घरमें शिवको नैवेद्य लगाया जाता है या अन्यत्रसे शिवको समर्पित नैवेद्य प्रसादरूपमें आ जाता है, वह घर पवित्र हो जाता है और वह अन्यको भी पवित्र करनेवाला हो जाता है ॥ ६ ॥

याये हुए शिवनैवेद्यको प्रसन्नतापूर्वक सिर छुकाकर ग्रहण करके भगवान् शिवका स्मरण करते हुए उसे खा लेना चाहिये ॥ ७ ॥

विद्वान् पुरुषको चाहिये कि वह बिना भस्मका त्रिपुण्ड्र लगाये, बिना लद्धाक्षकी माला धारण किये तथा बिल्वपत्रका बिना संग्रह किये भगवान् शंकरकी पूजा न करे। हे मुनिवरो! शिवपूजन आरथ करते समय यदि भस्म न मिले, तो मिट्टीसे ही ललाटमें त्रिपुण्ड्र अवश्य कर लेना चाहिये ॥ ५१—५६ ॥

आये हुए शिवनैवेद्यको दूसरे समयमें ग्रहण करेंगा—ऐसी भावना करके जो मनुष्य उसे ग्रहण करनेमें विलम्ब करता है, उसे पाप लगता है ॥ ८ ॥

जिसमें शिवनैवेद्य ग्रहण करनेकी इच्छा उत्पन्न नहीं होती, वह महान् पापी होता है और निश्चित रूपसे नरकको जाता है ॥ ९ ॥

हृदयमें अवस्थित शिवलिंग या चन्द्रकान्तमणिसे बने हुए शिवलिंग अथवा स्वर्ण या चाँदीसे बनाये गये शिवलिंगको समर्पित किया गया नैवेद्य शिवकी दीक्षा लिये भक्तको खाना ही चाहिये—ऐसा कहा गया है ॥ १० ॥

इतना ही नहीं शिवदीक्षित भक्त समस्त शिवलिंगोंके लिये समर्पित महाप्रसादरूप शुभ शिवनैवेद्यको खा सकता है ॥ ११ ॥

जिन मनुष्योंने अन्य देवोंकी दीक्षा ली है और शिवकी भक्तिमें वे अनुरक्त रहते हैं, उनके लिये शिवनैवेद्यके भक्षणके विषयमें निर्णयको प्रेमपूर्वक आप सब सुनें ॥ १२ ॥

हे ब्राह्मणो! शालग्राममें उत्पन्न शिवलिंग, रसलिंग (पारदलिंग), पाणालिंग, रजतलिंग, स्वर्णलिंग, देवों और सिद्ध मुनियोंके द्वारा प्रतिष्ठित शिवलिंग, केसरके बने हुए लिंग, स्फटिकलिंग, रत्नलिंग और ज्योतिलिंग आदि समस्त शिवलिंगोंके लिये समर्पित नैवेद्यका भक्षण करना चान्द्रायण-व्रतके समान फल देनेवाला कहा गया है ॥ १३—१४ ॥

यदि ब्रह्महत्या करनेवाला भी पवित्र होकर शिवका पवित्र निर्मात्य धारण करता है और उसे खाता है, उसके

सम्पूर्ण पाप शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ॥ १५ ॥

जहाँ चण्डका अधिकार हो, वहाँ शिवलिंगके लिये समर्पित नैवेद्यका भक्षण मनुष्योंको नहीं करना चाहिये; जहाँ चण्डका अधिकार न हो, वहाँ भक्तिपूर्वक भक्षण करना चाहिये ॥ १६ ॥

बाणलिंग, लौहलिंग, सिद्धलिंग, स्वयम्भूलिंग और अन्य समस्त प्रतिमाओंमें चण्डका अधिकार नहीं होता है ॥ १७ ॥

जो विधिपूर्वक शिवलिंगको स्नान कराकर उस स्नानजलको तीन बार पीता है, उसके समस्त पाप शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं ॥ १८ ॥

[चण्डके द्वारा अधिकृत होनेके कारण] अग्राहा शिवनैवेद्य पत्र-पृष्ठ-फल और जल—यह सब शालग्रामशिलाके स्पर्शसे पवित्र हो जाता है ॥ १९ ॥

हे मुनीश्वरो! शिवलिंगके ऊपर जो भी द्रव्य चढ़ाया जाता है, वह अग्राहा है और जो लिंगके स्पर्शसे बाहर है, उसे अत्यन्त पवित्र जानना चाहिये ॥ २० ॥

हे मुनिश्रेष्ठो! इस प्रकार मैंने शिवनैवेद्यका निर्णय कह दिया। अब आप सब सावधानीसे बिल्वपत्रके माहात्म्यको आदरपूर्वक सुनें ॥ २१ ॥

बिल्ववृक्ष तो महादेवस्वरूप है, देवोंके द्वारा भी इसकी स्तुति की गयी है, अतः जिस किसी प्रकारसे उसकी महिमाको कैसे जाना जा सकता है ॥ २२ ॥

संसारमें जितने भी प्रसिद्ध तीर्थ हैं, वे सब तीर्थ बिल्वके मूलमें निवास करते हैं ॥ २३ ॥

जो पुण्यात्मा बिल्ववृक्षके मूलमें लिंगरूपी अव्यय भगवान् महादेवकी पूजा करता है, वह निश्चित रूपसे शिवको प्राप्त कर लेता है ॥ २४ ॥

जो प्राणी बिल्ववृक्षके मूलमें शिवजीके मस्तकपर अभिषेक करता है, वह समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेका फल प्राप्तकर पृथ्वीपर पवित्र हो जाता है ॥ २५ ॥

इस बिल्ववृक्षके मूलमें बने हुए उत्तम थालेको जलसे परिपूर्ण देखकर भगवान् शिव अत्यन्त प्रसन्न होते हैं ॥ २६ ॥

इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणके अन्तर्गत प्रथम विद्येश्वरसंहिताके साध्यसाधनचण्डमें शिवनैवेद्यवर्णन नामक वाईसदी अध्याय पूर्ण हुआ ॥ २७ ॥

जो व्यक्ति गन्ध-पुण्यादिसे बिल्ववृक्षके मूलका पूजन करता है, वह शिवलोकको प्राप्त करता है और उसके सन्तान और सुखकी अभिवृद्धि होती है ॥ २७ ॥

जो मनुष्य बिल्ववृक्षके मूलमें आदरपूर्वक दीपमालाका दान करता है, वह तत्त्वज्ञानसे सम्पन्न होकर महादेवके सानिध्यको प्राप्त हो जाता है ॥ २८ ॥

जो बिल्वशाखाको हाथसे पकड़कर उसके नवपल्लवको ग्रहण करके बिल्वकी पूजा करता है, वह समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है ॥ २९ ॥

जो पुरुष भक्तिपूर्वक बिल्ववृक्षके नीचे एक शिवभक्तको भोजन करता है, उसे करोड़ों मनुष्योंको भोजन करानेका पुण्य प्राप्त होता है ॥ ३० ॥

जो बिल्ववृक्षके नीचे दूध और धीसे युक्त अन शिव-भक्तको प्रदान करता है, वह दरिद्र नहीं रह जाता है ॥ ३१ ॥

हे ब्राह्मणो! इस प्रकार मैंने सांगोपांग शिवलिंगके पूजनविधानको कह दिया है। इसमें भी प्रवृत्तों और निवृत्तोंके लिये दो भेद हैं ॥ ३२ ॥

प्रवृत्तिमार्गियोंके लिये पीठपूजा इस भूलपर सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको देने वाली होती है। प्रवृत्त पुरुषको चाहिये कि सुपात्र गुरु आदिके द्वारा ही सारी पूजा सम्पन्न करे ॥ ३३ ॥

शिवलिंगका अभिषेक करनेके पश्चात् अगहनी अन्से नैवेद्य लगाना चाहिये। पूजाके अन्तमें उस शिवलिंगको किसी शुद्ध पुट (डिब्बे)-में रख देना चाहिये अथवा किसी दूसरे शुद्ध घरमें स्थापित कर देना चाहिये। निवृत्तिमार्गी उपासकोंके लिये हाथपर ही शिवपूजाका विधान है। उन्हें [भिक्षा आदिसे प्राप्त] अपने भोजनको ही नैवेद्यरूपमें अर्पित करना चाहिये। निवृत्तिमार्गियोंके लिये परात्पर सूक्ष्म लिंग ही श्रेष्ठ बताया गया है। उन्हें चाहिये कि विभूतिसे ही पूजा करें और विभूतिका ही नैवेद्य शिवको प्रदान करें। पूजा करनेके पश्चात् उस विभूतिस्वरूप लिंगको सिरपर सदा धारण करना चाहिये ॥ ३४—३६ ॥

तेर्द्देसवाँ अध्याय

भस्म, रुद्राक्ष और शिवनामके माहात्म्यका वर्णन

ऋषिगण बोले—हे महाभाग व्यासशिष्य सूतजी !
आपको नमस्कार है । अब आप परम उत्तम भस्म-
माहात्म्यका विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये ॥ १ ॥

भस्ममाहात्म्य, रुद्राक्षमाहात्म्य तथा उत्तम
नाममाहात्म्य—इन तीनोंका परम प्रसन्नतापूर्वक प्रतिपादन
कीजिये और हमारे हृदयको आनन्दित कीजिये ॥ २ ॥

सूतजी बोले—हे महर्षियो ! आप लोगोंने बहुत
उत्तम बात पूछी है; यह समस्त लोकोंके लिये हितकारक
विषय है । आप लोग महाधन्य, पवित्र तथा अपने कुलके
भूषणस्वरूप हैं ॥ ३ ॥

इस संसारमें कल्याणकारी परमदेवस्वरूप भगवान्
शिव जिनके देवता हैं, ऐसे आप सबके लिये यह
शिवकी कथा अत्यन्त प्रिय है ॥ ४ ॥

वे ही धन्य और कृतार्थ हैं, उन्होंका शरीर धारण
करना भी सफल है और उन्होंने ही अपने कुलका उद्धार
कर लिया है, जो शिवकी उपासना करते हैं ॥ ५ ॥

जिनके मुखमें भगवान् शिवका नाम है, जो अपने
मुखसे सदा शिव-शिव इस नामका उच्चारण करते रहते हैं,
याप उनका उसी तरह स्पर्श नहीं करते, जैसे खदिर
वृक्षके अंगारको छूनेका साहस कोई भी प्राणी नहीं कर
सकता ॥ ६ ॥

हे शिव ! आपको नमस्कार है (श्रीशिवाय
नमस्तुभ्यम्)—जिस मुखसे ऐसा उच्चारण होता है,
वह मुख समस्त पापोंका विनाश करनेवाला पावन तीर्थ
बन जाता है । जो मनुष्य प्रसन्नतापूर्वक उस मुखका
दर्शन करता है, उसे निश्चय ही तीर्थसेवनजनित फल
प्राप्त होता है ॥ ७-८ ॥

हे ब्राह्मणो ! शिवका नाम, विभूति (भस्म) तथा
रुद्राक्ष—ये तीनों त्रिवेणीके समान परम पुण्यवाले माने
गये हैं । जहाँ ये तीनों शुभतर वस्तुएँ सर्वदा रहती हैं,
उसके दर्शनमात्रसे मनुष्य त्रिवेणीस्नानका फल पा लेता
है ॥ ९-१० ॥

जिसके शरीरपर भस्म, रुद्राक्ष और मुखमें शिवनाम—
ये तीनों नित्य विद्यमान रहते हैं, उसका पापविनाशक
दर्शन संसारमें दुर्लभ है ॥ ११ ॥

उस पुण्यात्माका दर्शन त्रिवेणीके समान ही है,
भस्म, रुद्राक्ष तथा शिवनामका जप करनेवाले और
त्रिवेणी—इन दोनोंमें रंचमात्र भी अन्तर नहीं है—ऐसा
जो नहीं जानता, वह निश्चित ही पापी है; इसमें सन्देह
नहीं है ॥ १२ ॥

जिसके मस्तकपर विभूति नहीं है, अंगमें रुद्राक्ष
नहीं है और मुखमें शिवमयी वाणी नहीं है, उसे अधम
व्यक्तिके समान त्याग देना चाहिये ॥ १३ ॥

भगवान् शिवका नाम गंगा है । विभूति यमुना मानी
गयी है तथा रुद्राक्षको सरस्वती कहा गया है । इन
तीनोंकी संयुक्त त्रिवेणी समस्त पापोंका नाश करनेवाली
है ॥ १४ ॥

बहुत पहलेकी बात है, हितकारी ब्रह्माने जिसके
शरीरमें उक्त ये तीनों—त्रिपुण्ड्र, रुद्राक्ष और शिवनाम
संयुक्त रूपसे विद्यमान थे, उनके फलको तुलाके पलड़ेमें
एक और रखकर, त्रिवेणीमें स्थान करनेसे उत्पन्न
फलको दूसरी ओरके पलड़ेमें रखा और तुलना की, तो
दोनों बाबर ही उत्तरे । अतएव विद्वानोंको चाहिये कि इन
तीनोंको सदा अपने शरीरपर धारण करें ॥ १५-१६ ॥

उसी दिनसे ब्रह्मा, विष्णु आदि देव भी दर्शनमात्रसे
पापोंको नष्ट कर देनेवाले इन तीनों (रुद्राक्ष, विभूति और
शिवनाम)-को धारण करने लगे ॥ १७ ॥

ऋषिगण बोले—हे सुव्रत ! [भस्म, रुद्राक्ष और
शिवनाम] इन तीनोंको धारण करनेसे इस प्रकार उत्पन्न
होनेवाले फलका वर्णन तो आपने कह दिया है, किंतु अब
आप विशेष रूपसे उनके माहात्म्यका वर्णन करें ॥ १८ ॥

सूतजी बोले—ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ हे महाप्राज्ञ ! हे
शिवभक्त ऋषियों और विप्रो ! आप सब सद्वक्ति तथा
आदरपूर्वक उक्त भस्म, रुद्राक्ष और शिवनाम—इन

तीनोंका माहात्म्य सुनें ॥ १९ ॥

शास्त्रों, पुराणों और श्रुतियोंमें भी इनका माहात्म्य अत्यन्त गृह्ण कहा गया है। हे विप्रो! आप सबके स्नेहवश इस समय में [उस रहस्यको खोलकर] प्रकाशित करने जा रहा हूँ ॥ २० ॥

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो! इन तीनोंकी महिमाको सदसद्विलक्षण भगवान् महेश्वरके बिना दूसरा कौन भलीभौति जान सकता है। इस ब्रह्माण्डमें जो कुछ है, वह सब तो केवल महेश्वर ही जानते हैं ॥ २१ ॥

हे विप्रगण! मैं अपनी ब्रह्मा-भक्तिके अनुसार संक्षेपसे भगवन्नामकी महिमाका कुछ वर्णन करता हूँ। आप सबलोग प्रेमपूर्वक उसे सुनें। यह नाम-माहात्म्य समस्त पापोंको हर लेनेवाला सर्वोत्तम साधन है ॥ २२ ॥

'शिव'-इस नामरूपी दावानलसे महान् पातकरूपी पर्वत अनायास ही भस्म हो जाता है—यह सत्य है, सत्य है; इसमें संशय नहीं है ॥ २३ ॥

हे शैनिक! पापमूलक जो नाना प्रकारके दुःख हैं, वे एकमात्र शिवनाम (भगवन्नाम)-से ही नष्ट होनेवाले हैं; दूसरे साधनोंसे सम्पूर्ण यत्न करनेपर भी पूर्णतया नष्ट नहीं होते हैं ॥ २४ ॥

जो मनुष्य इस भूतलपर सदा भगवान् शिवके नामोंके जपमें ही लगा हुआ है, वह वेदोंका ज्ञाता है, वह पुण्यात्मा है, वह धन्यवादका पात्र है तथा वह विद्वान् माना गया है ॥ २५ ॥

हे मुने! जिनका शिवनामजपमें विश्वास है, उनके द्वारा आचरित नाना प्रकारके धर्म तत्काल फल देनेके लिये उत्सुक हो जाते हैं ॥ २६ ॥

हे महर्ष! भगवान् शिवके नामसे जितने पाप नष्ट होते हैं, उतने पाप मनुष्य इस भूतलपर कर ही नहीं सकता ॥ २७ ॥

हे मुने! ब्रह्महत्या-जैसे पापोंकी समस्त अपरिमित गशयाँ शिवनाम लेनेसे शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं ॥ २८ ॥

जो शिवनामरूपी नौकापर आरूढ़ होकर संसार-समुद्रको पार करते हैं, उनके जन्म-मरणरूप संसारके मूलभूत वे सारे पाप निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं ॥ २९ ॥

हे महामुने! संसारके मूलभूत पातकरूपी वृक्षका शिवनामरूपी कुठारसे निश्चय ही नाश हो जाता है ॥ ३० ॥

जो पापरूपी दावानलसे पीड़ित हैं, उन्हें शिवनामरूपी अमृतका पान करना चाहिये। पापोंके दावानलसे दग्ध होनेवाले लोगोंको उस शिवनामामृतके बिना शान्ति नहीं मिल सकती ॥ ३१ ॥

जो शिवनामरूपी सुधाकी वृष्टिजनित धारामें गोते लगा रहे हैं, वे संसाररूपी दावानलके बीचमें खड़े होनेपर भी कदापि शोकके भागी नहीं होते ॥ ३२ ॥

जिन महात्माओंके मनमें शिवनामके प्रति बड़ी भारी भक्ति है, ऐसे लोगोंकी सहसा और सर्वथा मुक्ति होती है ॥ ३३ ॥

हे मुनीश्वर! जिसने अनेक जन्मोंतक तपस्या की है, उसीकी शिवनामके प्रति भक्ति होती है, जो समस्त पापोंका नाश करनेवाली है ॥ ३४ ॥

जिसके मनमें भगवान् शिवके नामके प्रति कभी खण्डित न होनेवाली असाधारण भक्ति प्रकट हुई है, उसीके लिये मोक्ष सुलभ है—यह मेरा मत है ॥ ३५ ॥

जो अनेक पाप करके भी भगवान् शिवके नाम-जपमें आदरपूर्वक लग गया है, वह समस्त पापोंसे मुक्त हो ही जाता है; इसमें संशय नहीं है ॥ ३६ ॥

जैसे वनमें दावानलसे दग्ध हुए वृक्ष भस्म हो जाते हैं, उसी प्रकार शिवनामरूपी दावानलसे दग्ध होकर उस समयतकके सारे पाप भस्म हो जाते हैं ॥ ३७ ॥

हे शैनिक! जिसके अंग नित्य भस्म लगानेसे पवित्र हो गये हैं तथा जो शिवनामजपका आदर करने लगा है, वह घोर संसारसागरको भी पार कर ही लेता है ॥ ३८ ॥

ब्राह्मणोंका धनहरण और अनेक ब्राह्मणोंकी हत्या करके भी जो आदरपूर्वक शिवके नामका जप करता है, वह पापोंसे लिप्त नहीं होता है [अर्थात् उसे किसी भी प्रकारका पाप नहीं लगता है] ॥ ३९ ॥

सम्पूर्ण वेदोंका अवलोकन करके पूर्ववर्ती महर्षियोंने यही निश्चित किया है कि भगवान् शिवके नामका जप संसारसागरको पार करनेके लिये सर्वोत्तम उपाय है ॥ ४० ॥

हे मुनिवरो! अधिक कहनेसे क्या लाभ, मैं शिव-

नामके सर्वपापहारी माहात्म्यका वर्णन एक ही श्लोकमें करता हूँ ॥ ४१ ॥

भगवान् शंकरके एक नाममें भी पापहरणकी जितनी शक्ति है, उतना पातक मनुष्य कभी कर ही नहीं सकता ॥ ४२ ॥

हे मुने! पूर्वकालमें महापापी राजा इन्द्रद्युम्नने शिवनामके प्रभावसे ही उत्तम सद्गति प्राप्त की थी ॥ ४३ ॥

॥ इस प्रकार श्रीशिवमहापुराणमें प्रथम विद्येश्वरसंहिताके साम्यसाधनखण्डमें शिवनाममाहात्म्यवर्णन नामक तेर्सवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ २३ ॥

इसी तरह कोई ब्राह्मणी युवती भी जो बहुत पाप कर चुकी थी, शिवनामके प्रभावसे ही उत्तम गतिको प्राप्त हुई ॥ ४४ ॥

हे द्विजवरो! इस प्रकार मैंने आपलोगोंसे भगवन्नामके उत्तम माहात्म्यका वर्णन किया है। अब आप लोग भस्मका माहात्म्य सुनें, जो समस्त पावन वस्तुओंको भी पवित्र करनेवाला है ॥ ४५ ॥

चौबीसवाँ अध्याय

भस्म-माहात्म्यका निरूपण

सूतजी बोले—हे महर्षियो! भस्म सम्पूर्ण मंगलोंको देनेवाला तथा उत्तम है, उसके दो भेद बताये गये हैं। मैं उन भेदोंका वर्णन करता हूँ, आप लोग सावधान होकर सुनिये ॥ १ ॥

एकको 'महाभस्म' जानना चाहिये और दूसरेको 'स्वल्पभस्म'। महाभस्मके भी अनेक भेद हैं। वह तीन प्रकारका कहा गया है—श्रौत, स्मार्त और लौकिक। स्वल्पभस्मके भी बहुत—से भेदोंका वर्णन किया गया है। श्रौत और स्मार्त भस्मको केवल द्विजोंकी ही उपयोगमें अनेके योग्य कहा गया है। तीसरा जो लौकिक भस्म है, वह अन्य लोगोंके भी उपयोगमें आ सकता है ॥ २—४ ॥

त्रैष्ठ महर्षियोंने यह बताया है कि द्विजोंको वैदिक मन्त्रके उच्चारणपूर्वक भस्म धारण करना चाहिये। दूसरे लोगोंके लिये बिना मन्त्रके ही केवल धारण करनेका विधान है ॥ ५ ॥

जले हुए गोबरसे उत्पन्न होनेवाला भस्म आनेय कहलाता है। हे महामुने! वह भी त्रिपुण्ड्रका द्रव्य है—ऐसा कहा गया है ॥ ६ ॥

अग्निहोत्रसे उत्पन्न हुए भस्मका भी मनीषी पुरुषोंको संग्रह करना चाहिये। अन्य जलसे प्रकट हुआ भस्म भी त्रिपुण्ड्रधारणके काममें आ सकता है ॥ ७ ॥

जावालोपनिषद्में आये हुए 'अग्निः' इत्यादि सात

मन्त्रोद्घारा जलमिश्रित भस्मसे धूलन (विभिन्न अंगोंमें मर्दन या लेपन) करना चाहिये ॥ ८ ॥

महर्षि जावालिने सभी वर्णों और आश्रमोंके लिये मन्त्रसे या बिना मन्त्रके भी आदरपूर्वक भस्मसे त्रिपुण्ड्र लगानेकी आवश्यकता बतायी है ॥ ९ ॥

समस्त अंगोंमें सजल भस्मको मलना अथवा विभिन्न अंगोंमें तिरछा त्रिपुण्ड्र लगाना—इन कार्योंको मोक्षार्थी पुरुष प्रमादसे भी न छोड़े—ऐसा श्रुतिका आदेश है ॥ १० ॥

भगवान् शिव और विष्णुने भी तिर्यक त्रिपुण्ड्र धारण किया है। अन्य देवियोंसहित भगवती उमा और लक्ष्मीदेवीने भी वाणीद्घारा इसकी प्रशंसा की है ॥ ११ ॥

ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों, शूद्रों, वर्णसंकरों तथा जातिग्रस्त पुरुषोंने भी उद्धूलन एवं त्रिपुण्ड्रके रूपमें भस्मको धारण किया है ॥ १२ ॥

जो लोग श्रद्धापूर्वक शरीरमें भस्मका उद्धूलन (लेप) तथा त्रिपुण्ड्र धारण करनेका आचरण नहीं करते हैं, उनमें वर्णाश्रम—समन्वित सदाचारकी कमी है ॥ १३ ॥

जिनके द्वारा श्रद्धापूर्वक शरीरमें भस्मलेप और त्रिपुण्ड्रधारणका आचरण नहीं किया जाता है, उनकी विनिमुक्ति करोड़ों जन्मोंमें भी संसारसे सम्बद्ध नहीं है ॥ १४ ॥

जो श्रद्धापूर्वक शरीरमें भस्मलेप और त्रिपुण्ड्र

धारणका आचारपालन नहीं करते हैं, उन्हें सौ करोड़ कल्पोंमें भी शिवका ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता ॥ १५ ॥

जो श्रद्धापूर्वक भस्मलेप तथा त्रिपुण्डधारण नहीं करते हैं, वे महापातकोंसे युक्त हो जाते हैं, ऐसा शास्त्रोंका निर्णय है ॥ १६ ॥

जो श्रद्धापूर्वक भस्मोद्धूलन और त्रिपुण्डधारण नहीं करते हैं, उन लोगोंका सम्पूर्ण आचरण विपरीत फल प्रदान करनेवाला हो जाता है ॥ १७ ॥

हे मुनियो! जो महापातकोंसे युक्त और समस्त प्राणियोंसे द्वेष करनेवाले हैं, वे ही त्रिपुण्डधारण तथा भस्मोद्धूलनसे अत्यधिक द्वेष करते हैं ॥ १८ ॥

जो आत्मज्ञानी मनुष्य शिवाग्नि (अग्निहोत्र)-का कार्य करके 'श्राव्युषं जग्मदग्ने':—इस मन्त्रसे भस्मका मात्र सम्पूर्ण ही कर लेता है, वह समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है ॥ १९ ॥

जो मनुष्य तीनों सन्ध्याकालोंमें श्वेत भस्मके द्वारा त्रिपुण्ड धारण करता है, वह समस्त पापोंसे मुक्त होकर शिवसानिध्यका आनन्द भोगता है ॥ २० ॥

जो व्यक्ति श्वेत भस्मसे अपने मस्तकपर त्रिपुण्ड धारण करता है, वह अनादिभूत लोकोंको प्राप्तकर अमर हो जाता है ॥ २१ ॥

बिना भस्मसान किये घडक्षर ['अ० नमः शिवाय'] मन्त्रका जप नहीं करना चाहिये। विधिपूर्वक भस्मसे त्रिपुण्ड धारण करके ही इसका जप करना चाहिये ॥ २२ ॥

दयाहीन, अधम, महापापोंसे युक्त, उपपापोंसे युक्त, मूर्ख अथवा पतित व्यक्ति भी जिस देशमें नित्य भस्म धारण करते रहते हैं, वह देश सदैव सम्पूर्ण तीर्थों और यज्ञोंसे परिष्पूर्ण ही रहता है ॥ २३-२४ ॥

त्रिपुण्डधारण करनेवाला पापी जीव भी समस्त देवों और असुरोंके द्वारा पूज्य है। यदि पुण्यात्मा त्रिपुण्डसे युक्त है, तो उसके लिये कहना ही क्या ॥ २५ ॥

भस्म धारण करनेवाला शिवज्ञानी जिस देशमें स्वेच्छया चला जाता है, उस देशमें समस्त तीर्थ आ जाते हैं ॥ २६ ॥

इस विषयमें और अधिक क्या कहा जाय!

* अघोर, ईशान, तत्पुरुष, सद्योजात, वामदेवके मन्त्र ही पंचश्वरके ध्यान हैं। ये मन्त्र पू०-सं० ९८ पर दिये गये हैं।

विद्वानोंको सदैव भस्म धारण करना चाहिये एवं लिंगार्चन करके घडक्षर मन्त्रका जप करना चाहिये ॥ २७ ॥

ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, मुनिगण और देवताओंके द्वारा भी भस्म-धारण करनेके महत्वका वर्णन किया जाना सम्भव नहीं है ॥ २८ ॥

जिसने अपने वर्ण तथा आश्रमधर्मसे सम्बन्धित आचार तथा क्रियाएँ लुप्त कर दी हैं, यदि वह भी त्रिपुण्ड धारण करता है, तो समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है ॥ २९ ॥

जो भस्मधारण करनेवालेको त्यागकर धार्मिक कृत्य करते हैं, उनको करोड़ों जन्म लेनेपर भी संसारसे मुक्ति प्राप्त नहीं हो पाती है ॥ ३० ॥

जिस ब्राह्मणने भस्मसे अपने सिरपर त्रिपुण्ड धारण कर लिया है, उसने मानो गुरुसे सब कुछ पढ़ लिया है और सभी धार्मिक अनुष्ठान कर लिये हैं ॥ ३१ ॥

जो मनुष्य भस्म धारण करनेवालेको देखकर उसे कपट देते हैं, वे निश्चित ही चाण्डालसे उत्पन्न हुए हैं—ऐसा विद्वानोंको जानना चाहिये ॥ ३२ ॥

भक्तिपरायण ब्राह्मण और क्षत्रियको 'मा नस्तोके तनये०'—इस मन्त्रसे अभिमन्त्रित भस्मको शास्त्रसम्पत् कहे गये अंगोंपर धारण करना चाहिये ॥ ३३ ॥

वैश्य 'त्र्यम्बकं यजामहे'—इस मन्त्रसे और शूद्र 'शिवाय नमः'—इस पंचाक्षरमन्त्रसे भस्मको अभिमन्त्रितकर धारण करे; विधवा स्त्रियोंके लिये [भस्म-धारणकी] विधि शूद्रोंके समान कही गयी है ॥ ३४ ॥

पाँच ब्रह्मादि मन्त्रोंसे [अभिमन्त्रित भस्मके द्वारा] गृहस्थ त्रिपुण्ड धारण करे। ब्रह्मचारी 'त्र्यम्बकं यजामहे'—इस मन्त्रसे [भस्मको अभिमन्त्रित करके] और वानप्रस्थी 'अघोरेभ्योऽथ०' इस मन्त्रसे भस्मको अभिमन्त्रित करके त्रिपुण्ड धारण करे, किंतु यति [संन्यासी] प्रणवके मन्त्रसे [भस्मको अभिमन्त्रित करके] त्रिपुण्ड धारण करे ॥ ३५-३६ ॥

जो वर्णाश्रम धर्मसे परे है, वह 'शिवोऽहं'—इस भावनासे नित्य त्रिपुण्ड धारण करे और जो शिवयोगी

है, वह 'ईशानः सर्वविद्यानाम्'—इस भावनाको करता हुआ त्रिपुण्ड्र धारण करे ॥ ३७ ॥

सभी वर्णोंके द्वारा भस्म-धारण करनेके इस उत्तम कार्यको नहीं छोड़ना चाहिये; अन्य जीवोंको भी सदा भस्म धारण करना चाहिये—ऐसा भगवान् शिवका आदेश है ॥ ३८ ॥

भस्म-स्नान करनेसे जितने कण शरीरमें प्रवेश करते हैं, उन्हें ही शिवलिंगोंको वह धारक अपने शरीरमें धारण करता है ॥ ३९ ॥

ब्राह्मण, श्वारिय, वैश्य, शूद्र, वर्णसंकर, स्त्री (सधवा), विधवा, बालक, पाखण्डी, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थी, संन्यासी, ब्रती और संन्यासिनी स्त्रियाँ—ये सभी भस्मके त्रिपुण्ड्र-धारणके प्रभावके द्वारा मुक्त हो जाते हैं, इसमें संशय नहीं है ॥ ४०-४१ ॥

जैसे ज्ञानवश या अज्ञानवश धारण की गयी अग्नि सबको समान रूपसे जलाती है, वैसे ही ज्ञान या अज्ञानवश धारण किया गया भस्म भी समानरूपसे सभी मनुष्योंको पवित्र करता है ॥ ४२ ॥

भस्म तथा रुद्राक्ष-धारणके बिना जल अथवा अन्को अंशमात्र भी नहीं खाना चाहिये। गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासी और वर्णसंकर जातिका व्यक्ति यदि भस्म एवं रुद्राक्षको धारण किये बिना भोजन करता है, तो वह मात्र पाप ही खाता है और नरककी ओर प्रस्थान करता है। ऐसे समयमें उक्त वर्णधर्मोंका वह व्यक्ति गायत्री मन्त्रके जपसे तथा यति (संन्यासी) मुख्य प्रणवमन्त्रके जपसे प्रायश्चित्त करके मुक्ति प्राप्त कर सकता है ॥ ४३ ॥

जो त्रिपुण्ड्रकी निन्दा करते हैं, वे साक्षात् शिवकी ही निन्दा करते हैं और जो त्रिपुण्ड्रको धारण करते हैं, वे साक्षात् उन्हीं शिवको ही धारण करते हैं ॥ ४४ ॥

भस्मरहित भालको धिक्कार है, शिवालय (शिवमन्दिर)-रहित ग्रामको धिक्कार है, शिवार्चनसे रहित जन्मको धिक्कार है और शिवज्ञानरहित विद्याको धिक्कार है ॥ ४५ ॥

जो लोग तीनों लोकोंके आधारस्वरूप महेश्वर

भगवान् शिवकी निन्दा करते हैं और त्रिपुण्ड्र धारण करनेवालेकी निन्दा करते हैं, उनको तो देखनेसे ही पाप लगता है। वे वर्णसंकर, सुअर, असुर, खर (गधा), श्वान (कुत्ता), क्रोष्टु (सियार) तथा कीड़े-मकोड़ेके समान ही उत्पन्न होते हैं और उन नरकगामी व्यक्तियोंका [यह] जन्म मात्र पाप करनेके लिये ही होता है ॥ ४६ ॥

भगवान् शिवकी तथा त्रिपुण्ड्र धारण करनेवाले उनके भक्तोंकी जो निन्दा करते हैं, उन्हें रातमें देखनेपर चन्द्रमाके दर्शनसे और दिनमें देखनेपर सूर्यके दर्शनसे शुद्धि प्राप्त होती है। [मात्र, इतना ही नहीं स्वप्नमें भी उन्हें देखनेसे पाप लगता है, अतः] स्वप्नमें जो उन्हें देखे, उसको अपनी शुद्धिके लिये श्रुतिमें कहे गये रुद्रसूरका आदरपूर्वक पाठ करना चाहिये, तभी उससे छुटकारा मिल सकता है। उनसे बात करनेसे नरक होता है। उस नरकसे मुक्ति प्राप्त करना असम्भव है। जो भस्म-त्रिपुण्ड्र आदि धारण करनेवाले पुरुषकी निन्दा करते हैं, वे निश्चित ही मूर्ख हैं ॥ ४७ ॥

हे मुने! तान्त्रिक, ऊर्ध्वत्रिपुण्ड्र धारण करनेवाले तथा तपाये हुए चक्र आदि चिह्नोंको धारण करनेवाले इस शिवयज्ञके अधिकारी नहीं हैं, वे इस यज्ञसे बहिष्कृत हैं ॥ ४८ ॥

बृहज्ञाबालोपनिषदमें कहे गये वे लोग ही उस यज्ञमें अधिकारी हैं। प्रयत्नपूर्वक उन्हें शिवयज्ञके कार्यमें सम्मिलित करना चाहिये। उन्हें भस्म लगाना चाहिये ॥ ४९ ॥

विभूतिका चन्दनसे या चन्दनमें विभूतिका मिश्रणकर बनाये गये मिश्रित भस्मसे [मस्तकपर] त्रिपुण्ड्र धारण करना चाहिये। कुछ भी हो मस्तकपर विभूति धारण करना आवश्यक है। यदि बुद्धि नहीं है, तो भी यह करना सदा लोगोंके लिये आवश्यक ही है ॥ ५० ॥

ब्रह्मचारिणी, सधवा तथा विधवा स्त्रियों और ब्राह्मणादि द्विजोंको केशपर्यन्त भस्म धारण करना चाहिये। इसी प्रकार ब्रह्मचर्यादि आप्रमवालोंको भी स्वच्छ विभूति धारण करना उचित है; क्योंकि विभूति मोक्ष देनेवाली और समस्त पापोंका नाश करनेवाली है ॥ ५१ ॥

जो भस्मद्वारा विधिपूर्वक त्रिपुण्ड्र धारण करता है,

वह [ब्रह्महत्यादि] महापातकसमूहों और [उच्छिष्ट अन्नादिभक्षण] उपपातकोंसे मुक्त हो जाता है ॥ ५२ ॥

ब्रह्मचारी, गृहस्थ, बानप्रस्थी और सन्न्यासी [ये चारों आश्रम]; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अन्य वर्णसंकर [ये चारों वर्ण और उपवर्णके लोग]; पतित अथवा नीच मनुष्य भी विधिपूर्वक शरीरपर भस्म-उद्धूलन और त्रिपुण्ड्र धारण करके शुद्ध हो जाते हैं; [क्योंकि] सम्यक् रूपसे [धारण की गयी] भस्मसे [तत्काल ही] पापराशिसे मुक्ति प्राप्त हो जाती है ॥ ५३-५४ ॥

भस्म धारण करनेवाला व्यक्ति विशेष रूपसे स्त्रीहत्या, गोहत्या, वीरहत्या और अश्वहत्या आदि पापोंसे मुक्त हो जाता है; इसमें संशय नहीं है ॥ ५५ ॥

दूसरेके द्रव्यका अपहरण, परायी स्त्रीका अभिभर्षण, दूसरेकी निन्दा, पराये खेतका अपहरण, दूसरेको कष्ट देना, फसल और बाग आदिका अपहरण, घर फूँकना (जलाना) आदि कर्म, नीचोंसे गाय, सोना, भैंस, तिल-कम्बल, वस्त्र, अन्, धान्य तथा जल आदिका परिग्रह, दाश (मछुवारा), वेश्या, मतंगी, (चाण्डाली), शूद्रा, नटी, रजस्वला, कन्या और विधवा [स्त्रियों]-से मैथुन, मांस, चर्म, रस तथा नमकका विक्रय, पैशुन्य (चुगली) और अस्पष्ट बात, असत्य गवाही आदि देना—इस प्रकारसे अन्य असंख्य विभिन्न प्रकारके पाप त्रिपुण्ड्र धारण करनेके प्रभावसे तत्काल ही नष्ट हो जाते हैं ॥ ५६-६० ॥

भगवान् शिवके द्रव्यका अपहरण और जहाँ-कहाँ शिवकी निन्दा करनेवाला तथा शिवके भक्तोंकी निन्दा करनेवाला व्यक्ति प्रायश्चित्त करनेपर भी शुद्ध नहीं होता है ॥ ६१ ॥

जिसने शरीरपर रुद्राक्ष और मस्तकपर त्रिपुण्ड्र धारण किया है, ऐसा मनुष्य यदि चाण्डाल भी है, तो भी वह सभी ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठतम और सम्पूर्ण है ॥ ६२ ॥

जो मस्तकपर त्रिपुण्ड्र धारण करता है, वह इस संसारमें जितने भी तीर्थ हैं और गंगा आदि जितनी नदियाँ हैं, उन सबमें स्नान किये हुएके समान [पुण्यफल प्राप्त करनेवाला] होता है ॥ ६३ ॥

पंचाक्षरमन्त्रसे लेकर सात करोड़ महामन्त्र और अन्य करोड़ों मन्त्र शिवकैवल्यको प्रदान करनेवाले होते हैं ॥ ६४ ॥

हे मुने! [विष्णु आदि] देवताओंके [लिये प्रतिपादित] अन्य जो मन्त्र हैं, वे सभी सुखोंको देनेवाले हैं, जो त्रिपुण्ड्र धारण करता है, उसके बशमें वे सब मन्त्र स्वतः ही हो जाते हैं ॥ ६५ ॥

त्रिपुण्ड्र धारण करनेवाला मनुष्य अपने वंश और गोत्रमें उत्पन्न हजारों पूर्वजोंका और भविष्यमें उत्पन्न होनेवाली हजारों सन्तानोंका उद्धार करता है ॥ ६६ ॥

जो त्रिपुण्ड्र धारण करता है, उसे इस लोकमें रोगरहित दीर्घ आयु प्राप्त होती है और वह सम्पूर्ण भोगोंका उपभोग करके जीवनके अनित्म समयमें सुखपूर्वक ही मृत्युको प्राप्त करता है। वह मृत्युके पश्चात् अणिमा, महिमा आदि आठों ऐश्वर्यों और सदगुणोंसे युक्त दिव्य शरीरवाले शिवको प्राप्त करता है और दिव्यलोकके देवोंसे सेवित दिव्य विमानपर चढ़कर शिवलोकको जाता है ॥ ६७-६८ ॥

वहाँपर वह सभी विद्याधरों और महापराक्रमी गन्धीवों, इन्द्रादि लोकपालोंके लोकोंमें क्रमशः जाकर बहुत-से भोगोंका उपभोग करता हुआ प्रजापतियोंके पदों तथा ब्रह्माके पदपर आसीन होकर वहाँ [दिव्यलोककी] सैकड़ों कन्याओंके साथ आनन्दित होता है ॥ ६९-७० ॥

वह उस लोकमें ब्रह्माकी आयुके बराबर आयुको प्राप्तकर अनेक सुखोंका भोग करके विष्णुलोकको जाता है और ब्रह्माके सौ वयोंतक सुखोंका भोग प्राप्त करता है। तदनन्तर वह शिवलोकको जाकर इच्छानुकूल अक्षय कामनाओंको प्राप्तकर शिवका सान्निध्य प्राप्त कर लेता है; इसमें सन्देह नहीं है ॥ ७१-७२ ॥

सभी उपनिषदोंके सारको बार-बार सम्यक् रूपसे देखकर यही निर्णय लिया गया है कि त्रिपुण्ड्र धारण करना ही परम श्रेष्ठ है ॥ ७३ ॥

जो ब्राह्मण विभूतिकी निन्दा करता है, वह ब्राह्मण नहीं है, अपितु अन्य जातिका है और विभूतिनिन्दाके कारण उसे चतुर्मुख ब्रह्माकी आयुसीमातक नरक भोगना

पढ़ता है ॥ ७४ ॥

श्राद्ध, यज्ञ, जप, होम, बलिवैश्वदेव और देवपूजनके समय जो पूतात्मा मनुष्य त्रिपुण्ड्र धारण करता है, वह मृत्युको भी जीत लेता है ॥ ७५ ॥

मलत्याग करनेपर [शुद्धिके लिये] जलस्नान किया जाता है, भस्मस्नान करनेपर सदा पवित्रता आती है, मन्त्रस्नान पापका हरण करता है और ज्ञानरूपी जलमें अवगाहन करनेपर परमपदकी प्राप्ति होती है ॥ ७६ ॥

समस्त तीर्थोंमें [स्नान करनेसे] जो पुण्य और फल प्राप्त होता है, वह फल, भस्मस्नान करनेवालेको प्राप्त हो जाता है ॥ ७७ ॥

भस्मस्नान ही परम श्रेष्ठ तीर्थ है, जो प्रतिदिन गंगा (तीर्थ)-स्नानके समान है। भस्म तो भस्मरूपी साक्षात् शिव है, जो त्रैलोक्यको पवित्र करनेवाला है ॥ ७८ ॥

बिना त्रिपुण्ड्र धारण किये हुए जो ब्राह्मण स्नान, ध्यान, दान और जप आदि अनुष्ठान कर्म करता है, वह न तो स्नान है, न ध्यान है, न दान है और न जप आदि अन्य अनुष्ठित कर्म ही है ॥ ७९ ॥

बानप्रस्थ, कन्या और दीक्षारहित मनुष्योंको मध्याह्नके पूर्व ही जलसे युक्त त्रिपुण्ड्र धारण करना चाहिये, किंतु मध्याह्नके पश्चात् जलरहित भस्मसे त्रिपुण्ड्र धारण करना ठवित है। इस प्रकार त्रिद्वापूर्वक दृढ़ निश्चयवाला जो व्यक्ति नित्य त्रिपुण्ड्र धारण करता है, उसे ही शिवभक्त जानना चाहिये। उसीको भुक्ति तथा मुक्ति भी प्राप्त होती है ॥ ८०-८१ ॥

जिसके अंगपर प्रचुर पुण्य देनेवाला एक भी रुद्राक्ष नहीं है और वह त्रिपुण्ड्रसे भी रहित है, उसका जन्म लेना व्यर्थ है ॥ ८२ ॥

[इसके पश्चात् भस्मधारण तथा त्रिपुण्ड्रकी महिमा एवं विधि बताकर सूतजीने फिर कहा—हे महर्षियो !] इस प्रकार मैंने संक्षेपसे त्रिपुण्ड्रका माहात्म्य बताया है। यह समस्त प्राणियोंके लिये गोपनीय रहस्य है। अतः आपको भी इसे गुप्त ही रखना चाहिये ॥ ८३ ॥

मुनिवरो ! ललाट आदि सभी निर्विष्ट स्थानोंमें जो भस्मसे तीन तिरछी रेखाएँ बनायी जाती हैं, उन्हींको

विद्वानोंने त्रिपुण्ड्र कहा है ॥ ८४ ॥

भौहोंके मध्य भागसे लेकर जहाँतक भौहोंका अन्त है, उतना बद्ध त्रिपुण्ड्र ललाटमें धारण करना चाहिये ॥ ८५ ॥

मध्यमा और अनामिका अँगुलीसे दो रेखाएँ करके बीचमें अंगुष्ठद्वारा प्रतिलोमभावसे की गयी रेखा त्रिपुण्ड्र कहलाती है अथवा बीचकी तीन अँगुलियोंसे भस्म लेकर यलपूर्वक भक्तिभावसे ललाटमें त्रिपुण्ड्र धारण करे। त्रिपुण्ड्र अत्यन्त उत्तम तथा भोग और मोक्षको देनेवाला है ॥ ८६-८७ ॥

त्रिपुण्ड्रकी तीनों रेखाओंमेंसे प्रत्येकके नौ-नौ देवता हैं, जो सभी अंगोंमें स्थित हैं, मैं उनका परिचय देता हूँ, सावधान होकर सुनें ॥ ८८ ॥

हे मुनिवरो ! प्रणवका प्रथम अक्षर अकार, गार्हपत्य अग्नि, पृथ्वी, धर्म, रजोगुण, ऋग्वेद, क्रियाशक्ति, प्रातःस्वन तथा महादेव—ये त्रिपुण्ड्रकी प्रथम रेखाके नौ देवता हैं, यह बात शिवदीक्षापारायण पुरुषोंको अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये ॥ ८९-९० ॥

हे मुनिश्रेष्ठो ! प्रणवका दूसरा अक्षर उकार, दक्षिणाग्नि, आकाश, सत्त्वगुण, यजुर्वेद, माध्यन्दिनस्वन, इच्छाशक्ति, अन्तरात्मा तथा महेश्वर—ये दूसरी रेखाके नौ देवता हैं—ऐसा शिवदीक्षित लोगोंको जानना चाहिये ॥ ९१-९२ ॥

हे मुनिश्रेष्ठो ! प्रणवका तीसरा अक्षर मकार, आहवनीय अग्नि, परमात्मा, तमोगुण, ह्युलोक, ज्ञानशक्ति, सामवेद, तृतीय स्वन तथा शिव—ये तीसरी रेखाके नौ देवता हैं—ऐसा शिवदीक्षित भक्तोंको जानना चाहिये ॥ ९३-९४ ॥

इस प्रकार स्थानदेवताओंको उत्तम भक्तिभावसे नित्य नमस्कार करके स्नान आदिसे शुद्ध हुआ पुरुष यदि त्रिपुण्ड्र धारण करे, तो भोग और मोक्षको भी प्राप्त कर लेता है ॥ ९५ ॥

हे मुनीश्वरो ! ये सम्पूर्ण अंगोंमें स्थान-देवता बताये गये हैं, अब उनसे सम्बन्धित स्थान बताता हूँ, भक्तिपूर्वक सुनिये ॥ ९६ ॥

बत्तीस, सोलह, आठ अथवा पाँच स्थानोंमें मनुष्य

त्रिपुण्ड्रका न्यास करे। मस्तक, ललाट, दोनों कान, दोनों नेत्र, दोनों नासिका, मुख, कण्ठ, दोनों हाथ, दोनों कोहनी, दोनों कलाई, हृदय, दोनों पाश्वभाग, नाभि, दोनों अण्डकोष, दोनों ऊरु, दोनों गुल्फ, दोनों घुटने, दोनों पिण्डली और दोनों पैर—ये बत्तीस उत्तम स्थान हैं; इनमें क्रमशः अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु, दस दिक्प्रदेश, दस दिक्पाल तथा आठ वसुओंका निवास है ॥ १७—१०० ॥

धरा (धर), धूब, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास—ये आठ वसु कहे गये हैं। इन सबका नाममात्र लेकर इनके स्थानोंमें विद्वान् पुरुष त्रिपुण्ड्र धारण करे। अथवा एकाग्रचित्त होकर सोलह स्थानोंमें ही त्रिपुण्ड्र धारण करे ॥ १०१—१०२ ॥

मस्तक, ललाट, कण्ठ, दोनों कन्धों, दोनों भुजाओं, दोनों कोहनियों तथा दोनों कलाईयोंमें, हृदयमें, नाभिमें, दोनों पसलियोंमें तथा पृष्ठभागमें त्रिपुण्ड्र लगाकर वहाँ दोनों अश्विनीकुमारों, शिव, शक्ति, रुद्र, ईश तथा नारदका और वामा आदि नौ शक्तियोंका पूजन करे। ये सब मिलकर सोलह देवता हैं। अश्विनीकुमार युगल कहे गये हैं—नासत्य और दस ॥ १०३—१०५ ॥

अथवा मस्तक, केश, दोनों कान, मुख, दोनों भुजा, हृदय, नाभि, दोनों ऊरु, दोनों जानु, दोनों पैर और पृष्ठभाग—इन सोलह स्थानोंमें सोलह त्रिपुण्ड्रका न्यास करे। मस्तकमें शिव, केशोंमें चन्द्रमा, दोनों कानोंमें रुद्र और ब्रह्मा, मुखमें विज्ञराज गणेश, दोनों भुजाओंमें विष्णु और लक्ष्मी, हृदयमें शम्भु, नाभिमें प्रजापति, दोनों

ऊरुओंमें नाग और नागकन्याएँ, दोनों घुटनोंमें ऋथिकन्याएँ, दोनों पैरोंमें समुद्र तथा विशाल पृष्ठभागमें समूर्ण तीर्थ देवतारूपसे विराजमान हैं। इस प्रकार सोलह स्थानोंका परिचय दिया गया। अब आठ स्थान बताये जा रहे हैं ॥ १०६—१०९ ॥

गुह्य स्थान, ललाट, परम उत्तम कर्णयुगल, दोनों कन्धे, हृदय और नाभि—ये आठ स्थान हैं। इनमें ब्रह्मा तथा सप्तर्षि—ये आठ देवता बताये गये हैं। हे मुनीश्वरो! भस्मके स्थानको जाननेवाले विद्वानोंने इस तरह आठ स्थानोंका परिचय दिया है। अथवा मस्तक, दोनों भुजाएँ, हृदय और नाभि—इन पाँच स्थानोंको भस्मवेता पुरुषोंने भस्म धारणके योग्य बताया है। यथासम्भव देश, काल आदिकी अपेक्षा रखते हुए उद्धलन (भस्म)-को अभिमन्त्रित करना और जलमें मिलाना आदि कार्य करे। यदि उद्धलनमें भी असमर्थ हो, तो त्रिपुण्ड्र आदि लगाये ॥ ११०—११३ ॥

त्रिनेत्रधारी, तीनों गुणोंके आधार तथा तीनों देवताओंके जनक भगवान् शिवका स्मरण करते हुए 'नमः शिवाय' कहकर ललाटमें त्रिपुण्ड्र लगाये। 'ईशाभ्यां नमः'—ऐसा कहकर दोनों पाश्वभागोंमें त्रिपुण्ड्र धारण करे। 'बीजाभ्यां नमः'—यह बोलकर दोनों प्रकोष्ठोंमें भस्म लगाये। 'पितॄभ्यां नमः' कहकर नीचेके अंगमें, 'उमेशाभ्यां नमः' कहकर ऊपरके अंगमें तथा 'भीमाय नमः' कहकर पीठमें और सिरके पिछले भागमें त्रिपुण्ड्र लगाना चाहिये ॥ ११४—११६ ॥

// इस प्रकार शिवमहापुराणके प्रथम विद्येश्वरसंहिताके साथ्यसाधनखण्डमें भस्मधारणवर्णन
नामक चौबीसवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥ २४ //

पच्चीसवाँ अध्याय

रुद्राक्षधारणकी महिमा तथा उसके विविध भेदोंका वर्णन

सूतजी बोले—हे महाप्राज्ञ! हे महामते! शिवरूप हे शौनक ऋषे! अब मैं संक्षेपसे रुद्राक्षका माहात्म्य बता रहा हूँ, सुनिये ॥ १ ॥ रुद्राक्ष शिवको बहुत ही प्रिय है। इसे परम पावन

समझना चाहिये। रुद्राक्षके दर्शनसे, स्मरणसे तथा उसपर जप करनेसे वह समस्त पापोंका अपहरण करनेवाला माना गया है ॥ २ ॥

हे मुने! पूर्वकालमें परमात्मा शिवने समस्त लोकोंका



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

उपकार करनेके लिये देवी पार्वतीके सामने रुद्राक्षकी महिमाका वर्णन किया था ॥ ३ ॥

शिवजी बोले—हे महेश्वरि! हे शिवे! मैं आपके प्रेमवश भक्तोंके हितकी कामनासे रुद्राक्षकी महिमाका वर्णन करता हूँ, सुनिये ॥ ४ ॥

हे महेश्वानि! पूर्वकालकी बात है, मैं मनको संयममें रखकर हजारों दिव्य वर्णोत्तक घोर तपस्यामें लगा रहा ॥ ५ ॥

हे परमेश्वरि! मैं सम्पूर्ण लोकोंका उपकार करनेवाला स्वतन्त्र परमेश्वर हूँ। [एक दिन सहस्रा मेरा मन क्षुब्ध हो डठा ।] अतः उस समय मैंने लीलावश ही अपने दोनों नेत्र खोले ॥ ६ ॥

नेत्र खोलते ही मेरे मनोहर नेत्रपुटोंसे कुछ जलकी बूँदें गिरीं। आँसूकी उन बूँदोंसे वहाँ रुद्राक्ष नामक वृक्ष पैदा हो गये ॥ ७ ॥

भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये वे अश्रुबिन्दु स्थावरभावको प्राप्त हो गये। वे रुद्राक्ष मैंने विष्णुभक्तोंको तथा चारों वर्णोंके लोगोंको बाँट दिये ॥ ८ ॥

भूतलपर अपने प्रिय रुद्राक्षोंको मैंने गौड़ देशमें उत्पन्न किया। मथुरा, अयोध्या, लंका, मलयाचल, सह्यागिरि, काशी तथा अन्य देशोंमें भी उनके अंकुर उगाये। वे उत्तम रुद्राक्ष असह्य पापसमूहोंका भेदन करनेवाले तथा श्रुतियोंके भी प्रेरक हैं ॥ ९-१० ॥

मेरी आज्ञासे वे रुद्राक्ष ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र जातिके भेदसे इस भूतलपर प्रकट हुए। रुद्राक्षोंको ही जातिके शुभाक्ष भी हैं ॥ ११ ॥

उन ब्राह्मणादि जातिवाले रुद्राक्षोंके वर्ण श्वेत, रक्त, पीत तथा कृष्ण जानने चाहिये। मनुष्योंको चाहिये कि वे क्रमशः वर्णके अनुसार अपनी जातिका ही रुद्राक्ष धारण करें ॥ १२ ॥

भोग और मोक्षकी इच्छा रखनेवाले चारों वर्णोंके लोगों और विशेषतः शिवभक्तोंको शिव-पार्वतीकी प्रसन्नताके लिये रुद्राक्षके फलोंको अवश्य धारण करना चाहिये ॥ १३ ॥

आँवलेके फलके बराबर जो रुद्राक्ष हो, वह श्रेष्ठ बताया गया है। जो बेरके फलके बराबर हो, उसे मध्यम

श्रेणीका कहा गया है। जो चनेके बराबर हो, उसकी गणना निम्न कोटिमें की गयी है। हे पार्वति! अब इसकी उत्तमताको परखनेकी यह दूसरी प्रक्रिया भक्तोंकी हितकामनासे बतायी जाती है। अतः आप भलीभाँत प्रेमपूर्वक इस विषयको सुनिये ॥ १४-१५ ॥

हे महेश्वरि! जो रुद्राक्ष बेरके फलके बराबर होता है, वह उतना छोटा होनेपर भी लोकमें उत्तम फल देनेवाला तथा सुख-सौभाग्यकी वृद्धि करनेवाला होता है ॥ १६ ॥

जो रुद्राक्ष आँवलेके फलके बराबर होता है, वह समस्त अरिष्टोंका विनाश करनेवाला होता है तथा जो गुंजाफलके समान बहुत छोटा होता है, वह सम्पूर्ण मनोरथों और फलोंकी सिद्धि करनेवाला होता है ॥ १७ ॥

रुद्राक्ष जैसे-जैसे छोटा होता है, वैसे-वैसे अधिक फल देनेवाला होता है। एक छोटे रुद्राक्षको विद्वानोंने एक बड़े रुद्राक्षसे दस गुना अधिक फल देनेवाला बताया है ॥ १८ ॥

पापोंका नाश करनेके लिये रुद्राक्षधारण आवश्यक बताया गया है। वह निश्चय ही सम्पूर्ण अभीष्ट मनोरथोंका साधक है, अतः उसे अवश्य ही धारण करना चाहिये ॥ १९ ॥

हे परमेश्वरि! लोकमें मंगलमय रुद्राक्ष जैसा फल देनेवाला देखा जाता है, वैसी फलदायिनी दूसरी कोई माला नहीं दिखायी देती ॥ २० ॥

हे देवि! समान आकार-प्रकारवाले, चिकने, सुट्टू, स्थूल, कण्टकयुक्त (उभरे हुए छोटे-छोटे दानोंवाले) और सुन्दर रुद्राक्ष अभिलापित पदार्थोंके दाता तथा सर्वभोग और मोक्ष देनेवाले हैं ॥ २१ ॥

जिसे कीड़ोंने दूषित कर दिया हो, जो खण्डित हो, फूटा हो, जिसमें उभरे हुए दाने न हों, जो ब्रणयुक्त हो तथा जो पूरा-पूरा गोल न हो, इन छः प्रकारके रुद्राक्षोंको त्याग देना चाहिये ॥ २२ ॥

जिस रुद्राक्षमें अपने आप ही ढोरा पिरोनेके योग्य छिद्र हो गया हो, वही यहाँ उत्तम माना गया है। जिसमें मनुष्यके प्रयत्नसे छेद किया गया हो, वह मध्यम